Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भैरवी चक्र

गुरुदत्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

167958
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भैरवी—चक्र

भैरव उपासना पर
एक ऐतिहासिक रचना।

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web.: aarshsahitya.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गुरुदत्त की वेद, श्रीमद्भगवद्गीता, दर्शन शास्त्रों व उपनिषदों पर रचनाएं

सायंस और वेद

यजुर्वेद और गृहस्थ धर्म

हमारी सांस्कृतिक धरोहर

वेद प्रवेशिका

ईश केन् कठ उपनिषद्

तैत्तिरीय उपनिषद्

प्रश्न ऐत्तरेय उपनिषद्

मुण्डक माण्डूक्य उपनिषद्

वेद मन्त्रों के देवता

वेद और वैदिक काल

वेदों में सोम

वेदों में इन्द्र

विश्वेदेवा

अद्वैत मीमांसा

विज्ञान और विज्ञान

सृष्टि रचना

सांख्य दर्शन

न्याय दर्शन

ब्रह्मसूत्र -1 वेदान्त दर्शन

ब्रह्मसूत्र -2 वेदान्त दर्शन

श्रीमद्भगवद्गीता भाष्य

श्रीमद्भगवद्गीता अध्ययन

हिन्दी साहित्य सदन

2 वी डी चैम्बर्स,10/54 डी बी गुप्ता रोड,करोल बाग पुलीस स्टेशन के पास,नई दिल्ली-05

E-mail: indiabooks@rediffmail.com Tel : 23553624, 23551344, 09213527666

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भैरवी—चक्र

गुरुदत्त

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web.: aarshsahitya.com

Central Library
167958
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar
081
167958

हिन्दी साहित्य सदन
www.hindisahityasadan.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

© ईशान दत्त

R
089.9143
GUR-B

भैरवी–चक्र

लेखक गुरुदत्त
संस्करण 2016
मूल्यः 250-
प्रकाशक **हिन्दी साहित्य सदन**
2 बी.डी. चैम्बर्स, 10/54 देशबंधु गुप्ता रोड,
करोल बाग (पुलिस स्टेशन के समीप)
नई दिल्ली–110005
वैबसाईट **www.hindisahityasadan.com**
ई–मेल hindisahityasadan@gmail.com
indiabooks@rediffmail.com
दूरभाष 23553624, 23551344, 09213527666
मुद्रक

Bhairvi-Chakra

By Gurudutt

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भूमिका

'जीवात्मा कर्म करने में स्वतन्त्र है, परन्तु किये हुए कर्म का फल मिलना भी अवश्यम्भावी है। यह ईश्वरीय नियम है।'

'जो राज्य नागरिकों के निजी जीवन को नियम में बाँधने का यत्न करते हैं, वे राज्य नहीं कहलाते। राज्य तो परमात्मा का स्वरूप होता है। जीवन को नियम में बाँधने वाले राज्य दारोगा कहे जा सकते हैं, वे परमात्मा के प्रतिनिधि नहीं हो सकते।'

इस उपन्यास का मुख्य आधार यही है। व्यक्तिगत जीवन में कर्म और उसके फल की प्राप्ति तथा सामाजिक जीवन में व्यक्ति का कर्तव्य और उसकी परिणति तथा राज्य का उसमें अपना भाग।

भारतवर्ष में, जो कभी आर्यावर्त्त कहलाता था और जिसकी दुन्दुभि विश्व में गूँजती थी, उसमें वैदिक काल से आरम्भ कर इसके अन्तिम स्वर्णकाल तक अनेक काल आते गए। वे सब परिवर्तन के प्रतीक थे। समाज और समाज के घटक मनुष्य, के जीवन में परिवर्तन प्रकृति का नियम है और यह अवश्यम्भावी है। स्थिर जीवन अवगति का कारण बन जाता है। तब प्रकृति ही उसे अवगति की ओर धकेलने के लिए बाध्य हो जाती है।

भारत के स्वर्णकाल के उपरान्त यह परिवर्तन ऐसी तीव्र गति से होने लगा कि प्रकृति भी उसको रोक नहीं पाई और वह अधोगति की ओर अग्रसर होने लगा। मानव–प्राणी उससे त्रस्त होकर छटपटाने लगा था। यह कलिकाल था। भारत के सभी प्रदेशों पर महाभारत युद्ध का दुष्परिणाम अभी तक चला आ रहा था। युवा क्षत्रियों का व्यापक अभाव हो गया था। अराजकता व्याप्त थी।

उपन्यासकार की मान्यता है कि उस अराजकता में ब्राह्मण वर्ग अपनी आजीविका न चला सकने के कारण पठन–पाठन, अध्ययन–अध्यापन का कार्य छोड़कर विभिन्न प्रकार के व्यवसायों में प्रवृत्त हो गया था। उसी प्रक्रिया में उसने मन्दिर बनवाए, उनमें विभिन्न देवी–देवताओं की प्रतिमाएँ स्थापित कीं। कालान्तर में उन मन्दिरों और मूर्तियों के भी अनेक रूप बन गए। पूजा प्रकार और पद्धति में व्यापकता के नाम पर संकीर्णता समा गई, परिणामस्वरूप समाज में विकृति व्याप गई। तब एक युग ऐसा भी आया जो मद्य, मांस और मुद्रा–मैथुन का युग कहलाया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस परिवर्तन की प्रक्रिया में आज से लगभग 2500 वर्ष पूर्व बुद्ध का जन्म हुआ। कहा जाता है कि बुद्ध ने सामाजिक विकृति से बचने का उपाय खोजने का यत्न किया। तब एक नए सम्प्रदाय का प्रचलन प्रारम्भ हुआ। कालान्तर में कदाचित् वह भी विकृत होने लगा और कुछ सौ वर्षों के उपरान्त उन दोनों विकृत परम्पराओं में परस्पर संघर्ष होने लगे। वे संघर्ष व्यक्ति और समाज तक ही सीमित न रहकर राज्यों में फैल गए। दोनों प्रकार की विचारधाराएँ स्वयं को श्रेष्ठ सिद्ध करने का यत्न करने लगीं।

देवानाम्प्रिय अशोक के राज्यकाल में बौद्ध सम्प्रदाय भारत पर छा जाने के लिए प्राणपण की बाजी लगाने लगा था। बुद्ध का तथाकथित शान्ति, अहिंसा, सद्भावना का सन्देश किसी गहन गह्वर में समा गया था। राज्य दारोगा का कार्य करने लगा था।

यह लगभग कलि संवत् 1660 के काल की घटना है। पाटलिपुत्र के सिंहासन पर अशोक विराजमान था। बौद्ध धर्म की स्थापना के नाम पर वह भारतवर्ष के विभिन्न राज्यों में एक प्रकार से सेंध लगा रहा था। कश्मीर में उस समय महाराज जलौक का राज्य था। जलौक स्वयं शैव था किन्तु उसके राज्य में सभी नागरिकों को सम्प्रदाय स्वतन्त्रता प्राप्त थी। उसका ही यह परिणाम था कि उसके राज्य में जहाँ एक ओर शैव मत अपनी दिशा में मन्थर गति से चल रहा था वहाँ उसका एक अन्य सम्प्रदाय 'भैरव' के नाम पर भैरवी–चक्र में चक्रायित हो रहा था। वैष्णवों के लिए भी उस राज्य में उतना ही स्थान था।

अपनी महत्त्वाकांक्षा की पूर्ति के लिए, कश्मीर से कन्याकुमारी तथा अटक से कटक तक के राज्य के लिए महाराज अशोक ने अपना धर्मचक्र चलाना आरम्भ किया तो सर्वप्रथम उसकी दृष्टि कश्मीर की उर्वरा भूमि की ओर गई और उसको बौद्ध सम्प्रदाय में सम्मिलित करने के लिए बौद्ध भिक्षुओं को वहाँ भेजा। मार्तण्ड का सूर्य मन्दिर और वहाँ का विशाल पुस्तकालय उस घुन के पहले शिकार बने। संयोगवश महाराज जलौक को इसका ज्ञान हुआ तो उन्होंने उसकी पुनर्प्रतिष्ठा की। किन्तु अपने राज्य में फैलने वाले बौद्धमत को रोकने के लिए उनको बहुत प्रयत्न करना पड़ा।

इस तथ्य से भारतवासी भलीभाँति परिचित हैं कि सर्वथा शान्तिप्रिय, अहिंसक, मित्रता का व्यवहार करने वाला, जीवदया का प्रणेता होने पर भी भारतवासियों ने बौद्ध सम्प्रदाय को सहर्ष स्वीकार नहीं किया। क्यों? यह एक ऐसा प्रश्न है जो आज तक भी अनुत्तरित ही है।

विगत 2500 वर्षों में संसार में अनेक परिवर्तन हुए हैं। साम्राज्य ढहे, साम्राज्य बने। प्राचीनता का लोप होता गया, नवीनता उसका स्थान लेती

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गई। शान्ति और युद्ध का संघर्ष चलता रहा। किन्तु संसार ने बौद्ध–मत को स्वीकार नहीं किया। न केवल इतना, अपितु बौद्ध सम्प्रदाय की उद्गम भूमि भारत में तो यह सर्वथा उखड़ ही गया है। विदेशों के बौद्ध यात्री भले ही बौद्ध–स्थलों की यात्रा के लिए इस देश में आते हों, किन्तु इस देश के यात्रियों तथा पर्यटकों को उनमें ऐसी कोई रुचि नहीं दिखाई देती। आज जब भारतीयों में भी पर्यटन प्रवृत्ति पनपने लगी है तो कोई–कोई इन स्थलों पर पर्यटन की दृष्टि से भले ही जाने की इच्छा करता हो, किन्तु उन्हें अपने पूर्वजों की थाती समझकर, उनके प्रति श्रद्धा–भाव रखते हुए जाने वालों की संख्या नगण्य ही है।

प्रस्तुत उपन्यास में जहाँ इस प्रश्न का समाधान खोजने का यत्न किया गया है वहाँ विदेशों में, तथा अब भारत में भी प्रचलित नाइट क्लबों के समकक्ष उस काल के भैरवी–चक्रों आदि की तुलना कर कथानक को रोचक, ज्ञानवर्धक बनाने के साथ–साथ इन चक्रों से मुक्ति का मार्ग भी उपन्यासकार ने अपनी चिरपरिचित शैली में सुझाया है।

–अशोक कौशिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रथम परिच्छेद

फ्रांस की राजधानी पेरिस में सीन नदी के दक्षिण तट पर 'रियू-हि-रिवोली' पथ पर 'होटेल डि-विले' के सामने 'होटेल डि लक्स' की तृतीय मंजिल पर कमरा नम्बर 45 में रहने वाले प्राणी दिन के दस बजे तक सोए हुए थे।

जून का महीना था। उन दिनों पेरिस में सूर्योदय प्रातः साढ़े तीन बजे हो जाता था। दिन के दस बज गए थे और उस कमरे में सोने वाले एक युवक और एक युवती बाहुपाश में बँधे हुए पलँग पर लेटे अभी तक खर्राटे ले रहे थे। युवक की नींद पहले खुली। कमरे के बाहर का बटन दबाने से कमरे में घण्टी बज रही थी। युवक हड़बड़ी में उठा और पलँग पर लेटी स्त्री को देख मुस्कराया और वस्त्र पहन दरवाजे पर देखने के लिए चला आया।

कमरे में दो भाग थे। दोनों के बीच में पर्दा लगा हुआ था। सोने का पलँग पर्दे के पीछे था और पर्दे के आगे बैठने के लिए स्थान बना हुआ था। वहाँ सोफा सेट, कुर्सियाँ और सेण्टर टेबल लगी हुई थी। कमरे का दरवाजा इसी भाग में खुलता था।

युवक ने पर्दा खींचकर सोने के कमरे को 'सिटिंग रूम' से पृथक् कर दिया। वह चाहता था कि लेटी हुई स्त्री को दरवाजे पर खड़ा व्यक्ति न देख सके। उसने दरवाजा खोला और दरवाजे के बाहर खड़े बेयरा को देखकर पूछ लिया, "क्या बात है?"

युवक देखने में हिन्दुस्तानी प्रतीत होता था, परन्तु फ्रांसीसी भाषा सरलता से बोल रहा था। बेयरा ने कहा, "हुजूर! तीसरी बार आया हूँ। पहले दो बार तो घण्टी बजा-बजाकर चला गया था। आपने द्वार नहीं खोला। मैं चाय के लिए पूछने आया था।"

युवक ने मुस्कराते हुए कहा, "भाई! रात देर से आए थे, इसलिए नींद नहीं खुली। अब जाकर चाय ले आओ।"

बेयरा गया तो दरवाजा भींचकर युवक पुनः पलँग के समीप आ युवती को जगाने लगा। उसके जागने में कुछ समय लगा। युवती के आँखें खोलने पर युवक ने कहा, "राधा! जल्दी करो। वस्त्र पहन लो। बेयरा 'बेड टी' लेकर आ रहा है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

- "एक प्याला चाय के लिए आपने बहुत मीठी नींद में विघ्न डाल दिया है।"

"शेष नींद रात को पूरी कर लेना। अब तैयार हो जाओ। आज 'ट्यूल–रीज' में म्यूजियम देखने चलना है।"

म्यूजियम का नाम सुन युवती उठी और जल्दी–जल्दी वस्त्र पहनकर तैयार हो गई। दोनों बाहर के कमरे में आए ही थे कि बेयरा एक ट्रे में दो प्याले चाय लेकर आ गया। वह ट्रे 'सेण्टर टेबल' पर रखकर बाहर चला गया। जाते हुए दरवाजा भींचकर बन्द कर गया।

युवक–युवती पति–पत्नी थे। दोनों भारत के लखनऊ नगर से आए थे। युवक भारत की प्राचीन दुर्लभ वस्तुओं को बेचने का काम करता था। वह संसार के समृद्ध नगरों में घूमता हुआ भारत की विचित्र और कठिनाई से प्राप्त होने वाली वस्तुओं का विक्रय करता था। जब कोई वस्तु किसी धनी–मानी व्यक्ति को पसन्द आ जाती तो वह उसका मुँहमाँगा मूल्य प्राप्त करता था। इस प्रकार सहज ही सहस्रों रुपये का व्यापार कर लेता था।

पिछली रात पड़ोस के कमरे वाला इनको एक नाइट क्लब में ले गया था। ये दोनों पहले कभी किसी नाइट क्लब में नहीं गए थे। इस कारण उत्सुकता से ये वहाँ पहुँचे। वहाँ अनेकानेक प्रकार के आमोद–प्रमोदों में लीन प्रातः तीन बजे होटल में लौटे थे। ये सोने की तैयारी करने लगे, परन्तु नाइट क्लब के उत्तेजनापूर्ण वातावरण का प्रभाव तब तक विद्यमान था। इस कारण सोते–सोते उन्हें चार बज गए थे।

चाय समाप्त हुई तो स्नान इत्यादि से निवृत्त हो दोनों कमरे से निकल नीचे डायनिंग हाल में चले आए। वहाँ 'लंच' की तैयारी थी और दोनों एक कोने में 'लंच' की प्रतीक्षा में एक मेज पर बैठ गए।

पत्नी, राधा पूछने लगी, "जब से नींद खुली है, मैं यह विचार कर रही हूँ कि आपसे पूछूँ कि आप रात मुझे क्लब में क्यों ले गए थे?"

युवक मदनमोहन ने अपनी पत्नी की ओर देख मुस्कराते हुए कहा, "तो क्या तुम्हें वहाँ कुछ कष्ट अनुभव-हुआ था?"

"कष्ट तो नहीं हुआ। वैसे तो सब कुछ अत्यन्त मनोरंजक ही था, परन्तु यह हिन्दुस्तानी व्यवहार से विलक्षण था।"

"हाँ, हिन्दुस्तान और पेरिस में अन्तर है। जैसा हम रात देखने गए थे, सुना है इस नगर में ऐसे तीन सौ से ऊपर क्लब हैं।"

"मुझे समीप खड़ी एक लड़की कपड़े उतार 'पूल' में तैरने का निमन्त्रण दे रही थी। मैंने बहाना बना दिया कि मुझे तैरना नहीं आता। उसने मुझे कहा था कि वह मुझको सिखा देगी। मैंने मुस्कराकर कह दिया, 'यदि डूब गई तो?'

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"फिर उसने कहा, 'तब तो 'इंटर्नल पीस' (परम शान्ति) प्राप्त हो जाएगी।'

"इतना कह वह 'क्लोजिट' में गई और वस्त्र उतार आ गई और मेरी ओर मुस्कराते हुए देख 'पूल' में कूद पड़ी। उसने 'पूल' में तैरते हुए कई स्त्री–पुरुषों से तो आलिंगन किया, कइयों का मुख चूमा और जब कोई उसको पकड़ने दौड़ता तो वह डुबकी लगा किसी दूसरे के पास जा पहुँचती।"

" 'पूल' के बगल वाले कमरे में जो हो रहा था, वह भी देखा था?"

"जी। हम समझे थे कि वहाँ रेस्टोराँ है। विचार किया था कि एक–एक प्याला कॉफी लेंगे। परन्तु ज्यों ही उस कमरे को खोला तो पता चला कि एक ही कमरे से कई 'बेडरूमों' का काम लिया जा रहा है।

"बस उसे देख ही तो लौट पड़े थे। वहाँ वैसे ही कई अन्य कमरे बताए जाते हैं। ये सरलचित्त लोग वहाँ परम शान्ति प्राप्त कर रहे अनुभव करते थे।"

मदनमोहन ने मुस्कराते हुए पूछा, "तो क्या यह भला प्रतीत नहीं होता था?"

"कुछ अटपटा–सा लगता था।"

इस समय बेयरा दो व्यक्तियों के लिए 'लंच' ले आया और वे खाने लगे। खाने के उपरान्त वे म्यूजियम देखने चले गए। 'ट्यूलरीज' के बाहर कई 'बुक स्टाल' थे। एक 'बुक स्टाल' पर लिखा था– भारतीय भाषाओं में नवीन पुस्तकें।

राधा की दृष्टि उस पर जब गई तो वह पति को लेकर उस 'बुक स्टाल' पर जा पहुँची। पुस्तक–विक्रेता ने एक हिन्दुस्तानी दम्पति को आते हुए देखा तो इनको हिन्दुस्तानी पुस्तकों के रैक के सामने ले गया। उसमें पाकिस्तानी और भारत दोनों देशों में प्रकाशित उपन्यास इत्यादि थे। राधा की रुचि उपन्यास पढ़ने में थी और जब से वे भारत से आए थे, उसे कोई हिन्दी की पुस्तक पढ़ने के लिए नहीं मिली थी। इस कारण वह रुचिपूर्वक हिन्दी के उपन्यास देखने लगी। उसने चार–पाँच पुस्तकें चुन लीं और उनका मूल्य काउण्टर पर रख दिया। पुस्तकें ले पति–पत्नी म्यूजियम देखने चले गए। चार घण्टे देखने के उपरान्त भी वे पूर्ण म्यूजियम नहीं देख सके थे। राधा की इच्छा अभी और देखने की थी, परन्तु मदनमोहन ने कह दिया, "मैं तो अब चाय पीने चलूँगा।"

विवश राधा भी पति के साथ म्यूजियम से बाहर आ उसी भवन के एक कोने में एक रेस्टोराँ में चाय पीने चल पड़ी। रेस्टोराँ से वह 'सीन' नदी के तट के साथ–साथ बनी सड़क पर टहलने के लिए चले गए। एक घण्टा भ्रमण कर वे होटल में लौट आए। रविवार का दिन था और उस दिन मदनमोहन अपने व्यावसायिक काम से छुट्टी पर था। सायंकाल होटल के कमरे में बैठे

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हुए पुनः नाइट क्लब की बातें होने लगीं। मदनमोहन ने राधा को उस लड़की के विषय में स्मरण कराया जिसको कितने ही युवक घेरे खड़े थे और अपने साथ नाच करने का निमन्त्रण दे रहे थे। वह युवती अपने साथ नाच करने का मूल्य माँग रही थी और एक युवक ने उसके साथ बैठकर 'शैम्पेन' पीने का प्रस्ताव किया तो वह उसके साथ नाचने 'डांसिंग हॉल' में चली गई। दूसरे युवक निराश हो इधर–उधर किसी अन्य युवती की खोज करने लगे थे।

राधा ने कहा, ''यह सब इतना उत्तेजक था कि पागलपन सिर पर सवार होता अनुभव हो रहा था।''

''और वह पागलपन क्या करने को कहता था?''

''जो इस समय कहने में भी लज्जा लगती है।''

''ठीक है। वह लज्जा 'बेडरूम' के बाहर ही रह जानी चाहिए और जब हम पुनः प्रातः बाहर आएँ तो वह फिर गले का हार बन जानी चाहिए।''

राधा ने कुछ विचार करते हुए गम्भीर भाव में कहा, ''मैं समझती हूँ कि यह ठीक ही है। लज्जा का भाव गले का हार बना रहना चाहिए, अन्यथा मुझे भय है कि राधा का पति पेरिस के क्लबों में खो जाएगा।''

''और इस लज्जा के आवरण के बिना राधा कहाँ जाएगी?''

''राधा के लिए तो मदनमोहन के अतिरिक्त और कौन हो सकता है? यह तो विख्यात ही है कि राधा बावरी मोहन के पीछे पागल हुई घूमती थी और वह अब भी घूम रही है।''

एकाएक राधा को स्टाल से खरीदी हुई पुस्तकों का स्मरण हो आया। कमरे में आने पर वे पुस्तकें 'साइड टेबल' पर रख दी गई थीं। अतः बातें करते–करते वह एकाएक उठी और 'टेबल' पर से पुस्तकें उठा लाई। मदनमोहन को भी कुछ काम स्मरण आ गया और वह अपने ब्रीफकेस में से कुछ कागज और कलम निकाल लिखने लगा। दोनों अपने–अपने कार्य में लीन हो गए। साढ़े आठ बजे मदनमोहन को भूख लगी तो वह अपनी पत्नी से पूछने लगा, ''राधा! भोजन नहीं करना?''

राधा एक पुस्तक पढ़ रही थी। उसका ध्यान भंग हुआ तो सिर उठा पूछने लगी, ''क्या कहा है आपने?''

''मैंने कहा है कि भोजन करने का समय हो गया है।''

राधा ने कुछ विचारकर कहा, ''भूख तो लगी है, परन्तु यह पुस्तक बहुत मजेदार है। इसे छोड़ने को चित्त नहीं करता।''

''कौन–सी पुस्तक है?''

''एक उपन्यास है। परन्तु अब चलिए। खाना खा लें। आकर पढूँगी। दोनों उठ पड़े और कमरे से निकल 'डायनिंग हॉल' की ओर चल दिए। 'डायनिंग

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
हॉल' में वही पड़ोस के कमरे वाला व्यक्ति जो उनको पिछली रात क्लब में ले गया था, उनके पास आकर पूछने लगा, "तो आज भी चलिएगा?"

मदनमोहन ने प्रश्न–भरी दृष्टि में राधा की ओर देखा। राधा को पिछली रात 'नाइट क्लब' में देखे दृश्यों का स्मरण आया तो लाल मुख हो बोली, "जी नहीं। आज तो हमारा क्लब अपने 'बेडरूम' में लगेगा।"

पड़ोसी हँस पड़ा और उठकर अपनी मेज पर चला गया। वहाँ एक अन्य स्त्री उसकी प्रतीक्षा कर रही थी। राधा ने कहा, "कल रात तो इसके साथ कोई दूसरी स्त्री थी।"

"हाँ!" मदनमोहन ने कहा, "ऐसा मालूम होता है कि यह व्यक्ति नित्य नई स्त्री भाड़े पर लेकर 'क्लब' जाता है।"

"इसको ये कहाँ से मिल जाती हैं?"

"इस नगर में ऐसी बहुत स्त्रियाँ हैं जो रात का खाना और शराब की एक बोतल के लिए अपने साथी का मनोरंजन करने के लिए तैयार हो जाती हैं।"

राधा ने मुस्कराते हुए कहा, "मैं तो आज सोऊँगी। नाइट क्लब का शौक एक दिन में ही उतर गया है।"

खाने के उपरान्त मदनमोहन उत्सुकता से अपने कमरे की ओर चल पड़ा। वह रात में राधा की संगत की कल्पना कर चित्त में गुदगुदी अनुभव कर रहा था। परन्तु जब दोनों कमरे में पहुँचे तो राधा ने कहा, "आप सोने की तैयारी करिए। मैं दो–चार पृष्ठ पुस्तक के पढ़कर आती हूँ।"

वह पुस्तक उठा सोफे पर बैठ पढ़ने लगी तो भूल गई कि सोने के कमरे में कोई उसकी प्रतीक्षा कर रहा है। मदनमोहन कुछ देर प्रतीक्षा करता रहा और फिर सो गया। राधा 'सिटिंग रूम' में बैठी उपन्यास पढ़ने में भूल गई कि रात कितनी बीत गई है। उपन्यास था 'भैरवीचक्र'। जो कुछ वह क्लब में पिछली रात देखकर आई थी, उसका एक प्राचीन रूप उस पुस्तक में वर्णन किया गया था। जब वह पढ़ती–पढ़ती थक गई तो उसने कलाई पर बँधी घड़ी में समय देखा। रात के ढाई बजे थे। अकस्मात् उसके मुख से निकल गया, "ओह! आज भी जागरण हुआ।" अब उसे स्मरण आया कि उसने पति को प्रतीक्षा करने के लिए कहा था। सोने के कमरे में पति को गहरी नीद में सोए देख वह मुस्कराई और चुपचाप कपड़े बदल बिस्तर में घुस गई।

: 2 :

सोने से पूर्व राधा उपन्यास में पढ़ रही थी–

नाग सरोवर के उत्तरी तट पर बसे हुए नाग लोगों की बस्ती में एक भव्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
मन्दिर बना हुआ था। मन्दिर का पुजारी भूरिश्रवा मन्दिर में द्वार के समीप खड़ा भैरव की मूर्ति के दर्शनार्थ आने वाले दर्शकों को मूर्ति पर चढ़ाने के लिए पुष्प दे रहा था। दर्शक अर्थात् उपासक दोनों हाथों की अंजली बनाए पुष्प ले मन्दिर में जा रहे थे। आने वालों का ताँता बँधा हुआ था। पुजारी मुख में बुड़बुड़ाता हुआ स्तोत्र पढ़ रहा था और टोकरी में से पुष्प निकाल बाँटता जाता था। दर्शक भीतर जा मूर्ति के सम्मुख पुष्प और भेंटस्वरूप पैसे चढ़ा मन्दिर के दूसरे द्वार से बाहर निकलते जा रहे थे।

पुजारी, वैसे तो, मूर्ति के दर्शनार्थ आने वाले प्रायः सब लोगों को जानता था। फिर भी किसी–किसी से वह विशेष एक–आध शब्द भी कह देता था। इन विशेष दर्शकों में एक लड़की आई तो भूरिश्रवा की आँखों में चमक दौड़ गई। उसके मुख पर मुस्कराहट आ गई। लड़की की फैलाई अंजली में पुष्प रखते हुए भूरिश्रवा ने कहा, "नीला! प्रसन्न हो?"

"महाप्रभु शिव की कृपा है।"

पुजारी ने कहा, "जीती रहो।"

लड़की मुस्कराई और भीतर चली गई।

इसी प्रकार आने वालों में एक विशिष्ट व्यक्ति भी आया। वह अश्व पर सवार होकर आया था। वह अश्व को मन्दिर के बाहर छोड़ लम्बे डग भरता हुआ मन्दिर में जाने लगा तो पुजारी ने फूल देते हुए आशीर्वाद दिया, "महाराज देव की जय हो।"

यह आगन्तुक कश्मीर देश का अधिपति महाराजाधिराज जलौक था। वह शिव का उपासक था। श्रीनगर राजधानी से नित्य पाँच कोस की यात्रा करके वह इस मन्दिर में पुष्पादि अर्पण करने आया करता था। वास्तव में भूरिश्रवा महाराज की प्रतीक्षा में ही अभी तक मन्दिर में खड़ा था। महाराज के पुष्प लेकर भीतर जाने पर वह भी पुष्पों की टोकरी को एक ओर रख उसके पीछे चल पड़ा। वहाँ भैरव की मूर्ति के सम्मुख पुष्प और एक स्वर्णमुद्रा चढ़ा महाराज जलौक मन्दिर से बाहर निकलने लगे तो एक पग पीछे आते हुए भूरिश्रवा ने कहा, "महाराज! कल शिवरात्रि है। मन्दिर में पूजा का विशेष समारोह होगा। यदि आप पधारें तो उपासकगण अपने को कृत–कृत्य मानेंगे।"

"पण्डितवर! हम कम्बोज के म्लेच्छों के विरुद्ध समर पर जा रहे हैं। सीमा पर से समाचार आ रहे हैं कि म्लेच्छराज नरकण्ट विशाल सेना के साथ देश में घुस आया है और सीमावर्ती नगरों तथा ग्रामों में लूट–मार मचा रहा है। हमें अपनी प्रजा के कष्ट का निवारण करने के लिए शीघ्रातिशीघ्र सेना के साथ कम्बोज की ओर प्रस्थान करना है। हम कल वाले उत्सव में नहीं आ सकेंगे। हमारे लिए भगवान् भैरव से प्रार्थना करना जिससे हम इस नरकण्ट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
को यमलोक भेज उसके देश पर अपना आधिपत्य स्थापित कर सकें।''

''महाराज! कब तक समर के लिए प्रस्थान होने वाला है?''

''सेना भेजी जा चुकी है और हम कल प्रातःकाल श्रीनगर से चल देंगे।''

''तो महाराज! हम दुर्गा को कल वाले पूजन में ला सकें और पूजन में वह भवानी का स्थानापन्न बन सके, इसकी स्वीकृति देते जाइए।''

जलौक चलता–चलता ठहर गया। वह मन्दिर के द्वार से निकल अपने अश्व की ओर जा रहा था। महाराज ने प्रश्न–भरी दृष्टि से पुजारी की ओर देखा। पुजारी ने मुस्कराते हुए कहा, ''महाराज! पूजा के लिए द्वादश–वर्षीय कन्या की आवश्यकता रहती है और राजकुमारी दुर्गा इस आयु की हो गई है। भगवान् ने उसे केवल दुर्गा का नाम ही नहीं दिया, वरन् उसे दुर्गा के सब गुणों से विभूषित भी किया है। वह परम सुन्दरी और भवानी दुर्गा के अन्य लक्षणों से युक्त उपासना के सर्वथा योग्य है।''

महाराज जलौक ने चिन्ता व्यक्त करते हुए कहा, ''पूजा का कार्यक्रम स्मरण कर दुर्गा के लिए चिन्ता अनुभव होती है।''

''महाराज! इस अवस्था में कन्या के लिए चिन्ता का स्थान नहीं है। वह तो माता भगवती की भाँति पूजित होगी।''

''ठीक है।'' महाराज का उत्तर था, ''हम उसे कहते जाएँगे। कल पूजा से पहले उसे रथ में बिठाकर ले आना और पूजा के उपरान्त उसे राज–प्रासाद में छोड़ आना। हमारे और देश के लिए भगवान् से प्रार्थना करना।''

यह काल कलि संवत् 1660 था। महाभारत युद्ध का प्रभाव भारत के प्रायः सब देशों पर अभी तक चला आ रहा था। युद्धोपरान्त तो युवा क्षत्रियों का व्यापक अभाव हो गया था। प्रायः सब देशों के राजपरिवार बालकों से चलाए गए थे और व्यापक रूप में अराजकता फैल चुकी थी। उस अराजकता में ब्राह्मण वर्ग जीविका न चला सकने के कारण अपना पठन–पाठन का कार्य छोड़ अनेकानेक व्यवसायों में लग गया था। अधिकांश ब्राह्मणों ने कृषि का व्यवसाय स्वीकार किया था। यह बात कई पीढ़ियों तक चलती रही। देश में अव्यवस्था फैलती गई और विद्वत्ता लोप होती गई। परिणाम यह हुआ कि व्यवसाय के लिए ब्राह्मणों ने मन्दिर बनवाए और उनमें देवों के देव महादेव की मूर्तियाँ स्थापित कर दीं। मूर्तियों के कई रूप बन गए। भैरव शिव का एक रूप था, और यह प्रचलित किया गया कि शिव का यह रूप मद्य, मांस और मीन आदि के प्रयोग और संसार के सर्वोत्कृष्ट आनन्द पुरुष–स्त्री प्रसंग के प्रचार के लिए अवतरित हुआ था।

इस प्रकार का पूजन पुजारियों के लिए बहुत अच्छा व्यवसाय बन गया और वे शास्त्रों के पठन–पाठन के कष्ट से मुक्ति पा धन–सम्पदा के भागी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन गए।

भैरव के मन्दिरों में प्रतिमास कृष्णपक्ष की चतुर्दशी की रात को भैरव का पूजन होता था। वहाँ बारहवर्षीय कुमारी की दुर्गा के रूप में स्थापना की जाती थी। एक नग्न कुमारी का पूजन होता था और पूजन के उपरान्त मद्य, मांस इत्यादि का पान कर आमोद–प्रमोद और भक्त–भक्तनियों में निर्बाध यौन–क्रीड़ा होने लगती थी। महाशिवरात्रि की रात को तो यह उत्सव और भी अधिक विस्तार पा जाता था। यह माना जाता था कि स्त्री–पुरुष के प्रसंग में जो आनन्द प्राप्त होता है, वही मोक्षावस्था है और शिवरात्रि के पर्व में जिसको यह प्राप्त हो जाए उसके लिए मोक्ष का द्वार सदैव के लिए खुल जाता है।

कश्मीराधिपति जलौक बाल्यकाल से ही भैरव का उपासक था। सोलह वर्ष की आयु में अपने पिता देवानन्द के जीवन–काल में ही भैरव की उपासनाओं में सम्मिलित होने लगा था। उगते यौवन–काल में ही भैरवीचक्र के कार्यक्रम में भाग लेते हुए उसका स्वास्थ्य बिगड़ने लगा। जलौक को जब एक बार मद्यपान और स्त्री–प्रसंग की चसक लगी तो वह भैरव–उपासनाओं से बाहर भी मनोरंजन के लिए इधर–उधर भागने लगा। इस विलासिता में जब स्वास्थ्य बिगड़ने लगा तो पिता ने उसे कौशाम्बी के महान् विद्वान् आचार्य विद्यानिधि के पास भेज दिया। साथ ही आचार्य को जलौक के व्यसन की सूचना दे दी। विद्यानिधि ने जलौक को समझाया और उसे अपनी कामनाओं पर नियन्त्रण रखने का उपाय बताया। पाँच वर्ष की घोर तपस्या और योग–क्रियाओं के अभ्यास से जलौक स्वस्थ शरीर और मन वाला होकर कश्मीर की राजधानी श्रीनगर में लौट आया। उसी समय उसके पिता का देहान्त हुआ था, इसलिए वहाँ पहुँचते ही उसे राज्य–भार का वहन करना पड़ा।

जलौक की अनुपस्थिति में ही भूरिश्रवा श्रीनगर में आया था। वह मिथिला देश का रहने वाला था और जलौक के पिता महाराज देवानन्द से मिलकर नाग सरोवर के उत्तरी तट पर एक विशाल भैरव मन्दिर बनवाने में सफल हो गया था। जलौक के लौटने से पूर्व भूरिश्रवा की ख्याति कश्मीर के बहुत–से क्षेत्रों में फैल चुकी थी।

भूरिश्रवा मैथिली पण्डित के नाम से विख्यात हो रहा था। भैरव की उपासना के अतिरिक्त वह एक कुशल वैद्य और रसायन विद्या का महापण्डित भी था। वह सुसंस्कृत पारद से स्वर्ण बनाने में सिद्धहस्त था।

उसका एक संकल्प था। वह यह कि वह पारद और उससे निर्मित स्वर्ण अपने निजी प्रयोग में नहीं लाता था। यह सब धन वह मन्दिर के कार्य में ही प्रयोग करता था। इससे मन्दिर और उपासकों को लाभ पहुँचता था। यही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण था कि भैरव–मन्दिर और भैरव–पूजा, दोनों ही दिन दूनी और रात चौगुनी उन्नति कर रहे थे। भूरिश्रवा का अपना निर्वाह उसके चिकित्सा–कार्य और ज्योतिष–कार्य से चलता था। भूत और भविष्य के विषय में उसके कथन चमत्कारिक होते थे।

श्रीनगर कश्मीर की राजधानी में लौटने पर जलौक ने भूरिश्रवा की ख्याति सुनी तो उसे बुलवा लिया। जलौक का राज्याभिषेक हुए अभी कुछ ही दिन हुए थे कि मैथिल पण्डित से प्रथम भेंट हो गई।

यथायोग्य आशीर्वाद देने के उपरान्त भूरिश्रवा मैथिल ने पूछा, "महाराज, मुझे किसलिए बुलाया है?"

"मैं कई वर्ष के उपरान्त राजधानी में आया हूँ। यहाँ आकर आपके पाण्डित्य की सूचना मिली है। इस कारण आपके दर्शन करने की इच्छा होने लगी थी। आज मैं अपने लिए अपने भावी जीवन का कार्यक्रम बनाना चाहता हूँ। मैंने सुना है कि आप एक महान् भविष्यवक्ता हैं, अतः आपको स्मरण किया है। आप बताएँ कि मेरे भविष्य में क्या करना लिखा है?"

भूरिश्रवा मुस्कराया और बोला, "महाराज, राजा के लिए प्रथम कार्य अति सुन्दर कन्या से विवाह कर उसे महारानी के पद पर स्थापित करना है।"

"भगवन्! यह तो होगा ही। मैं अपना एक उत्तराधिकारी निर्माण करना प्रथम कार्य मानता हूँ, परन्तु इसके अतिरिक्त मुझे किस प्रकार अपने नाम को देश के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लिखने योग्य बनाना होगा?"

"श्रीमन्! सन्तान–उत्पत्ति के उपरान्त धन–अर्जन करना दूसरा कार्य है। इसके लिए मेरा आग्रह है कि राज्य–भर में शिव मन्दिरों की स्थापना होनी चाहिए। एक सहस्र एक सौ एक शिव मन्दिर राज्य–भर में बन जाने चाहिए। प्रतिदिन मन्दिरों में घण्टे–घड़ियालों से पूजा–कीर्तन होने लगे तो महाराज के लिए अनायास ही स्वर्ग के द्वार खुल जाएँगे और देश धन–धान्य से सम्पन्न होगा।"

"इसके लिए तो अपार धन की आवश्यकता होगी। मैं देख रहा हूँ कि राज्य पर नास्तिक अशोक के आक्रमणों के कारण और कम्बोज और कैलास राज्यों के विद्रोह के कारण राज्यकोष रिक्तप्राय हो चुका है।"

"महाराज! आप भगवान् के मन्दिर बनवाइए। धन का अभाव नहीं रहेगा। भगवान् की कृपा से मैं स्वर्ण के पहाड़ खड़े कर दूँगा।"

"कैसे खड़े कर दोगे पहाड़?"

"आप भगवान् के नाम हुण्डी लिखकर भेज दीजिए। भुगतान भगवान् कर देगा।"

जलौक पण्डित का अभिप्राय समझने के लिए उसका मुख देखता रह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया। भूरिश्रवा ने मुस्कराते हुए पूछ लिया, "नहीं समझे, महाराज?"

"नहीं, भगवान् की हुण्डी कहाँ भेजूँ? उसका कोष कहाँ है?"

"आप परीक्षा करके देखिए। अभी एक लाख स्वर्ण की हुण्डी लिखिए और स्वर्ण लादकर लाने के लिए कल अपना छकड़ा भगवान् के मन्दिर में भेज दीजिए।"

जलौक आँखें फाड़–फाड़कर पण्डित की ओर देख रहा था। पण्डित मुस्करा रहा था। जलौक को हँसी सूझी। उसने तुरन्त अपने सेवक को बुलाकर उससे कागज, लेखनी और मसि–पात्र मँगवाए और कागज पर लिख दिया :

"देवों के देव भगवान् महादेव के चरणों में कश्मीर–नरेश की चरणवन्दना पहुँचे।

"पिछले दस वर्ष के नास्तिकों द्वारा चलाए युद्धों के कारण, राज्यकोष रिक्तप्राय हो गया है और राज्यकार्य चलाना भी कठिन हो रहा है।

"अतः अपने भक्त की सहायता के लिए अभी एक लाख स्वर्ण मुद्राएँ भेजने की कृपा कर दें। कश्मीर की पूर्ण जनता सदा के लिए कृतज्ञ रहेगी और अनन्त काल तक आपका गुणानुवाद गाती रहेगी।

–विनीत

जलौक, कश्मीर नरेश

श्रीनगर।"

यह हुण्डी लिख जलौक ने पण्डित के हाथ में दे दी। भूरिश्रवा ने इसे पढ़ा और मुस्कराते हुए कहा, "महाराज! आपको तो हुण्डी लिखने का भी ढंग नहीं आता। यदि आप अपने अर्थमन्त्री से कहते तो वह उचित ढंग से लिख देता। यह तो प्रार्थना–पत्र है और हुण्डी आदेश होता है।"

"परन्तु पण्डितवर! भगवान् को भक्त कैसे आदेश दे सकता है?"

"हाँ, महाराज! आदेश ही होना चाहिए। भगवान् तो भक्तों के वश में ही रहते हैं।"

"यह भगवान् का अधिकार है कि वह इसे आदेश माने अथवा प्रार्थना। मैं तो इस प्रकार ही लिख सकता हूँ।"

"तो महाराज! कल प्रातःकाल इतना बोझा उठा सकने वाला छकड़ा भेज दीजिएगा। भगवान् इस प्रार्थना को भी आदेश मान लेगा।"

"यदि यह हो जाए तो पूर्ण राज्य में मन्दिर ही मन्दिर बन जाएँगे।"

"तब महाराज, तीसरा कार्य यह है कि राज्य को विस्तार देना चाहिए। जो राज्य फैलता नहीं, वह सिकुड़ने लगता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"परन्तु इसके लिए तो धन के साथ जन भी चाहिए।"

"जन तो आपके राज्य में बहुत हैं। हाँ, धन का अभाव है। वह भी अब नहीं रहेगा।"

"परन्तु पण्डितवर! आपने प्रजा के प्रति कुछ करने को नहीं कहा?"

"महाराज! उनके लिए ही तो मन्दिर बनवाने के लिए कह रहा हूँ।"

"इससे क्या उनकी निर्धनता दूर होगी?"

"निस्सन्देह। महीने में एक बार की उपासना में सम्मिलित होने वाला महीने के शेष दिन परिश्रम से मेहनत–मजदूरी करेगा और भगवान् उसके परिश्रम को शत गुणा फलीभूत करेगा।"

"इसी में सन्देह है।" जलौक को पाँच–छः वर्ष पूर्व की अपनी अवस्था स्मरण हो आई थी।

"भगवान् के कामों में युक्ति और सन्देह से कार्य नहीं चलता। श्रद्धा और विश्वास से ही भगवान् प्रसन्न होते हैं।"

महाराज ने बात समाप्त करते हुए कह दिया, "तो भगवन्! करिए। और फिर जो कुछ भी यह सेवक प्रजा के लिए कर सकता है, करेगा।"

"अच्छी बात है, महाराज। आप भगवान् के मन्दिर बनवाइए और भगवान् का सेवक आपकी प्रत्येक प्रकार से सहायता करेगा।"

इस बात को आज तेरह वर्ष व्यतीत हो चुके थे। इन तेरह वर्षों में पूर्ण कश्मीर राज्य में भगवान् शिव के विभिन्न रूपों के मन्दिर बनाए जा चुके थे और उन मन्दिरों में घण्टे, घड़ियाल, पूजा, कीर्तन और उत्सव होते हुए दस वर्ष से अधिक व्यतीत हो चुके थे। कश्मीर की पूर्ण जनता भक्ति–भाव से ओत–प्रोत हो कण्ठी–रुद्राक्ष मालाओं से विभूषित हो चुकी थी। दिन–रात पूजा–पाठ और कीर्तन होता था। जनता पर कर न्यूनातिन्यून था। फिर भी जनता की आय बढ़ जाने से राज्य घाटे में नहीं था। भूरिश्रवा ने अपने लिए भैरव मन्दिर बनवा रखा था और प्रति मास भैरवीचक्र का उसमें आयोजन होता था। महाशिवरात्रि की रात को यह आयोजन भूरिश्रवा के मन्दिर में अत्यन्त उल्लास के साथ मनाया जाता था। देश के अन्य भैरव–मन्दिरों में भी भैरवीचक्र चलने लगे थे।

इस भक्ति–भावना और आमोद–प्रमोद में लीन पूर्ण जनता का समाचार पड़ोसी राज्य कम्बोज के राजा नरकण्ट को मिला तो उसके मुख से लार टपकने लगी। समाचार देने वाले ने बताया, "नित्यप्रति प्रातःकाल एक छकड़ा–भर रांगा मन्दिर में जातां है और सायंकाल वह छकड़ा स्वर्ण से लदा हुआ राजमहल में आता है। उस स्वर्ण के बल पर कश्मीर राज्य के राजा और जनता मंगलमय जीवन व्यतीत करते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा नरकण्ट ने सुनते ही पूर्ण कश्मीर राज्य को लूट लेने के लिए एक लक्ष सैनिक भेज दिए। म्लेच्छराज नरकण्ट के सैनिकों ने लूट–मार आरम्भ की तो जलौक ने समर की तैयारी कर दी। सेना सीमा पर भेज दी गई और महाराज स्वयं शिवरात्रि से प्रथम दिन चतुर्दशी की प्रातः को सेना का नेतृत्व करने के लिए चल पड़े। जाने से पूर्व त्रयोदशी के दिन जलौक भूरिश्रवा के मन्दिर में भैरव–उपासना के लिए गया था और वहाँ पण्डित ने पूजा के लिए राजकुमारी दुर्गा को माँगा तो महाराज इन्कार नहीं कर सका। वह अनुभव करता था कि इस पण्डित का दिया हुआ ही तो सबकुछ है। राज्य की वर्तमान सम्पन्नावस्था तो पण्डित के कारण ही थी।

: 3 :

राजधानी में महाराज के समर पर जाने की धूम थी। लोग महाराज के राज्य की रक्षा के लिए युद्धक्षेत्र में स्वयं जाने की भूरि–भूरि प्रशंसा कर रहे थे। जब महाराज जलौक भैरव–मन्दिर से वापस आए तो महल के बाहर नागरिकों की एक बहुत बड़ी भीड़ एकत्रित हो रही थी। महाराज अश्व से उतरे तो लोगों ने महाराज की जय–जयकार का घोष कर दिया। महाराज ने हाथ खड़ा कर जनता को आश्वासन देते हुए कहा, "मैं कल कम्बोज के आक्रमण को निःशेष करने के लिए रणभूमि में जा रहा हूँ। भगवान् भैरव की कृपा से इस बार मैं या तो कम्बोज़ के राजा को बन्दी बनाकर श्रीनगर में ले आऊँगा, अन्यथा उसका काम तमाम कर विजय प्राप्त करूँगा। यह तीसरा आक्रमण है जो इस मूर्ख राजा ने हमारे देश पर किया है। पहले दोनों आक्रमणों में हमने उसे पराजित कर छोड़ दिया था। इस बार मैंने निश्चय किया है कि उसे इस दुष्टता के लिए क्षमा नहीं किया जाएगा। आप लोग शान्ति से अपना कार्य करते जाइए। किसी प्रकार की चिन्ता की आवश्यकता नहीं है। भगवान् भैरव की हम पर कृपा है और भैरव के भक्त सदैव विजयी होते हैं।"

महाराज के इस उत्साहवर्धक वक्तव्य पर एकत्रित हुए लोगों ने महाराज का और कश्मीर राज्य का जयनाद कर दिया। महाराज जलौक महल में गए तो लोग जयघोष करते हुए घरों की ओर चल पड़े।

महल के बाहर महाराज के जयकारों का नाद अन्तःपुर तक पहुँचा था। महारानी कादम्बिनी इस नाद को सुन–समझ रही थी कि महाराज पूजा से वापस आ गए हैं और वहाँ से लौटकर वह सीधा उसके आगारों में आ रहे हैं। इस कारण वह उस कक्ष के द्वार पर आ खड़ी हुई जिधर उसके आगार थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कादम्बिनी जलौक की दूसरी पत्नी थी। पहली पत्नी एक सन्तान छोड़कर स्वर्गवासी हो गई थी। कादम्बिनी के भी एक सन्तान थी। दुर्गा पहली पत्नी की लड़की थी। कादम्बिनी के विवाह के समय वह दो वर्ष की थी। कादम्बिनी का लड़का था। नाम था दामोदर। दामोदर की आयु इस समय नौ वर्ष की थी। कादम्बिनी नागकन्या थी और महाराज से उसका विवाह भूरिश्रवा के प्रयत्न का फल था।

आज से दस वर्ष पूर्व जब दुर्गा की माँ महेश्वरी का देहान्त हुआ था तो भूरिश्रवा शोक प्रकट करने के लिए राजमहल में आया था। औपचारिक शोक प्रकट करने के उपरान्त पण्डित ने महाराज को सुझाव दिया था कि उन्हें पुनः विवाह कर लेना चाहिए। महाराज ने कहा था, "दुर्गा की माँ महेश्वरी से कोई सुन्दर स्त्री मिलेगी तो करूँगा, अन्यथा बिना विवाह के ही जीवन व्यतीत कर दूँगा।"

पण्डित का कहना था, "महारानी महेश्वरी बहुत सुन्दर थीं, यह मैं जानता हूँ। मैंने उनके दर्शन किए हैं, परन्तु महाराज! परमात्मा के घर में एक–से–एक बढ़िया वस्तु उपस्थित है और महेश्वरी जी से इक्कीस मिल जाए तो यह असम्भव नहीं।"

R 089.9143
GUR-S

"तो ऐसी कोई तुम्हारी दृष्टि में है?"

"आज्ञा हो तो भेंट करा सकता हूँ।"

"कब और कहाँ?"

"महाराज! कल प्रातः के पूजन के समय मन्दिर में पधारिए। वहाँ एक कन्या के दर्शन करा सकता हूँ।"

"वह किसकी सन्तान है?"

"भगवान् की।"

"क्या मतलब?"

Central Library
167958
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

"मेरा आशय है कि वह सामान्य नागकन्या है, परन्तु सर्वगुणसम्पन्न है। मन, बुद्धि और शरीर तीनों अति सुन्दर और सक्रिय हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि भगवान् ने उसे हमारे गाँव में उत्पन्न ही इस कारण किया था कि वह आपकी जीवन–संगिनी बन सके। महाराज! मैं समझता हूँ कि राज्यप्रासाद में पूर्णिमा का चाँद उदय हो जाएगा, जो अपनी मधुर, शीतल चन्द्रिका से न केवल राज्यप्रासाद को, वरंच पूर्ण राज्य को प्रकाशित कर देगा।"

जलौक ने अगले दिन समय पर पूजा के लिए भैरव मन्दिर में पहुँचने का वचन दिया तो भूरिश्रवा प्रसन्नवदन अपने मन्दिर को लौट आया। भूरिश्रवा ने जब से मन्दिर बनवाया था उसके चारों ओर भैरव के उपासकों ने अपने मकान बना लिए थे। वे नित्य देवता के दर्शन कर सकने की सुविधा प्राप्त

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करना चाहते थे। इस प्रकार कुछ ही वर्षों में मन्दिर के चारों ओर एक छोटा–सा नगर बस गया था। इस नगर का नाम भैरवपुरी विख्यात हो गया। श्रीनगर से भैरवपुरी पाँच कोस के अन्तर पर थी और महाराज जलौक भी अवसर मिलने पर भगवान् के दर्शन के लिए मन्दिर में जाया करते थे।

अगले दिन महाराज जलौक मन्दिर में गए तो भूरिश्रवा ने भगवान् की पूजा में उपस्थित एक कुमारी की ओर संकेत कर महाराज से कह दिया, "भगवन्! यह कादम्बिनी है। एक शिवभक्त की एक ही सन्तान है। इसके मस्तक पर महारानी बनने की रेखाएँ स्पष्ट दिखाई देती हैं।"

महाराज जलौक ने लड़की को देखा और पसन्द कर लिया। इस प्रकार नई महारानी राजप्रासाद में आ पहुँची।

एक वर्ष के भीतर ही दामोदर का जन्म हुआ और कादम्बिनी अति प्रसन्न हो राजकुमार का लालन–पालन करने लगी।

महाराज जलौक जब राजमहल में पहुँचे तो अपने कक्ष के द्वार पर कादम्बिनी उनके स्वागत के लिए खड़ी थी। महाराज ने प्रश्न–भरी दृष्टि में महारानी की ओर देखा तो कादम्बिनी ने कहा, "महाराज की जय–जयकार का नाद सुन आपके आने की सूचना समझ स्वागत के लिए द्वार पर आकर खड़ी हुई हूँ।"

महाराज ने बात बदल दी और पूछ लिया, "दामोदर कहाँ है?"

"पढ़ने के लिए गुरुजी के पास गया हुआ है।"

"आजकल वह क्या पढ़ रहा है?"

"धातु–पाठ और वाल्मीकीय रामायण पढ़ाए जा रहे हैं।"

महाराज महारानी के साथ–साथ ही महारानी के निजी आगार में जा पहुँचे। महारानी ने उनको उच्च आसन पर बिठाकर पूछा, "कब तक लौटने का विचार है?"

"छः मास तो लगेंगे ही। सम्भव है कि कुछ अधिक लग जाएँ। सीमा पर से आई सूचना में ऐसा प्रतीत होता है कि इस बार युद्ध अति भयंकर होगा। नरकण्ट अपनी पहले की पराजय का प्रतिकार लेने का यत्न करेगा और इसके लिए वह अवश्य भारी तैयारी करके आया प्रतीत होता है। वैसे तो मैंने भी पहले युद्धों से बड़ी सेना भेजी है। इस सेना में राज्य के महान् शूरवीर और बुद्धिमान सेनाध्यक्ष विक्रम को भी भेजा है। मैं स्वयं भी जा रहा हूँ। अपनी ओर से यह निश्चय है कि कम्बोज वालों से यह अन्तिम युद्ध होगा और इसके उपरान्त कम्बोज कश्मीर का एक अंग बन जाएगा। वहाँ कश्मीर राज्य का एक आयुक्त राज्य करेगा।"

दासी महाराज और महारानी के लिए प्रातः का अल्पाहार ले आई और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
दोनों के सामने चौकियाँ लगा उस पर चाँदी के थालों में शाक, भाजी, पूरी, मिष्ठान इत्यादि लगा दिया गया। दासी आगार से बाहर गई तो महाराज ने भूरिश्रवा की माँग बता दी। महाराज ने कहा, "कल शिवरात्रि का पर्व है और पण्डित भूरिश्रवा चाहता है कि पूजन के लिए दुर्गा को मन्दिर में भेज दिया जाए।"

"और आपने क्या कहा है?"

"मैं पण्डित को कह आया हूँ कि कल पूजा के समय से पहले दुर्गा जाने के लिए तैयार रहेगी। पण्डित रथ लेकर आएगा और दुर्गा को अपने साथ ले जाएगा। रात पूजा के उपरान्त दुर्गा को वापस राजमहल में पहुँचा देगा।"

"यह आपने ठीक नहीं किया। मैं वहाँ के पूजन के कार्यक्रम को जानती हूँ। मैं भी कई बार दुर्गा बनकर पूजा करा चुकी हूँ। यह मेरे बाल्यकाल की घटना है। परन्तु आज भी जब उस पूजा का दृश्य स्मरण करती हूँ तो पुरुष–संगति के लिए व्याकुल हो उठती हूँ। इसलिए मैं समझती हूँ कि दुर्गा को इस कार्य के लिए नहीं भेजना चाहिए।"

"परन्तु मैं वचन दे आया हूँ। यथार्थ बात यह है कि पण्डित के मुझ पर और राज्य पर बहुत अहसान हैं। वह यदि किसी दिन कहे कि मुझे अपना शीश काटकर भगवान् के चरणों में रख देना चाहिए तो मैं इन्कार नहीं कर सकूँगा।"

"महाराज! यह तो ठीक है, परन्तु कुमारी लड़की के मन में भैरवीचक्र की पूजा का दृश्य अंकित हो जाने पर वह जीवन–भर काँटे की भाँति चुभता रहेगा।"

महाराज जलौक मुस्कराया और बोला, "तो तुम्हारे मन में अभी तक काँटा चुभ रहा है?"

"हाँ, महाराज! उस काँटे की चुभन को शान्त करने के दो ही उपाय होते हैं। एक तो महाराज की संगति और दूसरा रात–रात भर भगवान् का चिन्तन।"

"तो भगवान् के चिन्तन से शान्ति मिलती है?"

"हाँ, महाराज! पण्डित भूरिश्रवा ने यह उपाय बताया है। उसने कहा था कि वासनाओं के चिन्तन से जो उत्तेजना उत्पन्न होती है, भगवान् उसको अपने अभिमुख कर शान्ति प्रदान करते हैं।"

"तब तो ठीक है। वही उपचार दुर्गा को समझा देना। देखो, रानी! भूरिश्रवा के यहाँ आने से पहले मैं प्रायः भैरवीचक्र समारोहों में जाया करता था और वहाँ से उत्तेजित स्त्री–संसर्ग के लिए भटकता रहता था। एक राजपुत्र को इसकी सुविधा मिल जानी कठिन नहीं थी, परन्तु हृदय की अग्नि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
शान्त नहीं होती थी और मैं दिन–रात विषय–वासना में लीन रहने लगा। मेरे मन की अवस्था को मेरे पिताजी जान गए और उन्होंने मुझे कौशाम्बी के पण्डित विद्यानिधि के पास भेज दिया। पण्डितजी ने मुझे ऐसी योगक्रिया बताई कि जिससे मैं वासनामय विचारों का आनन्द तो प्राप्त करता ही हूँ, परन्तु शारीरिक ह्रास अनुभव नहीं करता। एक दिन मैंने पण्डित भूरिश्रवा से इस अवस्था का वर्णन किया तो वह कहने लगे कि यह मोक्षावस्था है। मोक्ष में भी जीवात्मा प्रत्येक प्रकार का सुख प्राप्त करता है बिना इन्द्रियों के प्रयोग के। मैं इससे सन्तुष्ट हूँ और मैं समझता हूँ कि तुम भी जब चिन्तन से शान्ति प्राप्त करती हो तो वास्तव में तुम मोक्षावस्था का अनुभव ही करती हो।''

कादम्बिनी हँस पड़ी। वह बोली, ''मुझे एक अन्य गुरु मिले हैं और वह कहते हैं कि मेरी उस समय की अवस्था मानसिक व्यभिचार की होती है।''

''वह गुरु कौन है?''

''महाराज! अब तो आप जा रहे हैं। जब लौटकर आएँगे तो उनके दर्शन कराऊँगी।''

''तो क्या वह राजप्रासाद में ही रहते हैं?''

''नहीं, महाराज! आजकल वह कश्मीर से बाहर हैं। आशा करती हूँ कि आपके समर से लौटने तक श्रीनगर में वापस आ जाएँगे।''

''वह तुम्हें कहाँ मिल गए थे?''

''यह भी जब आप आएँगे तो बताऊँगी।''

''तब तो तुम दुर्गा का पथ–प्रदर्शन कर सकोगी। वह कल पूजा में सम्मिलित होने जाएगी। तुम्हें चाहिए कि उसको सचेत और सतर्क कर दो जिससे कि उसके मन में शान्ति बनी रहे। हो सके तो तुम स्वयं भी कल उसके साथ जाओ और देखो कि किसी प्रकार से उसका अनिष्ट न हो।''

''महाराज! मैं वहाँ जाना नहीं चाहती। चित्त नहीं करता।''

''तो तुम मत जाना। परन्तु दुर्गा को सतर्क कर देना जिससे कि वह वहाँ से निर्लेप रहकर लौट आए।''

अल्पाहार समाप्त हो चुका था और महाराज को अपने मन्त्रियों को बहुत–कुछ समझाना था जिससे कि वे महाराज की अनुपस्थिति में राज्य–कार्य चला सकें। इस कारण अल्पाहार समाप्त होते ही महाराज उठ खड़े हुए और मन में यह विचार कर कि कादम्बिनी भैरव–पूजन की प्रक्रिया को भली प्रकार समझती है और वह दुर्गा को सब समझा देगी, निश्चिन्त हो गए।

भूरिश्रवा महाराज जलौक के आश्वासन पर कि राजकुमारी दुर्गा महा–शिवरात्रि की पूजा में आएगी, प्रसन्नवदन मन्दिर के द्वार पर आया तो नीला वहाँ खड़ी मिल गई। भूरिश्रवा उसे वहाँ देख उसके समीप खड़ा हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पूछने लगा, "नीला! यहाँ खड़ी क्या कर रही हो?"

"महाराज! आज त्रयोदशी है।"

"हाँ! स्मरण है।"

"मैं आपकी अपने निवास–गृह पर प्रतीक्षा करूँगी। रात किस समय आइएगा?"

"हाँ! आज मैंने अपने को अवकाश में रखा है।"

नीला ने बात बदल दी और पूछा, "तो महाराज कल पूजा में आएँगे क्या?"

"नहीं! वह कल प्रातःकाल ही समर पर जा रहे हैं, परन्तु मैंने उनसे वचन ले लिया है कि दुर्गा पूजा में पूजित बनने के लिए आएगी।"

"वह मान गए हैं?"

"हाँ।"

"यह ठीक नहीं हुआ।"

"क्यों?"

दोनों मन्दिर के पिछवाड़े में पुजारी के घर को चल पड़े थे। नीला के प्रश्न करने पर भूरिश्रवा ने कहा, "महाराज ने भी आशंका प्रकट की थी कि उसके लिए यह ठीक नहीं होगा। मैंने समझा दिया है और वह समझ गए हैं।"

"परन्तु इससे आपका उत्तरदायित्व तो और भी बढ़ गया है।"

"समझता हूँ।"

इस समय वे पुजारी के मकान के द्वार पर पहुँच गए थे। नीला निवास–गृह के बाहर ही खड़ी हो गई। भूरिश्रवा ने उसे खड़ी देख पूछ लिया, "ठहर क्यों गई हो?"

"मैं आपको रात के लिए निमन्त्रण दे रही हूँ।"

"और मैं इसी समय निमन्त्रण दे रहा हूँ।" पण्डित ने मुस्कराते हुए कहा।

"यहाँ हमारे कार्य में विघ्न पड़ सकता है। कोई आपसे मिलने वाला, रोगी अथवा भाग्य–रेखा जानने का इच्छुक आकर विघ्न डाल सकता है। वहाँ पूर्ण रात हमारे अधीन होगी।"

"हाँ! यह तो है। मैं किसी को भी इन्कार नहीं कर सकता। जो शान्ति और आनन्द तुम्हारे निवास–स्थान पर प्राप्त हो सकता है, वह यहाँ सम्भव नहीं। मुझे तो उपासनाओं में भी वह शान्ति और आनन्द नहीं मिलता।"

"तो फिर पूजाओं का आडम्बर किसलिए चला रखा है? कल सबको कह दीजिए कि भगवान् इत्यादि कुछ नहीं। सब अपने–अपने घरों को जाकर अपने–अपने धर्म के साथियों से विहार करें।"

भूरिश्रवा हँस पड़ा। हँसकर कहने लगा, "नीला! तो क्या मैं यह अपने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिए कर रहा हूँ?''

''अपने लिए नहीं तो फिर किसके लिए यह सब हो रहा है?''

''मूर्ख लोगों के लिए। यह वासना की प्रवृत्ति तो युग–धर्म है। सामान्य लोग उसमें बहते हुए यह सब कुछ कर रहे हैं। हमारे पूर्वज विद्वानों ने मनुष्य की इस दुर्बलता को नियम में बाँधने के लिए यह पूजा–पद्धति चलाई है। जब तक मूर्खता और यौवन का उफान रहता है, किसी–न–किसी प्रकार इसका नियमित निकास रहना चाहिए।''

नीला बेचारी कुछ अधिक पढ़ी–लिखी स्त्री नहीं थी। इस कारण उसने निरुत्तर हो बात बदल दी। उसने कहा, ''सुनन्द कह रहा है कि वह कल पूजा में सम्मिलित होगा।''

इस समय वे घर की बैठक में जा बैठे थे। बैठक बहुत ही सजी हुई थी और उसमें बैठने और आराम करने के लिए सब प्रकार का सामान लगा था। उसने कहा, ''आपका यह बैठक–घर तो महाराज के बैठक–घर से किसी प्रकार कम सुन्दर और सुख–सुविधासम्पन्न नहीं।''

''तो तुमने वह देखा है?''

''दो वर्ष हुए, महारानी जी ने एक दिन बुलाया था।''

''क्या काम था?''

''गुप्त कार्य था। वह मैं नहीं बताऊँगी।''

भूरिश्रवा ने बात बदलकर पूछ लिया, ''सुनन्द की कितनी वयस है?''

''उसने तेरहवाँ वर्ष पार किया है।''

''अभी मैं उसे आमन्त्रित नहीं कर सकता।''

''वह कहता था कि वह अब सज्ञान हो गया है।''

''वह सज्ञान के अर्थ नहीं जानता।''

''मुझे सन्देह है कि उसने किसी भक्त से पूजा का वृत्तान्त सुन लिया है।''

''वह अवश्य तुम्हारी दासी नूतन होगी। वह भी तो कभी–कभी पूजा में सम्मिलित होने आती है।''

''पता करूँगी। मैं उसे मना कर दूँगी। लड़का इतना सुन्दर है कि किसी का भी उस पर मन लग जाना स्वाभाविक ही है। परन्तु मेरे लिए तो प्रश्न यह है कि उसे क्या कहकर टालूँ।''

''उसे समझा दो।''

''मैं समझा नहीं सकती। वह मुझसे अधिक बातें बनाने लगा है।''

''तो उसे डाँट दो।''

''वह आपका शिष्य है। आप ही डाँट सकते हैं।''

''इसका अभिप्राय है कि वह विद्रोह कर रहा है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"यह आज का युग है।"

"अच्छा तो उसे कहना कि कल रात उससे एक विशेष काम लेना है। वह काम उपासना से ही सम्बन्ध रखता है। उसे कहना कि उसे आधी रात के उपरान्त पूरी नींद लेकर मन्दिर में उपस्थित हो जाना चाहिए।"

"क्या सेवा लेंगे उससे?"

"रात पूजा के उपरान्त उसे राजकुमारी को लेकर राजप्रासाद के भीतर तक छोड़ने भेज दूँगा। किन्तु यह बात अभी उसे नहीं बताना। उसके मन में उत्सुकता बनी रहनी चाहिए।"

नीला ने कहा, "वह राजकुमारी से किसी प्रकार की अशिष्टता भी तो कर सकता है?"

"रथ का सारथी सुधीर भी रथ में होगा। उसकी उपस्थिति में वह असभ्य व्यवहार नहीं कर सकेगा।

"वैसे तो मैंने उसे दूसरों के साथ बातचीत करने का ढंग सिखाया है और मैं समझता हूँ कि इस अवसर पर उसको दी गई मेरी शिक्षा की परीक्षा भी हो जाएगी।"

इस समय सुनन्द हाथ में पढ़ाई की पुस्तकें लिए हुए वहाँ आ उपस्थित हुआ। भूरिश्रवा ने उसे देख कह दिया, "जाओ, पठन–कक्ष में जाकर अपना पाठ स्मरण करो। मैं अभी वहाँ आता हूँ।"

सुनन्द ने माँ की ओर देख कह दिया, "माँ! सुना है कि कल महाशिवरात्रि की उपासना में राजकुमारी दुर्गा भी आ रही है।"

"हाँ! किसने बताया है?"

"मन्दिरपथ पर झुण्ड में खड़े कोई लोग यह चर्चा कर रहे हैं। कोई कह रहा था कि उसने अपने कान से सुना है कि महाराज मान गए हैं। आप कल राजकुमारी को रथ में लेने राजधानी जाएँगे।"

"हाँ! मान तो गए हैं।" भूरिश्रवा ने कह दिया।

"माँ!" सुनन्द ने नीला की ओर देखकर कह दिया, "मैं कल पूजा में आऊँगा। अवश्य आऊँगा।"

"हाँ!" नीला ने गम्भीर भाव बना कहा, "परन्तु आधी रात के उपरान्त ही आना और तुम्हें एक विशेष कार्य सम्पन्न करना होगा।"

"क्या करना होगा?"

उत्तर भूरिश्रवा ने दिया, "यह तो समय पर समझा दिया जाएगा। तुमको चाहिए कि उससे पहले पूरी नींद कर लो। फिर रात–भर जागना होगा। कार्य में नींद आ गई तो ठीक नहीं होगा।"

सुनन्द प्रसन्न हो गया। वह पठन–कक्ष में बैठा–बैठा कल्पना के घोड़े

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दौड़ाने लगा।

उसको उपासना के लिए उकसाने वाली नीला की दासी नूतन ही थी। दो दिन पूर्व नूतन ने सुनन्द को अपने घर के पठन–कक्ष में किसी विचार में मग्न बैठे देख पूछ लिया, "क्या कर रहे हो सुनन्द?"

"न समाप्त होने वाली चक्की पीस रहा हूँ।"

"चक्की?" नूतन ने मुस्कराते हुए पूछ लिया।

"और क्या! देखो, नूतन बहन! मैं बताता हूँ कि क्या कर रहा हूँ। एक हुए हैं पाणिनि। इन्होंने न जाने किस प्रमाद की अवस्था में यह सूत्र गढ़ दिया है– 'रोरि। ढलोपे पूर्वस्य दीर्घोऽणः।' और उसके मर जाने के उपरान्त भी यह मुझे स्मरण करने के लिए कहा जा रहा है। भला क्या समझी हो इससे?"

नूतन मुस्करा रही थी। जब सुनन्द कह चुका तो वह बोली, "देखो। इधर समीप आओ। मेरे सामने खड़े हो जाओ।"

सुनन्द जब अपने स्थान से उठ उसके सामने आकर खड़ा हो गया तो वह पूछने लगी, "तुम उपासनाओं में सम्मिलित क्यों नहीं होते?"

"वहाँ जाने से क्या होगा? क्या यह सूत्र स्मरण हो जाएगा?"

"उससे भी कुछ अधिक।"

"क्या?"

नूतन ने झपटकर उसे अपने अंग लगा लिया और उसका मुख चूमकर कहा, "कुछ समझे हो?"

सुनन्द को कुछ रस तो प्राप्त हुआ था, परन्तु वह समझा नहीं कि यह क्या रस है। उसने विस्मित हो पूछ लिया, "यह क्या है?"

"माँ से कहकर इस बार शिवरात्रि की रात को उपासना में सम्मिलित होने चलो तो पता लग जाएगा।"

"यहीं बता दो न।"

वासनाविभूत होने से नूतन का साँस वेग से चलने लगा था। उसने कह दिया, "यहाँ नहीं। यहाँ पाप हो जाएगा। वहाँ भगवान् के सामने यह बताना पुण्य होता है।"

सुनन्द के भैरव–उपासना में सम्मिलित होने के लिए कहने की यह पृष्ठभूमि थी। उसे नूतन का आलिंगन स्मरण आने लगा तो वह नित्य माँ से कहने लगा था कि वह उपासना में सम्मिलित होगा। नीला उसे यह कहकर टाल रही थी कि उसके गुरु से पता करेगी कि वह उपासना में उपस्थित होने के योग्य हुआ है अथवा नहीं।

सुनन्द ने नीला को बताया था कि उसे पूजा के सब स्तोत्र कण्ठस्थ हो गए हैं और वह अवश्य उपासना में सम्मिलित होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसके इस हठ पर ही नीला ने भूरिश्रवा से सुनन्द की बात कही थी और उसने उसे टालने का एक उपाय बता दिया था।

: 4 :

महाराज जलौक ने सेनापति विक्रम को कई दिन पहले ही समर पर भेज दिया था। जब मगध सम्राट् अशोक ने कश्मीर पर आक्रमण किया था और कश्मीर सीमा पर कई वर्ष तक युद्ध चलता रहा था तब विक्रम ने बहुत शौर्य का प्रदर्शन किया था। बीच के काल में वह अपने गाँव में जाकर रहने लगा था। इस बार जलौक के विशेष आग्रह पर वह सेनाध्यक्ष के रूप में समर पर गया था।

जाने के समय उसकी पत्नी ने पति की आरती उतारते हुए भगवान् से प्रार्थना की थी कि वह विजयी होकर घर लौटे। पत्नी की इस प्रार्थना पर विक्रम पत्नी की ओर देखता हुआ मुस्कराता रहा। पत्नी जानती थी कि वह अनीश्वरवादी है और वह भगवान् की प्रार्थना को हँसी का विषय समझ रहा है। उसने गम्भीर भाव बनाए हुए कह दिया, "जो लोग परमात्मा को सदा अपने साथ समझते हैं, उन्हें कोई परास्त कर ही नहीं सकता।

"देखिए। नरश्रेष्ठ भगवान् कहते हैं–

तस्मात्सर्वेषु कालेषु मामनुस्मर युध्य च।
मय्यर्पितमनोबुद्धिर्मामेवैष्यस्यसंशयम्।।

"इस कारण उसको सदैव अपने साथ समझने वाले और अपने शरीर, मन और बुद्धि को उसके अर्पित कर देने वाले उसे ही प्राप्त होते हैं और उसे प्राप्त व्यक्ति सदा विजयी होता है।"

"परन्तु प्रिये! वह तो यहाँ मन्दिर में ही बैठा रह जाएगा। तो फिर वह मेरी विजय कैसे कराएगा?"

विक्रम यह तो समझता था कि वह शिव मन्दिर में प्रतिष्ठित शिवलिंग की बात नहीं कर रही। फिर भी उसने यह व्यंग्य के भाव में कहा था। इससे उसकी पत्नी ने कह दिया, "वह तो सर्वव्यापक है। किसी के जाने न जाने वह सदा सबके साथ रहता है। आवश्यकता है उसको अपने पास अनुभव करने की।"

विक्रम जानता था कि उसकी पत्नी सुन्दरी शिव की उपासिका नहीं है। फिर भी उसने भगवान् के युद्ध में सहायक न हो सकने के लिए मन्दिर की बात कही थी। सुन्दरी तो भगवद्गीता में वर्णित अव्यक्त ईश्वर की बात कह रही थी। विक्रम जाने की जल्दी में था। इस कारण सुन्दरी ने भगवान् की

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सर्वव्यापकता की ओर संकेत कर सन्तोष कर लिया था।

परन्तु परमात्मा की सर्वव्यापकता की बात विक्रम के बहुत काम आई। सीमा पर कम्बोज सेना पर कई ओर से आक्रमण करने के लिए कश्मीर–सेना को फैला दिया गया था। लगभग एक सौ मील की लम्बाई में सेना स्थित कर दी गई थी। विचार था कि कम्बोज–सेना को घेरकर घेरा छोटा कर दिया जाएगा और फिर उसे निःशेष किया जा सकेगा। परन्तु इससे एक तो सेना में चपलता और दूसरी ओर किसी एक स्थान पर भी सेना विरोध करने के योग्य नहीं रही थी। परिणामस्वरूप कम्बोज–सेना की निरन्तर विजय हो रही थी और वह श्रीनगर की ओर बढ़ रही थी। कश्मीर–सेना कहीं–कहीं तो आगे बढ़ रही थी, परन्तु केन्द्र के मोर्चे पर पीछे ही हट रही थी।

पीछे हटने का एक महान् कारण यह भी था कि अधिकांश सैनिक शैव थे और नित्य प्रातः भगवान् के दर्शन किए बिना लड़ने के लिए जाते नहीं थे। इसके विपरीत कम्बोज सेना साँझ–सवेरे अथवा रात को भी आक्रमण करती थी। आक्रमण के समय शैव भगवान् के दर्शन के लिए जा नहीं सकते थे। इस कारण वे उत्साह से लड़ नहीं सकते थे। जब आक्रमण होता तो सैनिक भगवान् के दर्शन के लिए दौड़ पड़ते और तब तक उनकी पराजय हो जाती थी।

इस समय विक्रम को पत्नी की बात स्मरण हो आई। अभी तक मूर्तियाँ विशेष सुरक्षित स्थानों पर स्थापित थीं। पुजारी वहाँ बैठे उनकी रक्षा करते रहते थे। सुन्दरी ने कहा था कि आवश्यकता है भगवान् को अपने पास अनुभव करने की। इस विचार पर एक योजना विक्रम को सूझी तो उसने उस पर कार्य आरम्भ कर दिया।

विक्रम ने पुजारियों को कहा कि समीप नदी के किनारे पर जाकर वे लिंग के आकार के छोटे–छोटे पत्थर के टुकड़े सहस्रों की संख्या में एकत्रित करें। तब उन टुकड़ों को पुजारियों से ही अभिमन्त्रित कराकर लाल रंग के कपड़े की थैलियों में लपेट दस–दस टके के मूल्य पर सैनिकों में बँटवा दिए। सैनिकों को आदेश दे दिया गया कि वे उन थैलियों को सदा अपने पास रखें और भगवान् उनकी रक्षा करेगा और उनको विजय दिलवाएगा।

योजना को कार्य में लाते ही सैनिकों को मन्दिरों में जाने की आवश्यकता नहीं रही और अब आक्रमण होने पर वे द्विगुणित उत्साह से लड़ने लगे। इस प्रकार वे विजयी होने लगे। इस परिवर्तन को देख विक्रम ने कम्बोज–सेना के केन्द्रीय शिविर पर आक्रमण कर दिया। इस समय विक्रम स्वयं भी सेना के साथ आक्रमण पर चल पड़ा।

घटनावश उसी दिन महाराज जलौक भी वहाँ आ पहुँचे और वह भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आक्रमण में सम्मिलित हो गए। कश्मीरी सैनिक अपने महाराज को सेना में लड़ने के लिए आया देख हर–हर महादेव और कश्मीर–महाराज का जयनाद करते हुए कम्बोज–सेना के मुख्य शिविर पर टूट पड़े। आक्रमण का बल देख कम्बोज–सेना भाग खड़ी हुई। फिर भी विक्रम के आक्रमण के ढंग के कारण सहस्रों ही कम्बोज–सैनिक बन्दी बना लिए गए। शिविर कश्मीर के घेरे में आ गया था।

इन बन्दी सैनिकों को अविलम्ब कश्मीर–राजधानी श्रीनगर को भेज दिया गया और कम्बोज के मुख्य सैनिक शिविर पर अधिकार कर लिया गया। यहाँ अधिकार करते ही दूर–दूर स्थित सेना को आदेश भेज दिया गया कि कम्बोज की राजधानी कापिश की ओर प्रस्थान कर दिया जाए। इस आज्ञा पर कार्य करने से पूर्व ही कम्बोज–सेना उत्साहहीन हो अपने–अपने घरों को लौटती दिखाई दी। इस पर भी विक्रम और महाराज को अति विस्मय हुआ। इसका कारण जानने का यत्न किया गया। पता चला कि मुख्य शिविर पर आक्रमण के समय से कम्बोज का नरेश नरकण्ट लापता है। सैनिकों का विचार है कि वह युद्ध में मारा गया है। इसी से सब सैनिक निरुत्साह हो घरों को चल दिए थे।

इस समाचार पर पहले तो नरकण्ट के शव को ढूँढ़ने का यत्न किया गया, परन्तु जब शव नहीं मिला तो यह समझ कि उसका शव इतना क्षत–विक्षत हो गया है कि पहचाना नहीं गया, शीघ्रातिशीघ्र कापिश पर अधिकार कर लेने की आज्ञा दे दी गई।

कुछ ही दिनों में पूर्ण कम्बोज देश पर अधिकार कर लिया गया और जलौक ने इस राज्य को कश्मीर में विलीन करने की घोषणा कर दी।

घोषणा इस प्रकार थी, "आज से हम कम्बोज राज्य को कश्मीर राज्य में मिला रहे हैं। यह पहले भी हमारे पूज्य पिताजी के काल में कश्मीर का ही अंग था।

"आज से पुनः कम्बोज का नागरिक कश्मीर का नागरिक माना जाएगा। उनसे वैसा ही व्यवहार किया जाएगा जैसाकि कश्मीर नागरिकों से किया जाता है। कम्बोज निवासी कश्मीर के अधीन नहीं, वरंच स्वतन्त्र कश्मीर नागरिक ही माने जाएँगे।"

इस घोषणा के उपरान्त विक्रम को ही कम्बोज का आयुक्त नियुक्त कर दिया गया।

जलौक ने श्रीनगर को विदा होने से पूर्व विक्रम को सेना की विजय और उसके आयुक्तक बनने पर बधाई दी तो विक्रम ने हँसते हुए कहा, "महाराज! इस समर में कश्मीर की विजय का मुख्य श्रेय तो मेरी पत्नी को है।"

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराज ने विस्मय से पूछ लिया, ''वह कहाँ है? क्या वह भी सैनिक शिविर में थी?''

''नहीं, महाराज! वह है तो अपने गाँव में ही, परन्तु उसके एक वाक्य ने महाराज की विजय की दुन्दुभि बजा दी है।''

विक्रम ने उस वाक्य की कहानी सुना दी जो सुन्दरी ने सेनापति के घर से चलते समय अपने पति को कहा था। उसे सुनकर तो जलौक भी हँसने लगे।

जलौक राजधानी को लौट आए।

: 5 :

महाशिवरात्रि के दिन भूरिश्रवा राजकुमारी दुर्गा को लेने राजप्रासाद में आया तो महारानी कादम्बिनी ने दुर्गा को समझाकर उसके साथ कर दिया। महाराज की आज्ञानुसार उसने विदा तो कर दिया, परन्तु वह स्वयं निश्चिन्त नहीं थी। उस रात वह दुर्गा की प्रतीक्षा में जागती रही।

दुर्गा तेरह–चौदह वर्ष के कुमार के साथ रात के तीसरे प्रहर समाप्त होने के समय आई। महारानी चिंताग्रस्त दुर्गा के शयन–कक्ष के द्वार पर उसकी प्रतीक्षा में खड़ी थी। महारानी ने लड़की को आते देखा तो आगे बढ़ पूछ लिया, ''बहुत देर कर दी है, दुर्गा?''

''माँ! अभी ही तो अवकाश मिला है। बस आने में समय नहीं लगा है।''

''और यह साथ कौन है?''

वह कुमार अपना परिचय देना ही चाहता था कि दुर्गा बोल उठी, ''माँ! यह नीला का देवों के देव महादेव से प्राप्त पुत्र सुनन्द है।'' दुर्गा इतना कहते–कहते हँस पड़ी।

महारानी जानती थी कि नीला अविवाहित स्त्री है। वह यह भी जानती थी कि वह भूरिश्रवा की प्रिया है। इससे वह दुर्गा के कथन का यह अभिप्राय समझी थी कि यह नीला को भूरिश्रवा के भैरवी–चक्र में प्राप्त हुआ पुत्र है। परन्तु वह यह भी जानती थी कि नीला अभी बीस–बाईस वर्ष की युवती है और यह लड़का बारह–तेरह वर्ष का प्रतीत होता है। इससे उसे अपने अनुमान पर सन्देह हो गया। इस कारण महारानी ने पुनः सुनन्द से पूछा, ''तुम्हारे पिता का क्या नाम है?''

इसका उत्तर भी दुर्गा ने ही दिया, ''माँ! बताया तो है कि देवों के देव महादेव।''

कादम्बिनी भी हँस पड़ी। हँसते हुए पूछने लगी, ''पुजारी जी भी आए हैं?''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नहीं, महारानी जी!" सुनन्द ने कहा, "उन्होंने राजकुमारी को यहाँ पहुँचाने के लिए मुझे भेजा है।"

"तो तुम अभी भैरवपुरी लौट जाओगे?"

"जी नहीं। रथ का सारथी कह रहा है कि वह प्रातः स्नानादि के उपरान्त ही यहाँ से जाएगा।"

"और तुम रात में कहाँ रहोगे?"

"मैं रथ में ही सो रहूँगा।"

"वहाँ तो बहुत सर्दी होगी।"

"वह तो मार्ग में भी थी, परन्तु... " वह कहने लगा था कि राजकुमारी जी के साथ वार्तालाप से उसका इस ओर ध्यान ही नहीं गया, परन्तु वह चुप रहा।

कादम्बिनी ने कुछ विचार किया और समीप खड़ी सेविका को कह दिया, "इस कुमार को अतिथि–गृह में ले जाओ। वहाँ इसके सोने का प्रबन्ध करा दो।"

सेविका सुनन्द को लेकर गई तो कादम्बिनी ने दुर्गा को शयनागार के भीतर ले जाते हुए पूछ लिया, "कैसा रहा है, उत्सव?"

"माँ बहुत रसयुक्त था।" यह कह वह चुप हो गई।

कादम्बिनी चलती–चलती खड़ी हो गई। दुर्गा ने माँ को खड़े होते देखा तो कह दिया, "माँ! अब नींद आ रही है। प्रातःकाल बताऊँगी।"

माँ को भी यही ठीक लगा। वह उसे वहाँ छोड़ अपने शयनागार में चली गई।

यद्यपि रात सोने में देर हो गई थी, परन्तु माँ–बेटी दोनों स्वभाववश प्रातः ही उठ पड़ीं और स्नानादि से निवृत्त हो अल्पाहार के लिए भोजनालय में जा पहुँचीं। माँ ने दुर्गा को आते देखा तो पूछ लिया, "नींद नहीं आई क्या?"

"माँ, सोई तो हूँ, परन्तु स्वभाव से जाग पड़ी हूँ। साथ ही भूख लग आई है। इस कारण विचार किया है कि अल्पाहार लेकर फिर सो जाऊँगी।"

"तो रात वहाँ खाने को कुछ नहीं मिला?"

"मिला तो बहुत–कुछ था, परन्तु पुजारिन समीप बैठी कह रही थी कि कम खाऊँ और मद्य का सेवन न करूँ।"

"किसलिए?"

"उसने कहा था कि अधिक खा गई तो नींद आ जाएगी और भगवती तो कभी भी सोती नहीं। वह सदैव जागकर सबको देखती रहती है।

"मैं मद्य से डरती थी। यहाँ तो तुम मुझे पीने से मना करती हो। अध्यापिका बहन जी भी कहती हैं कि उसके पीने से बुद्धि क्षीण होती है। मैं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पूर्ण पूजा में सतर्क रही थी।"

महारानी ने बात बदलकर पूछ लिया, "तो आज पढ़ाई नहीं होगी?"

"माँ! मैं तो सोऊँगी।"

महारानी ने बताया, "मैंने उस लड़के को बुलाया है जो रात तुम्हें छोड़ने आया था।"

"वह सो रहा होगा।"

"परन्तु उसे भैरवपुरी वापस जाना है। अवश्य जागकर तैयार हो गया होगा।"

"माँ! उससे कुछ काम है?" राजकुमारी ने माँ से पूछ लिया।

माँ देख रही थी कि सुनन्द के आने के समाचार से उसका थकावट से मुरझाया हुआ मुख खिल उठा है। उसकी आँखों की चमक दुगुनी हो गई है। महारानी ने दुर्गा के प्रश्न का उत्तर दे दिया, "हाँ! उसका और पुजारी जी का धन्यवाद करना है। साथ ही मुझे पुजारी से कुछ काम है। उनको बुलाना चाहती हूँ।"

इसी समय सुनन्द आ गया। वह सोता हुआ जगाया गया प्रतीत होता था। उसकी आँखों में नींद भर रही स्पष्ट दिखाई दे रही थी।

कादम्बिनी ने पूछा, "अभी नींद नहीं खुली?"

"महारानी जी! बहुत रात गए सोया था। सारथी तो तैयार खड़ा है। वह जब मुझे जगा रहा था तो उसी समय आपका सेवक आया और आपका सन्देश देने लगा। मैंने पहले इधर आना ही उचित समझा है। सेवा में उपस्थित हूँ।"

"अल्पाहार करोगे न?"

"जी नहीं! वह तो शौचादि के उपरान्त ही करूँगा।"

"रात राजकुमारी को यहाँ पहुँचाने का कष्ट करने के लिए वह तुम्हारा और मैं पुजारी जी का, जिन्होंने तुम्हें यहाँ भेजा है, धन्यवाद करती हैं। उनसे कहना कि समय मिलते ही मुझे मिलें। मुझे उनसे एक आवश्यक काम है।"

इस वार्तालाप से उत्साहित हो दुर्गा ने कह दिया, "कभी राजधानी आओ तो मिलना।"

"अब तो आपके दर्शनार्थ भी राजधानी आया जा सकता है।" सुनन्द ने मुस्कराते हुए कह दिया, "पुजारी जी से रथ माँगना पड़ेगा।"

दुर्गा के मन में सुनन्द को पुनः बुलाने की बात चक्कर काटने लगी थी। उसने कह दिया, "मैं माताजी से कहूँगी कि कभी रथ भेज दें।"

महारानी ने सुनन्द को विदा करने के लिए कह दिया, "पुजारी जी को सन्देश दे देना।"

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इनके बातें करते समय दामोदर भी अल्पाहार के लिए आ गया था। उसने भी सुनन्द को देखा और उसकी रूप–राशि को देख पसन्द किया था। वह सुनन्द को आदरयुक्त, परन्तु निर्भय मुद्रा में खड़े देख समझा था कि वह किसी सम्बन्धी का लड़का है। इस कारण उसके चले जाने पर उसने माँ से पूछा, "माँ! यह कौन था? पहले कभी नहीं देखा?"

महारानी अल्पाहार के लिए चौकी पर बैठ गई। दामोदर के प्रश्न का उत्तर दुर्गा ने दिया। उसने चौकी पर बैठते हुए कहा, "भैया! यह देवों के देव महादेव का पुत्र है।" यह कहते–कहते वह हँस पड़ी।

दामोदर ने भी चौकी पर बैठते हुए पूछ लिया, "किस महादेव का? भैरव स्वामी का अथवा वृषभ स्वामी कैलासपति का?"

उन दिनों कैलास एक पृथक् राज्य था और वहाँ के नरेश की उपाधि महादेव शिव थी। श्रीनगर में उसकी हँसी करने के लिए उसे वृषभपति के नाम से सम्बोधित किया जाता था।

इस संकेत से तो दुर्गा के मन में प्रकाश होने लगा। वह विचार करने लगी थी कि सुनन्द अवश्य किसी नरेश का लड़का होना चाहिए। नरेशों के बच्चे सदा सुन्दर माने जाते थे। परन्तु वह यह विचार करती थी कि वह भैरवपुरी में किस अर्थ से रहता है? वह अवश्य पुजारी जी से पढ़ता होगा। उसने माँ से पूछ लिया, "तो पुजारी राजकुमारों को पढ़ाता भी है?"

"वह विशेष विद्या सीखने आया हो सकता है।" महारानी ने सुनन्द की बात समाप्त करने के लिए कह दिया।

परन्तु दुर्गा ने सुनन्द की बात नहीं छोड़ी। उसने माँ से पूछ लिया, "माँ! उसे अब किस दिन बुलाओगी?"

माँ ने बात टालने के लिए पूछ लिया, "किसे कह रही हो?"

"सुनन्द को।"

"उससे क्या काम है?"

"उससे बातें करने को जी चाहता है।"

कादम्बिनी विचार करने लगी थी कि सुनन्द का दुर्गा के मन पर गहरा प्रभाव हुआ है। वह उसके मन से इस प्रभाव को मिटाने के लिए विधी का विचार करने लगी थी। इसी अर्थ से उसने कह दिया, "महाराज के समर से लौटने पर ही बुलाना सम्भव हो सकेगा।"

"पिताजी तो कहते थे कि युद्ध छः मास तक चलेगा।"

"यह बात नहीं। यह शीघ्र ही समाप्त होगा।"

"माँ! किस आधार पर यह कह रही हो?"

"हम परमात्मा के भक्त हैं और परमात्मा अपने भक्तों की विजय शीघ्र ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करा सकते हैं।''

इस बात के साथ ही कादम्बिनी ने बात बदल दी। उसने कह दिया, ''सोने के उपरान्त मेरे कमरे में आ जाना। मैं जानना चाहती हूँ कि पूजा में क्या हुआ था।''

अल्पाहार के उपरान्त दुर्गा की अध्यापिका महारानी जी से मिलने आई और पूछने लगी, ''आज दुर्गा पढ़ने नहीं आई। वह स्वस्थ तो है?''

''हाँ! वह स्वस्थ तो है, परन्तु रात शिवरात्रि के पूजन के लिए भैरवपुरी गई थी और वहाँ से रात को बहुत देर से आई थी। अभी सो रही है।''

''हाँ, याद आ गया है। वह कह रही थी कि उसे पूजा में भगवती बनने जाना है। मैंने उसे मना किया था और उसने कहा था कि महाराज की आज्ञा है। तब मैं चुप हो गई थी।''

''तो तुमको ज्ञात है कि इन पूजाओं में क्या होता है?''

''मेरे पिता पण्डित भगवत्स्वरूप भैरव के उपासक थे। वह स्वयं तो पूजन में जाते थे, परन्तु मुझे और माताजी को वहाँ नहीं ले जाया करते थे।

''मैं एक बार अपने एक मित्र के साथ वहाँ जा पहुँची। वह यहाँ राजधानी के एक मन्दिर में ही था। वह मित्र मुझसे विवाह करने की अभिलाषा रखता था। माताजी मान नहीं रही थीं। उस दिन मित्र ने भैरव–उपासना में चलने का प्रस्ताव किया तो मैं मान गई।

''हम दोनों जानते थे कि मेरे पिताजी वहाँ जाते हैं और मुझे उसमें सम्मिलित होने से मना करते हैं। इस कारण हम माता–पिता से चोरी ही गए थे। मैं मद्य पीती नहीं थी, परन्तु सबको पीते देख मैंने भी पी ली। वह मेरे सिर को चढ़ गई। मैं अर्धचेतनावस्था में उससे वास्तविक विवाह कर बैठी। बहुत रात गए वही मित्र मुझे चोरी–चोरी ही घर पर छोड़ गया। प्रातः मेरी नींद नहीं खुली और माताजी मुझे देखने आईं तो मद्य की बू कमरे में फैली देख पूछने लगीं, 'यह कहाँ से मिली?'

''मैं बक गई। मैंने बताया, 'मधुकर जी मुझे भैरव–पूजा में ले गए थे। वहाँ पी है।'

'' 'बहुत दुर्गन्ध आ रही है। जाओ, कुल्ला और स्नानादि कर अल्पाहार के लिए आ जाओ।'

''उस दिन माताजी ने मुझसे पूछा, 'क्या हुआ था पूजा में?'

''मैंने बता दिया, 'मधुकर जी से मेरा विवाह हो गया है।'

'' 'कैसे हो गया है?' माँ ने माथे पर त्योरी चढ़ा पूछा।

''मैंने बताया, 'माँ! समाज में विधि–विधान पहले होते हैं और विवाह बाद में होता है। हमने विवाह पहले कर लिया है और विधि–विधान बाद में कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लेंगे।'

"माँ का मुख क्रोध से लाल हो गया। मैंने कहा, 'माँ! क्रोध करने की आवश्यकता नहीं। कुछ आगे–पीछे हो गया है। आज मधुकर जी आएँगे तो तुम विधि–विधान पूरे कर लेना।'

"इस पर भी मैंने उनसे वचन ले लिया था कि वह पुनः न तो कभी स्वयं वहाँ जाएँगे और न ही मुझे कभी वहाँ चलने के लिए कहेंगे। मैंने उनको बताया था कि वहाँ तो अपने और पराए में पहचान करना अति कठिन हो गया था। मैं बहुत कठिनाई से ही उनको पकड़ अपने पास रख सकी थी।

"अब वह मेरे पति हैं और मेरी उनसे तीन सन्तान हैं। उस रात के अनुभव पर ही मैंने राजकुमारी को कहा था कि उसे वहाँ नहीं जाना चाहिए।"

कादम्बिनी यह सब जानती थी। उसने अध्यापिका से कहा, "वह तो दुर्गा भवानी बनने गई थी। इससे वह उपासना करने वालों में नहीं थी। वह कहती थी और मैंने रात वहाँ से आने पर ही उसे देखा था कि उसने मद्य नहीं पी हुई थी।"

"इससे तो उसने वहाँ की सब अव्यवस्था देखी होगी।"

"हाँ, तनिक उससे पूछना कि उसने वहाँ क्या देखा है और कैसा अनुभव किया है।"

"पूछूँगी।"

अध्यापिका चन्द्रावती ने आगे कहा, "हमारा यत्न यह होना चाहिए कि वह इस सबको ऐसे भूल जाए जैसे कि स्वप्न में देखी बात भूल जाया करती है।"

कादम्बिनी इस स्वप्न की बात पर मुस्कराई। वह जानती थी कि दस–ग्यारह वर्ष व्यतीत होने पर भी वह स्वयं तो उसे भूल नहीं सकी और उस बच्ची से भूलने के लिए कहती है।

: 6 :

मध्याह्न के भोजनोपरान्त ही माँ और बेटी में पृथक् में बात हो पाई। भोजन समाप्त कर कादम्बिनी ने दुर्गा से कहा, "मेरे साथ आओ।"

वह दुर्गा को अपने शयनागार में ले गई। दुर्गा समझ रही थी कि उसे पूजा का सब वृत्तान्त बताना होगा। इससे पहले उसकी अपनी अध्यापिका से बहुत लम्बी बातचीत हो चुकी थी।

माँ ने उसको अपने सामने बिठाकर पूछा, "दुर्गा! अब बताओ। शिवरात्रि महोत्सव कैसा लगा है?"

दुर्गा ने कहा, "माँ! पहले तो वहाँ पहुँचते ही मुझे गरम जल से स्नान

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कराया गया। पुजारिन ने स्नान में मेरी सहायता की थी। तदनन्तर मेरे शरीर पर सुगन्धित पदार्थों का लेप किया गया और देवी के योग्य वस्त्र तथा भूषण पहना नगर–भर में मेरी सवारी निकाली गई। दर्शकों की बहुत लम्बी–चौड़ी भीड़ थी। पुजारिन कहती थी कि एक लाख से ऊपर लोग थे। उसका कहना था कि राजकुमारी को देखने के लिए राजधानी से भी बहुत लोग गए थे। पूर्ण मार्ग–भर हर–हर महादेव, भैरव बली और दुर्गा भवानी का जय–जयकार होता रहा। लोग मुझ पर पुष्प–वर्षा कर रहे थे। फूलों से रथ भर गया था।

"तदनन्तर लोग मेरे ऊपर और भैरव की मूर्ति पर रजत, स्वर्ण और ताम्र चढ़ाते हुए मेरे आगे से गुजरते जाते थे। रात एक प्रहर तक यह चलता रहा। इसके उपरान्त पूजा आरम्भ हुई। मुझे पुनः स्नान कराया गया। इस बार मुझे वस्त्र नहीं पहनाए गए। पाटल के फूलों की एक बहुत बड़ी माला पहना मुझे नग्न ही पूजा–गृह में ले जाया गया। यदि मुझे पहले न बताया होता तो मैं उस अवस्था में वहाँ कभी नहीं जाती। साथ ही पुजारिन मेरे साथ थी और मुझे यह कहकर मेरा उत्साह बनाए हुए थी कि मैं देवी हूँ और मुझे डरना नहीं चाहिए। एक घण्टा–भर मुझे वहाँ खड़ा रहना पड़ा और भक्त जन मेरे सामने खड़े भैरव के स्तोत्र पढ़ते रहे।

"अब मुझे भैरव की मूर्ति के समीप बिठा दिया गया और भैरव की मूर्ति के एक ओर पुजारी तथा दूसरी ओर पुजारिन हाथों में भयानक भैरव दण्ड लिए खड़े हो गए। उन दण्डों पर कील लगे थे।

"भक्तजन खाने–पीने लगे। मेरे सम्मुख भी सोने के बरतनों में भोजन और मद्य लाई गई, परन्तु पुजारिन ने संकेत कर दिया कि बहुत कम खाऊँ और मद्य न पीयूँ।

"पीते–पीते ही भक्तजन एक–दूसरे से कल्लोल करने लगे थे। वे सबकुछ ऐसा कर रहे थे जो मैंने पहले कभी नहीं देखा था।

"मैंने जब अध्यापिकाजी को बताया तो वह कहती थीं कि ऐसा पति–पत्नी विवाह के उपरान्त करते हैं।"

"विवाह को तो सब पसन्द करते हैं।" महारानी जी ने कहा और पूछ लिया, "तो तुमको यह भला प्रतीत हुआ था?"

"मेरी तो समझ में ही नहीं आया कि वे क्या कर रहे थे। पुरुष–स्त्री भूमि पर लोट–पोट हो रहे थे। मद्य के नशे में कुछ बोलते और गाते भी थे। यदि यह विवाह है तो माँ, मैं विवाह नहीं कराऊँगी।"

"नहीं। यह विवाह नहीं था। यह तो कुछ पशुपन हो सकता है। चन्द्रावती ने ठीक नहीं बताया।"

"हाँ! वह यह कह रही थीं कि दोनों में अन्तर भी है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"क्या अन्तर बताया है?"

"कह रही थीं कि विवाह में पति और पत्नी एक–एक होते हैं, परन्तु वहाँ तो अनेक पति–पत्नी थे और अस्थिर थे। इस कारण यह विवाह से बहुत घटिया था।

"मैंने अध्यापिका बहनजी से पूछा था, 'तो उस घटिया बात को देखने के लिए मुझे वहाँ क्यों भेजा गया था?'

"बहनजी ने बताया था कि इस प्रश्न का उत्तर मुझे माताजी से पूछना चाहिए। वह कह रही थीं कि वह नहीं जानतीं कि मुझे वहाँ क्यों भेजा गया था।"

कादम्बिनी ने गम्भीर भाव बना कहा, "हाँ! यह बात अध्यापिका नहीं जानती। यह इस कारण कि वह राजपरिवार से सम्बन्धित नहीं।"

"राजपरिवार का मेरे भैरव–उपासना में जाने से क्या सम्बन्ध है?"

"देखो दुर्गा! मैं तुमको एक महान् रहस्य की बात बताती हूँ। हम राजपरिवार के सब लोग पूर्वजन्म के बहुत पुण्य–कर्मों के फल से इस परिवार में उत्पन्न हुए हैं। इस कारण हमें शरीर, मन और बुद्धि–विशेष मिली होती है। देश के अन्य सब नागरिकों से हमको सुख–सुविधा अधिक मिलती है। इस सबकुछ के प्रतिकार में हमारा कुछ कर्तव्य भी है। वह कर्तव्य हमारे पूर्वजों में से एक महान् विद्वान् ने इस प्रकार वर्णन किया है–

'परित्राणाय साधुनाम् विनाशाय च दुष्कृताम्।'

"देश के भले लोगों की रक्षा के लिए और दुष्टजनों के विनाश के लिए हमारा जन्म होता है।

"इसी महापुरुष ने यह भी बताया है कि राजा लोगों का जन्म 'अभ्युत्थानमधर्मस्य' होता है। इस दुष्कर कार्य को करने के लिए हमें कुछ ऐसी बातें भी करनी पड़ती हैं जिनको सामान्य लोग समझ नहीं सकते।"

"पर माँ! यही तो पूछ रही हूँ कि मेरा उपासना में भेजने से पिताजी का उक्त कर्तव्य किस प्रकार पूर्ण हुआ है?"

"जानती हो तुम्हारे पिता और देश के नरेश आजकल कहाँ गए हुए हैं?"

"युद्ध लड़ने गए हुए हैं।"

"क्यों लड़ने गए हुए हैं?"

"हमारे देश पर पड़ोसी राज्य ने आक्रमण कर दिया है। वह प्रजाजनों को लूट रहा है और उनपर बहुत–से अमानुषिक अत्याचार कर रहा है।"

"हाँ, तुमको ठीक ही बताया गया है। वहाँ का राजा दुष्ट है। उससे अपनी प्रजा की रक्षा करने के लिए युद्ध हो रहा है। इस रक्षा–कार्य में अपनी प्रजा की सहायता की आवश्यकता है। इस कारण राजा के लिए यह आवश्यक हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाता है कि वह अपनी प्रजा का रंजन भी करता रहे। सामान्य प्रजा की सहायता के बिना राज्य के भले लोगों की रक्षा नहीं हो सकती और उन लोगों का रंजन आज के युग में इसी प्रकार होता है। वह तुमने किया है।"

"माँ! तुम नहीं जानतीं कि वहाँ क्या हुआ है। यदि तुम्हारी और पिताजी की आज्ञा न होती तो मैं उस बात को देखते ही वहाँ से उठकर भाग आती।"

महारानी ने मुस्कराते हुए पूछ लिया, "क्या हुआ था?"

"एक स्त्री अधिक मद्य पी जाने से कै करने लगी थी। सब खाया–पीया उसने उलट दिया था। उसे उलटी करते देख एक अन्य पुरुष ने उसकी उलटी को चाटना आरम्भ कर दिया। इसे देख तो मेरा चित्त ही मचलने लगा। यदि मैंने कुछ भी खाया होता तो मैं भी उलट देती।"

"और जानती हो, वह पुरुष क्या समझकर उसे चाट रहा था?"

"क्या समझ रहा था?"

"वह समझ रहा था कि इससे उसके लिए स्वर्ग के द्वार खुल रहे हैं।"

"बहुत विचित्र है।"

"हाँ! और इसी प्रकार के लोग एक लाख की संख्या में महाराज की जय–जयकार करते हुए अपने जीवन की आहुति देने के लिए और अपने देश की रक्षा के लिए युद्ध लड़ने गए हुए हैं। भला हम उनके मनोरंजन में किस प्रकार बाधा बन सकते हैं?"

"माँ! यदि राज्य मेरे हाथ में हो तो मैं इस प्रकार की उपासना को राज्य–नियम से वर्जित करा दूँ।"

"इसी कारण तो राज्य तुम्हारे हाथ में नहीं है। लोगों में धर्म का प्रचार करना राजा का काम नहीं है।"

"तो यह किसका काम है?"

"यह ब्राह्मण वर्ग का काम है। देश का दुर्भाग्य यह है कि किसी ऐतिहासिक कारण से यहाँ का ब्राह्मण वर्ग मन और बुद्धि से हीन हो गया है। उसने अपना धर्म–पालन छोड़ दिया है। यदि हम भी अपना धर्म–पालन करना छोड़ दें तो देश और जाति रसातल को चली जाएगी।

"हम अपने धर्म का पालन सामान्य जनता के सहयोग के बिना नहीं कर सकते। इस कारण हमें उनके मनोरंजन में सहयोग देना पड़ता है।"

दुर्गा ठीक–ठीक नहीं समझ सकी। इतना तो वह समझ गई कि राजा को अपना कर्तव्य पालन करने के लिए लोगों को प्रसन्न करना होता है और उसके लिए इस प्रकार की उपासनाओं की स्वीकृति देनी पड़ती है। फिर भी स्वयं को इस प्रकार की उपासना में भेजा जाना उसकी समझ में नहीं आया।

महारानी ने चन्द्रावती से कहा था कि वह दुर्गा से बात कर पता करे कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भैरव–उपासना देखने का प्रभाव उसके मन पर क्या हुआ है? अतएव उसी सायंकाल चन्द्रावती महारानी जी से मिलने आई और उसने राजकुमारी से अपने वार्तालाप का वर्णन करते हुए कहा, "महारानी जी! भैरवीचक्र किसी कुमारी के लिए उचित स्थान नहीं है।"

"परन्तु बहुत पुरातन काल से कुमारी–पूजन होता रहा है।"

"हाँ! परन्तु पूजन के यह अर्थ कैसे हो गए कि उसे नग्न कर उसके भग को नमस्कार किया जाए? पूजन का अर्थ तो सत्कार करना अथवा किसी के गुणों का वर्णन करना होता है। इससे भी अधिक एक निरीह बालिका के सामने वह सब–कुछ किया जाए जिसे न तो वह समझती है और जिसके लिए न वह इच्छा करती है, यह बहुत अनर्थकारी हो सकता है।"

"परन्तु चन्द्रा बहन! इसमें हम लोग क्या कर सकते हैं? राजा का कर्तव्य शिक्षक बन जाना नहीं। तुम लोग समाज में गुरु–पद पर सुशोभित हो। तुम इस प्रकार की उपासनाओं के विरुद्ध जनमत तैयार क्यों नहीं करते?"

"परन्तु हमारे पास साधन भी तो नहीं हैं। हम, मेरा अभिप्राय है कि ब्राह्मण वर्ग इस पूर्ण जन–समुदाय को कैसे शिक्षा दे सकता है?"

"जैसे महात्मा बुद्ध ने देश के जनमानस का मुख मोड़ दिया है।"

महारानी जी को एक बौद्ध गुरु मिल चुके थे। उन्होंने महारानी को महात्मा शाक्य मुनि गौतम का जीवन–चरित्र बताया था।

चन्द्रावती ने नाम तो महात्मा बुद्ध का सुना था, परन्तु उसने उसके कार्य के विषय में अभी तक कुछ नहीं सुना था। इस कारण उसने पूछ लिया, "महारानी जी! उसने क्या किया था?"

"अब जब उनके शिष्य नारायण जी आएँगे तो उनका उपदेश सुनने के लिए तुम्हें भी बुला लूँगी। वह कहते हैं कि महात्मा जी ने अकेले ही देशभर में घूम–घूमकर क्रान्ति उत्पन्न कर दी थी।"

चन्द्रावती ने कहा, "महारानी जी! मुझे बुला लीजिएगा। मैं अनुभव तो तब से ही करती हूँ जब मैं भैरवीचक्र में गई थी, परन्तु इसका प्रतिकार नहीं जानती और न ही यह समझती हूँ कि ब्राह्मण सन्तान होने से मेरा क्या कर्तव्य है।"

"मैं समझाती हूँ। यह काम इतना कठिन नहीं जितना कि हमारे ब्राह्मण लोग समझ रहे हैं। वास्तव में इन उपासनाओं में जाने वाले बहुत ही कम संख्या में हैं। बताओ, जिस दिन तुम भैरवीचक्र में गई थीं, उस दिन वहाँ कितने लोग थे?"

"स्त्री–पुरुष सब मिलाकर तीस–चालीस से अधिक नहीं थे।"

"और जानती हो कि राजधानी की जनसंख्या कितनी है?"

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"सुना है कि तीन लाख के लगभग है।"

"हाँ। और उस रात कितने मन्दिरों में भैरवीचक्र चल रहा था?"

"तब तो ज्ञात नहीं था, परन्तु अब मैं जानती हूँ कि सारी राजधानी में तीन अथवा चार भैरव मन्दिर हैं और सब में भैरवीचक्र नहीं किए जाते।"

"तो इतने बड़े नगर में सौ–दो सौ से अधिक लोग नहीं जिनकी मनोवृत्ति इतनी विकृत है। परन्तु साम्प्रदायिकता की स्वतन्त्रता के नाते हम, मेरा अभिप्राय है कि राज्यसत्ता इसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकती। किसी एक छोटे से भी छोटे सम्प्रदाय में राज्य हस्तक्षेप करे तो सब प्रजा ही हमारे विरुद्ध हो जाएगी।"

चन्द्रावती यह नहीं जानती थी कि महाराज भी भैरवीचक्रों में जाते रहते हैं और उनका वहाँ जाना प्रजा के रंजन के अतिरिक्त नहीं होता। इस कारण वह बौद्ध गुरु के उपदेश की प्रतीक्षा करने लगी।

: 7 :

कादम्बिनी दुर्गा के मन पर सुनन्द के प्रभाव को देखकर चिन्ता अनुभव कर रही थी। वह जानना चाहती थी कि यह कौन है? किसकी सन्तान है? उसका मानसिक विकास कितना है और उसको शिक्षा–दीक्षा कौन दे रहा है? इसी कारण उसने सुनन्द द्वारा भूरिश्रवा को बुला भेजा था। अगले दिन वह आया और महारानी से मिला तो औपचारिक वन्दना तथा आशीर्वाद के उपरान्त कादम्बिनी ने पूछ लिया, "सुनन्द, जो दुर्गा को छोड़ने आया था, कौन है?"

"क्यों? यह किसलिए पूछ रही हैं? उसने किसी प्रकार की अशिष्टता की थी क्या?"

"ऐसी कोई बात नहीं।" कादम्बिनी का कहना था, "वह ओजस्वी बालक प्रतीत हुआ है। वह अवश्य किसी श्रेष्ठ व्यक्ति की सन्तान होगा। मैंने उससे उसके पिता का नाम पूछा था। वह तो मौन रहा, परन्तु दुर्गा ने बताया है कि वह नीला का देवों के देव महादेव की सन्तान है। मैं जानती हूँ कि वह नीला की सन्तान नहीं हो सकता। नीला की आयु इस समय बाईस वर्ष की है और वह कुमार चौदह–पन्द्रह वर्ष का लगता था।"

"नहीं, इतना बड़ा तो नहीं। हाँ, तेरह पार कर चुका है। फिर भी वह नीला की सन्तान नहीं हो सकता। नौ वर्ष की कन्या पुत्र को जन्म नहीं दे सकती।"

"तो वह किसकी सन्तान है और किस भाग्यवान से है?"

"महारानी जी! अपने पिता का नाम दुर्गा को उसने बताया है और आप

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो जानती ही हैं कि ऐसे बालक को ही महादेव भगवान् का पुत्र कहा जाता है जिसका बीजारोपण भैरवीचक्र में हुआ हो। वहाँ पिता का नाम जानना अति कठिन होता है।''

''इसकी माँ कौन थी?''

''वह नागकन्या थी। वह एक वर्ष ही भैरवीचक्र में पूजित हुई थी। उसके उपरांत वह रजस्वला होने लगी तो वह उपासनाओं में भाग लेने लगी थी। एक उपासना में उसके गर्भ स्थित हो गया। वह मेरे पास उसके निवारण के लिए उपचार पूछने आई थी। मैंने उसे समझा–बुझाकर हत्या करने से मना किया था। दुर्भाग्य से पुत्र को जन्म देने के एक ही मास उपरान्त उसका देहान्त हो गया था। बच्चा पहले नीला की माँ के घर रहा और तदुपरान्त नीला की देखरेख में पला है।''

''लड़के की काया बहुत ही सुन्दर और ओजस्वी है। उसका मुख देखने से और उसके बातचीत के ढंग से वह अति प्रखर बुद्धिवाला प्रतीत होता है। साथ ही मुझे कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि सुनन्द ने राजकुमारी पर प्रभाव उत्पन्न किया है।''

भूरिश्रवा ने मुस्कराते हुए कह दिया, ''लड़का राजपरिवार में सम्मिलित होने के योग्य है।''

''उसकी शिक्षा का क्या प्रबन्ध है?''

''अभी तो वह मुझसे ही पढ़ता है। मुझे और भी बहुत–से काम होने से मैं इसकी शिक्षा का समुचित प्रबन्ध नहीं कर सका। मैं विचार कर रहा था कि इसे कौशाम्बी अथवा काशी में पढ़ने भेज दूँ।''

''तो उसे यहाँ राजधानी में भेज दो। मैं उसका कहीं यहाँ से बाहर प्रबन्ध कर दूँगी।''

''नीला को कहकर भिजवा दूँगा।''

सुनन्द कई दिन उपरान्त आया। महारानी भी राजधानी में अन्य कामों में व्यस्त रहने के कारण उसके विषय में भूल चुकी थी।

सुनन्द आया तो सेविका ने सूचना दी कि भैरवपुरी का सुनन्द द्वार पर खड़ा है। महारानी ने राजप्रासाद के अतिथि–गृह में उसे ठहराने की आज्ञा दे दी।

राज्य के तीन अतिथि–गृह थे। एक तो राजप्रासाद के साथ सम्बद्ध था। दूसरा राजप्रासाद से असम्बद्ध, परन्तु इसके प्रांगण में ही था। तीसरा नगर में बना था। यह सबसे बड़ा था। महारानी ने राजप्रासाद से सम्बद्ध 'देव' नाम वाले अतिथि–गृह में ही उसे ठहराया था। तीनों में भिन्न–भिन्न स्तर के अतिथि रखे जाते थे। उसे राजप्रासाद वाले देव अतिथि–गृह में दुर्गा के

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सुझाव पर ही रखा गया था। महारानी जी को दुर्गा का प्रस्ताव सुन विस्मय नहीं हुआ था। वह दुर्गा की उसमें रुचि से अवगत थी।

जब सेविका चली गई तो महारानी ने दुर्गा से पूछा, "उसमें तुम्हें क्या रुचि है?"

"अध्यापिका बहन उससे मिलना चाहती हैं, वे यहीं उससे मिल सकती हैं।"

"चन्द्रावती को इसके विषय में किसने बताया है?"

"मैंने उस रात का वृत्तान्त बताते हुए सुनन्द के विषय में भी बताया था। उसके उपरान्त भी एक दिन बहन जी से इसके विषय में चर्चा हुई थी। तब बहन जी ने कहा था कि वह कभी आएगा तो उससे मिलेंगी।"

सेविका के आने से पहले कादम्बिनी बच्चों को समझा रही थी। वह कह रही थी, "परमात्मा ने हमें राज्य–पद पर आसीन किया है। यह किसी प्रयोजन–विशेष से ही किया हो सकता है। इस कारण हमें उस कार्य को पूर्ण करना चाहिए।"

दामोदर का प्रश्न था, "परमात्मा ने कैसे हमको नियुक्त किया है? वह तो कहीं दिखाई नहीं देता।"

महारानी इसका उत्तर देना चाहती थीं कि सेविका आ गई। वह सुनन्द के आने का सन्देश दे और उसके विषय में आज्ञा ले चली गई तो दामोदर उठ खड़ा हुआ और माँ से बोला, "माँ! मैं अब जाना चाहता हूँ। मेरे मित्र मेरी प्रतीक्षा कर रहे होंगे।"

दुर्गा ने कहा, "भैया! सुनन्द को भी अपना मित्र बना लो।"

"इससे क्या होगा?"

"उससे बातें करने में तुम्हें भी रस आएगा।"

"एक दिन उससे मिलकर पता करूँगा। एक बात तो उस दिन ही पता चल गई थी कि वह आयु में मुझसे बड़ा है, परन्तु अभी धातुपाठ भी नहीं पढ़ा।"

"हाँ !" कादम्बिनी ने कह दिया, "उसकी शिक्षा का प्रबन्ध करने के लिए ही उसे यहाँ बुलाया है।"

दुर्गा ने पूछ लिया, "माँ! उसे कहाँ पढ़ने भेजोगी?"

"अभी निश्चय नहीं किया। दामोदर के अध्यापक से पूछकर बताऊँगी।"

"माँ! उसे भैया के अध्यापक जी से पढ़ने के लिए कह दो।"

कादम्बिनी देख रही थी कि दुर्गा उसे राजप्रासाद में ही रखने की कल्पना करने लगी है। दामोदर गया तो दुर्गा भी उठ खड़ी हुई। माँ ने पूछ लिया, "कहाँ जा रही हो, दुर्गा?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं भी अपनी सखियों से मिलने जा रही हूँ।"

इस पर कादम्बिनी भी उठी और अपने आगार में चली गई। दुर्गा अपने आगार में गई तो वहाँ उसकी सहेली नीति आई हुई थी। नीति दुर्गा से एक वर्ष बड़ी थी और वह अनुभव कर रही थी कि उसके माता–पिता उसका लड़कों से मेलजोल पसन्द नहीं करते।

नीति महामन्त्री विप्रबन्धु की लड़की थी। मन्त्रियों को राजप्रासाद के प्रांगण में ही निवास स्थान मिले हुए थे। इससे मन्त्रियों के परिवार परस्पर मिलते रहते थे। बच्चे भी आपस में मेलजोल रखते थे। दुर्गा की दो अन्य सहेलियाँ भी थीं। वे अभी नहीं आई थीं।

दुर्गा ने अपने आगार में प्रवेश करते ही पूछा, "नीति! कब आई हो?"

"अभी–अभी आई हूँ। सेविका से पता चला था कि तुम महारानी जी से बात कर रही हो। इस कारण तुम्हारी प्रतीक्षा करने यहाँ पर बैठी ही थी कि तुम आ गई हो।"

"हाँ, सखी! भैरवपुरी का सुनन्द आया है और मैं उससे मिलना चाहती हूँ।"

"कहाँ है वह?" नीति ने पूछ लिया।

"वह देव अतिथि–गृह में ठहरा है।"

"परन्तु मैं वहाँ नहीं जाऊँगी। किसी सेविका को भेजकर बुला लो।"

"नहीं। सेविका द्वारा यह काम नहीं होगा।"

"तो कल भैया दामोदर के द्वारा उसको बुलवा लेना।"

नीति ने जब अतिथि–गृह जाने से इन्कार किया तो दुर्गा ने पूछ लिया, "क्या तुम अतिथि–गृह जाने से डरती हो?"

"नहीं, डरती नहीं। माँ ने कहा है कि मेरा अब विवाह होगा। इसलिए जहाँ पर पुरुष हों, वहाँ मुझे नहीं जाना चाहिए।"

दुर्गा की हँसी निकल गई। उसे हँसते देख नीति ने पूछ लिया, "राजकुमारी! हँसी क्यों हो?"

"तुम्हारे विवाह की बात सुनकर। उस दिन अध्यापिका बहन बता रही थीं कि उपासना में जो कुछ देखा था, वह ही विवाह में होता है। इसी से हँसी आ गई थी।"

"क्या देखा था वहाँ?"

"सब पुरुष और स्त्री", राजकुमारी ने हाथ ऊपर–नीचे कर कह दिया, "इस प्रकार लोट–पोट हो रहे थे।"

नीति का मुख लज्जा से लाल हो गया। दुर्गा ने विस्मय में पूछ लिया, "सखी! मुख लाल क्यों हो गया है?"

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"फिर बताऊँगी।"

"मैं सुनन्द से मिलना चाहती हूँ!" दुर्गा ने बात बदलकर कह दिया।

"दामोदर से कहो! मेरी माँ भी कहा करती है कि जब कोई लड़का मिलने आए तो अपने भैया के सामने मिल सकती हूँ।"

"पर क्यों?" दुर्गा ने पूछ लिया।

"लड़कों से विवाह होता है।" नीति ने कारण बता दिया।

"किसलिए विवाह होता है? मैं तो उपासना वाला विवाह पसन्द नहीं करती।"

"माँ कहती हैं कि विवाह के उपरान्त बच्चे होते हैं। जैसे हम अपने माता–पिता के बच्चे हैं वैसे ही विवाह करने पर हमारे भी हो सकते हैं।"

दुर्गा बच्चों की कल्पना करने लगी थी। इससे उसके मुख से अनायास निकल गया, "तब तो बहुत मजा होगा। कैसे होंगे बच्चे?"

"मैंने अपनी बहन सुभद्रा से पूछा था कि उसका बच्चा कैसे हुआ है?"

"तो उसने क्या बताया था?"

"कहती थी कि यह बताना मना है।"

"किसने मना किया है?"

"कहती थी कि परमात्मा ने।"

दुर्गा मुख देखती रह गई।

इस समय राजकुमारी की दोनों अन्य सहेलियाँ आ गईं। वे दुर्गा से कुछ कम आयु की थीं। इस कारण विवाह–सम्बन्धी बात बन्द हो गई।

: 8 :

दामोदर अपने कमरे में गया तो उसके मित्र तब तक नहीं आए थे। वह तो परमात्मा की बात न सुनने के लिए माँ से छुट्टी ले आया था। अपने कमरे में आकर वह कुछ देर तक तो मित्रों के आने की प्रतीक्षा करता रहा। जब कोई नहीं आया तो वह कुछ विचार कर सुनन्द से मिलने अतिथि–गृह में जा पहुँचा।

वहाँ के सेवक से पता कर कि भैरवपुरी से आया लड़का कहाँ ठहरा है, वह उसके आगार में जा पहुँचा। सुनन्द अपने यात्रा के वस्त्र उतारकर घर पर पहनने योग्य वस्त्र पहन रहा था। उसके शरीर का ऊपर का भाग नंगा था। दामोदर ने उसके सुडौल और यथानुपात शरीर को देखा तो देखता ही रह गया।

सायंकाल का समय था और कमरे में नियमानुसार चारों ओर बत्तियाँ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जलाई जा चुकी थीं। इससे वहाँ पर्याप्त प्रकाश था और सुनन्द का शरीर भलीभाँति दिखाई दे रहा था। राजकुमार दामोदर उसको देख ही रहा था कि सुनन्द की दृष्टि द्वार की ओर चली गई और उसने राजकुमार को खड़ा देख लिया।

सुनन्द ने पूछा, "राजकुमार! मेरे आने का समाचार कहाँ से पा गए हो?"

"जब सेविका तुम्हारे आने का समाचार देने आई थी, मैं माताजी के पास बैठा था।"

"राजकुमार! आपने यहाँ आकर दर्शन दिए, इसके लिए धन्यवाद।"

"वैसे तो तुमसे मिलने के लिए नहीं आने वाला था, परन्तु दुर्गा ने कहा है कि मैं तुमको अपना मित्र बना लूँ।"

"कहाँ है राजकुमारी?"

"अपनी सहेलियों में बैठी मनोरंजन कर रही है।"

"मैं दुर्गा जी के दर्शन करना चाहता हूँ, परन्तु अभी नहीं। उनकी सहेलियों में नहीं। फिर कभी।"

"किसलिए दर्शन करना चाहते हो?"

"राजकुमार! तुम उनसे मिलने की इच्छा करते हो अथवा नहीं?"

"करता हूँ।"

"किसलिए?"

"वह मेरी बहन है। बहन से भाई का स्नेह होता ही है।"

"मेरी तो कोई बहन है नहीं और मैं जानता नहीं कि स्नेह क्या होता है। फिर भी जब से मैंने उसे देखा है, उससे पुनः मिलने को जी चाहता है।"

"तो उससे मिल लेना।"

"कहाँ? मैं तो जानता नहीं कि आपके राजप्रासाद का गोरखधन्धा क्या है–किधर से जाऊँ और किधर पहुँच जाऊँ!"

"मैं तुम्हें कभी ले चलूँगा।"

"अब तो मैं आया ही हूँ। पुजारी जी ने कहा है कि अब मुझे यहीं रहना होगा। मेरी शिक्षा का प्रबन्ध महारानी जी करेंगी।"

"अभी तुम वस्त्र पहन मेरे आगार में चल सकते हो। वहाँ मेरे अन्य मित्र भी आ रहे हैं।"

सुनन्द ने पुनः घर से बाहर जाने के वस्त्र पहन लिए और राजकुमार के साथ उसके आगार में पहुँच गया।

दामोदर के पाँच–छः मित्र वहाँ आ गए थे। सब बैठ गए। उनमें दामोदर के अध्यापक का सुपुत्र नित्यानन्द भी था। वह दामोदर के आने से पहले शतरंज बिछाकर दामोदर की प्रतीक्षा कर रहा था।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नित्यानन्द ने कहा, "दामोदर भैया! मैंने कल रात जैसी ही बाजी लगा दी है।" एक कागज पर बाजी की स्थिति लिखी थी। राजकुमार ने वह देखी और मोहरे उसी के अनुसार रखे देखे तो नित्यानन्द के सामने बैठकर खेलने लगा।

सब मित्र नवागन्तुक सुनन्द की ओर देख रहे थे, परन्तु शिष्टाचार के नाते कोई पूछ नहीं रहा था कि वह कौन है।

दामोदर ने भी परिचय कराने का कष्ट नहीं किया और शतरंज खेलने लगा। चाल दामोदर की थी और नित्यानन्द दामोदर की चाल की प्रतीक्षा करने लगा था।

सुनन्द ने कभी किसी को शतरंज खेलते नहीं देखा था और वह दोनों को खेलते देख चालों को समझने का यत्न कर रहा था।

खेल चलता रहा। पहले दिन की लगी बाजी आज भी भोजन के समय तक समाप्त नहीं हुई। सुनन्द विस्मय कर रहा था कि एक-एक चाल के पूर्व घड़ी-घड़ी-भर विचार किया जा रहा था।

जब भोजन का समय हुआ तो पुनः कागज पर मोहरों की स्थिति अंकित कर ली गई और शतरंज को लपेटकर उसके डब्बे में रख दिया गया। अब दामोदर ने सुनन्द का परिचय कराया। "यह भैरवपुरी का रहनेवाला सुनन्द है। मैं इसे अपना मित्र बनाने के लिए अपने आगार में ले आया था।"

नित्यानन्द ने पूछा, "इनके पिताजी वहाँ क्या करते हैं?"

दामोदर को हँसी सूझी। उसने कह दिया, "इनके पिता देवों के देव महादेव जी हैं।"

इसका अर्थ न समझते हुए सब सुनन्द का मुख देखने लगे।

: 9 :

महाराज जलौक दो मास से कुछ अधिक दिन राजधानी से अनुपस्थित रहकर वापस लौट आए। तब तक कम्बोज के बन्दी सैनिक न्यायाधीश के सम्मुख उपस्थित किए जा चुके थे। सैनिकों को निर्दोष घोषित कर न्यायाधीश का यह निर्णय दिया जा चुका था कि यदि वे कश्मीर के नागरिक बनकर रहना चाहें तो उनको मुक्त किया जा सकता है। उनका देश अब कश्मीर राज्य का अंग बन चुका है। इस विजय के कारण वे कश्मीर के नागरिक हैं और यदि वह नागरिक बनना स्वीकार नहीं करते तो वे देशद्रोही ही समझे जाएँगे।

इस घोषणा पर बहुत-से बन्दियों ने कश्मीर का नागरिक बनना स्वीकार किया तो उनको मुक्त कर पुनः कम्बोज भेज दिया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

फिर भी आधे के लगभग बन्दी अभी ऐसे थे जो कश्मीर राज्य की नागरिकता स्वीकार नहीं कर रहे थे। वे लोग परस्पर गोष्ठियाँ कर रहे थे। जब भी उनमें से कोई कश्मीर की नागरिकता स्वीकार करता था, वह मुक्त कर दिया जाता था।

इन बन्दियों में कम्बोज का भूतपूर्व राजा नरकण्ट भी था। वह एक सामान्य सैनिक के वेष में अपने शिविर से भागता हुआ पकड़ा गया था। यद्यपि उसके कई सहबन्दियो को सन्देह था कि वह नरकण्ट ही है, परन्तु उसके निःशंक भाव में अपने को महाराज के सामान्य अंगरक्षकों में से एक होना बताने पर सब चुप रह जाते थे।

न्यायाधीश के सम्मुख जब अन्य सैनिकों के नाम और धाम लिखे जा रहे थे तो नरकण्ट ने अपना नाम पावित बताया। उसे अपना यह नाम बताते सुन उसके साथियों को भी विश्वास हो गया कि वह कम्बोज नरेश नरकण्ट नहीं। उनका विचार था कि इस स्थान पर उसे मिथ्या नाम बताने का कोई कारण नहीं था।

जब महाराज जलौक कश्मीर की राजधानी श्रीनगर पहुँचे तो उन्होंने शेष बचे हुए बन्दियों को अपने समक्ष बुलाकर समझाया। महाराज का कहना था कि कम्बोज विजय हो गया। मेरा वहाँ की प्रजा से द्वेष नहीं है। प्रजा ने स्वेच्छा से कश्मीर पर आक्रमण नहीं किया था। उसने तो अपने नरेश की आज्ञा का पालन किया था। मैं यदि नरकण्ट से श्रेष्ठ व्यवहार नहीं तो कम–से–कम वैसी ही सहानुभूति और सहायता का व्यवहार तो अवश्य करूँगा।

महाराज जलौक ने एक बात और कह दी। उन्होंने कहा, ''जो भी सैनिक मेरी सेना में भरती होना चाहेगा, उसे मैं भरती कर लूँगा और उसका उतना ही अधिकार हो जाएगा जितना कि किसी भी कश्मीरी सैनिक का हो सकता है। यदि वे अपने शौर्य–कार्य के लिए विख्यात होंगे तो उनको भी सेना में उचित अधिकारी बना दिया जाएगा।''

इस सुविधा पर तो सब सैनिकों ने महाराज की निष्ठावान प्रजा बनकर रहने का वचन दे दिया। एक सैनिक अभी भी इस प्रकार की सौगन्ध लेने के लिए तैयार नहीं हुआ।

जलौक ने उसे अपने निजी आगार में बुलाकर पुनः समझाने का यत्न किया। वह बन्दी कहने लगा, ''जलौक, मैं कम्बोज नरेश नरकण्ट हूँ और मैं तुम्हारी अधीनता स्वीकार नहीं कर सकता।''

जलौक ने बन्दियों की सूची में उसका नाम देखा। वहाँ उसका नाम पवित लिखा था। जलौक ने कहा, ''परन्तु तुमने अपना नाम तो पवित लिखाया है।''

''वह मिथ्या नाम था। मुझे अपने सैनिकों के सम्मुख अपने को सामान्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सैनिकों के वेष में भागने वाला प्रकट करते लज्जा आती थी। अतः बन्दीगृह में और न्यायाधीश को मैंने उनके समक्ष अपना मिथ्या नाम लिखाया था।''

जलौक विचार कर रहा था कि नरकण्ट का वेष बदलकर भागना अधिक भीरुता थी अथवा अपने को दो मास तक झूठे नाम से छुपाकर अपनी ही प्रजा में बैठे रहना अधिक भीरुता है? वह दोनों ही व्यवहार कायरता के समझता था। फिर भी विचारकर वह यह समझा था कि युद्ध में शत्रु के हाथ पड़ जाने से बचने के लिए वंचना का वेष बना लेना इतनी बड़ी भीरुता नहीं कही जा सकती जितनी कि बन्दीगृह में भी अपनी मिथ्या नीति को अपनी निष्ठावान प्रजा के सम्मुख न स्वीकार करना है। वह समझा था कि प्रथम कार्य तो नीति का सूचक भी हो सकता था, परन्तु नरकण्ट का दूसरा व्यवहार तो शुद्ध भीरुता और मूर्खता का सूचक है।

जलौक ने आज्ञा दे दी, ''देखो बन्दी! हमें यह विश्वास नहीं हो रहा कि तुम नरकण्ट हो। हम तुम्हारी स्त्री और पुत्रादि को यहाँ बुलाते हैं और यदि वह पहचान गए तो फिर तुम्हारे साथ क्या व्यवहार किया जाए, इसका निश्चय किया जाएगा। अभी तुम बन्दीगृह में ही रखे जाओगे।''

उसी रात भोजन के समय जलौक ने कादम्बिनी को इस बन्दी की बात बताई। अपनी आज्ञा में देर का कारण बताया तो कादम्बिनी ने पूछ लिया, ''यदि वह मिथ्यावादी सिद्ध हुआ तो इसके लिए क्या आज्ञा होगी?''

जलौक ने कहा, ''वह मिथ्यावादी तो है ही। प्रश्न यह है कि उसने मिथ्या वचन किस उद्‌देश्य से किया है। उसका यह व्यवहार मिथ्या होने के साथ ही घोर कायरता भी है। इस कारण एक कायर के निष्ठावान नागरिक बने रहने के वचन पर विश्वास नहीं किया जा सकता। फिर भी उसके मिथ्या कथन का उद्‌देश्य जानना आवश्यक है। यह एक षड्‌यन्त्र का श्रीगणेश भी हो सकता है।''

कादम्बिनी जलौक के युक्तियुक्त व्यवहार को समझकर प्रसन्न थी। उसने महाराज के समर से लौटने पर दुर्गा और सुनन्द की बात बताई और सुनन्द के दुर्गा के जीवन में पदार्पण की स्थिति का भी वर्णन किया। यह महाराज के समर से लौटने के दिन की बात थी।

कादम्बिनी ने बताया, ''पहले ही दिन मुझे सन्देह हुआ था कि दुर्गा इस लड़के से मोह करने लगी है। साथ ही मुझे यह भी पता चला है कि सुनन्द भी दुर्गा से लगाव प्रकट कर रहा है।''

कादम्बिनी ने बताया कि जब उसने भूरिश्रवा से सुनन्द के परिवार के विषय में और उसकी शिक्षा-दीक्षा के विषय में जानना चाहा तो वह सन्तोषजनक उत्तर नहीं दे सका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जलौक ने पूछ लिया, "अब वह लड़का कहाँ है?"

"मैंने उसे मार्तण्ड के विहार में भेज दिया है।"

"वहाँ क्या है?"

"समर पर जाने से पूर्व मैंने अपने एक नवीन गुरु की बात बताई थी। वह भदन्तनारायण जी हैं। उन्होंने दो वर्ष से वहाँ अपना आश्रम बनाया हुआ है। सुना है कि अब तो उस आश्रम में कई सौ शिष्य और उपासक एकत्रित हो गए हैं। उसे वहां आचार्यजी से पढ़ने के लिए भेजा है।"

"मुझे तुम्हारे इस आचार्य के विषय में कुछ भी ज्ञात नहीं। हाँ, इस सुनन्द को मैंने देखा है। वह भैरवपुरी में नीला के पुत्र के रूप में जाना जाता है। परन्तु मैं जानता हूँ कि वह उसका पुत्र नहीं है। वह उसकी माँ बनने की आयु से छोटी है और वह किसका पुत्र है? कोई नहीं कह सकता। सम्भवतः उसका बीजारोपण भैरवीचक्र में हुआ था। नीला का कहना है कि सुनन्द की माँ ने मरने से पहले स्वीकार किया था कि उसका भैरवीचक्र से बाहर किसी पुरुष से सम्पर्क नहीं हुआ था। इसी कारण नीला ने उसके पिता का नाम महादेव भगवान् घोषित कर रखा है।"

"मुझे सन्देह हो रहा है कि या तो वह आपकी सन्तान है अथवा किसी अन्य उच्चकुल से है।"

"मैं नहीं जानता कि जिस दिन उसकी माँ को गर्भ स्थित हुआ, मैं उपासना में उपस्थित था अथवा नहीं। उस समय मैं मद्य भी पीता था, इस कारण कह नहीं सकता कि उस विशेष दिन यदि मैं था तो क्या हुआ था।"

महारानी ने बताया, "जिस दिन मैंने सुनन्द को उसकी उच्च शिक्षा के लिए यहाँ बुलाया था, मुझे प्रतीत हो रहा था कि शायद वह आपका पुत्र है। फिर भी मैं इस बात का निश्चय किए बिना इसे प्रकट करना नहीं चाहती थी।

"मेरा अनुमान है कि उससे मेरा कोई सम्बंध नहीं है।"

"मुझे दामोदर ने बताया है कि घटनावश उसके आगार में सुनन्द और दुर्गा की भेंट हो गई थी। परन्तु दोनों ने दामोदर के सम्मुख होने से किसी प्रकार का वाणी अथवा व्यवहार में सीमोल्लंघन नहीं किया था। दामोदर तो बता नहीं सका कि दुर्गा का व्यवहार सुनन्द के प्रति कैसा था, परन्तु इस विषय पर दुर्गा और चन्द्रावती, उसकी अध्यापिका, में बातचीत हुई है और अध्यापिका का कहना है कि दुर्गा सुनन्द के लिए प्रबल आकर्षण अनुभव करती है परन्तु वह आकर्षण यौन–आकर्षण ही है, कहा नहीं जा सकता। वह अभी इस विषय में कुछ नहीं जानती।"

जलौक ने कहा, "मैंने लड़के को देखा है। वह सत्य ही सुन्दर और ओजस्वी दिखाई देता है। इस कारण यदि उसकी शिक्षा–दीक्षा उचित हो

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाए तो मैं उसका विवाह दुर्गा से होना अनिच्छित नहीं मानता।''

''परन्तु भैरवीचक्र में उत्पन्न बालक हमारा दामाद होगा? यह बात मस्तिष्क में समा नहीं रही। एक अज्ञात माता–पिता की सन्तान से राजसी परिवार में रक्त का सम्बन्ध, कुछ जँच नहीं रहा।''

''विवाह में तुम शरीर का सम्बन्ध ही मानती हो? शरीर तो भैरवीचक्र में बना हो सकता है, परन्तु जीवात्मा तो अजन्मा है। वह अनादि और अक्षर है। इससे उसका भैरवीचक्र से क्या सम्बन्ध हो सकता है?

''फिर भी संसार में कार्य तो शरीर, मन और बुद्धि ही करते हैं, और उन्हीं के निर्माण की बात हो रही है। इनमें भी बुद्धि और मन विशेष कारण हैं। ये शरीर का ही अंग हैं। मैं समझता हूँ कि जैसे शरीर सुन्दर और सबल है, वैसे मन और बुद्धि भी प्रबल होंगे।''

''यह देखने का विषय है। इसी कारण मैंने उसे आचार्य के पास भेज दिया है।''

''मैं उसे एक दिन उसके आश्रम में जाकर देखूँगा। उसके आचार्य से भी परिचय प्राप्त करना चाहूँगा।''

''उनसे तो यहाँ राजप्रासाद में भी मिला जा सकता है। वह प्रायः प्रति रविवार यहाँ आते हैं।''

जलौक ने विस्मय से कादम्बिनी की ओर देखकर पूछ लिया, ''क्या करने आते हैं?''

''राजप्रासाद के निवासियों को उपदेश देने।''

''राजप्रासाद के निवासियों में कौन–कौन हैं?''

''मुझसे लेकर अन्तो, सफाई करने वाली तक। सबको वह उपदेश देना चाहते हैं।''

''बिना इस बात की परीक्षा किए कि उसके उपदेश को समझने की सामर्थ्य किसमें है?''

''उसकी बातें इतनी सरल भाषा में होती हैं कि अनपढ़ व्यक्ति भी भली–भाँति समझ सकता है।''

जलौक ने बातचीत बदल दी। उसने कहा, ''कादम्बिनी, मुझे भी एक गुरु मिला है।''

''सत्य, महाराज?''

''हाँ! सेनाध्यक्ष विक्रम को तो तुमने देखा है। उसकी पत्नी सुन्दरी है।''

''तो आपने उसे अपना गुरु मान लिया है?''

''नहीं। वह अपनी योग्यता के कारण मेरी गुरु बन गई है। मानने न मानने का तो प्रश्न ही उपस्थित नहीं हुआ। योग्यता ने अपने अस्तित्व का दावा कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपना स्थान ले लिया है।"

"कहाँ पा गए हैं आप उसे?"

"विक्रम का गाँव कम्बोज से श्रीनगर के मार्ग पर ही था। मैं जब उस गाँव में से गुजर रहा था तो गाँव की पचास से अधिक स्त्रियाँ हमारा अभिनन्दन करने के लिए गाँव के चौराहे पर एकत्रित थीं। वे पुष्पमालाएँ लिये हुए थीं।

"उनके स्वागत के उपरान्त एक प्रौढ़ावस्था की स्त्री ने बताया, 'हम सबके पतिदेव इस समर पर गए हुए थे। उनके द्वारा महाराज की विजय के समाचार से हमें अति आनन्द अनुभव हुआ है। उसी के अनुरूप हम आपके द्वारा अपने पतियों का अभिनन्दन कर रही हैं।'

"मुझे उन स्त्रियों के मनोद्गारों को सुन अति प्रसन्नता हुई। मैं उस स्त्री के कहने का यह अर्थ समझा था कि मेरा और पूर्ण सेना का वे अभिनन्दन कर रही हैं। इससे वे अपने पतियों के प्रति अपनी श्रद्धा और उनके कार्य पर गर्व प्रकट कर रही हैं। उनकी देश और राजभक्ति को उनकी पतिभक्ति से एकरूप हुआ देख मुझे बहुत आह्लाद हुआ। मैंने उस प्रवक्ता का नाम और परिचय जानना चाहा तो एक अन्य स्त्री, जो अभी युवती ही प्रतीत होती थी उसी ने सबकी अग्रणी स्त्री का परिचय दे दिया, 'यह मेरे पति की माताजी हैं और कम्बोज के आयुक्त तथा सेनाध्यक्ष विक्रम की पत्नी हैं।'

"मुझे विक्रम जी की बात स्मरण आ गई और मैंने कहा, 'देवी! मुझे विक्रम जी ने एक बात बताई है और उनका कहना है कि वह बात उन्होंने आपसे जानी है। उनकी तथा आपकी उस बात ने कम्बोज के युद्ध में मुझे इस विजय की प्राप्ति सुगम कर दी है। इससे सहस्रों की हत्या होते–होते बच गई है।'

"मेरे इस कथन पर तो सब एकत्रित स्त्रियाँ मेरा मुख देखती रह गईं। मैंने अपने कथन का अभिप्राय समझाया। मैंने कहा, 'देवी जी ने अपने पति को युद्ध के लिए विदा करते समय यह कहा था कि यदि परमात्मा की सर्वव्यापकता अनुभव होने लगे तो वह प्राप्त हो जाता है और जिसे परमात्मा प्राप्त हो जाता है उसकी सदैव और सर्वत्र विजय होती है। "सेनाध्यक्ष विक्रम जी ने सेना में एक ऐसी योजना चलाई जिससे सेना के शैव उपासक भगवान् की मूर्तियों को, जो मन्दिरों में स्थापित थीं, अपने साथ ही अनुभव करने लगे और मेरी सेना और उनके द्वारा मैं तथा देश विजयी हो गए।' अतः मैं देवी जी को नमस्कार करता हूँ।'

"एक ने पूछ लिया, 'महाराज! कैसे यह अनुभव कराया था?'

"मैंने कह दिया, 'यह तो देवी जी विक्रम जी से ही जान सकेंगी। मैं तो देवी जी को गुरु–पद पर मानकर नमस्कार करता हूँ।'

"कादम्बिनी! मैं चला आया, और विचार करता हूँ कि कभी–कभी समय

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पर कही गई कोई उचित बात जातियों और मानव–समाज का वारा–न्यारा कर देती है। ऐसा कथन करने वाले ही गुरु–पद के अधिकारी होते हैं।''

कादम्बिनी ने कह दिया, ''महाराज! मेरे गुरु के गुरु भी कुछ ऐसा ही कह गए हैं और वह भी संसार और मानव–समाज का वारा–न्यारा करने वाले थे।''

''अच्छा! हम तुम्हारे गुरु से भी मिलेंगे और हमारे गुरु ने भी अपने गुरु का परिचय दिया है। मैं दोनों के दादा गुरुओं का मुकाबला करूँगा।''

''तो श्रीमती विक्रम जी ने भी अपने गुरु का परिचय दिया है?''

''हाँ! मेरे कहने पर कि मैं उसे गुरु–पद पर आसीन कर नमस्कार करता हूँ तो उसने कहा था, 'महाराज! मेरे भी एक गुरु हैं। आप उन्हीं की शरण में जाइए और वह आपका तथा आपके द्वारा पूर्ण देश का कल्याण करेंगे। वह हैं यदुवंशीय वासुदेव कृष्ण, मेरा अभिप्राय है उनका युद्ध के समय दिया प्रवचन भगवद्गीता से।'

''मैंने बचपन में आचार्य विद्यानिधि से भगवद्गीता पढ़ी थी, परन्तु भूल चुका था। अब पुनः उसका अध्ययन करूँगा।''

''मैंने भी बाल्यकाल में गीता पढ़ी थी, अब विस्मरण हो चुकी है। परन्तु मेरे वर्तमान गुरु कहते हैं कि कृष्ण एक मतिभ्रष्ट महापुरुष था।''

''ओह! तब तो तुम्हारे गुरुजी से मिलना आवश्यक हो गया है।''

: 10 :

जलौक के मन में आया कि आचार्य नारायण के रविवार के दिन राजप्रासाद में आने से पूर्व ही उसका पूर्ण वृत्तान्त जानना चाहिए। गुप्तचर वहाँ भेजे जा सकते थे, परन्तु उन द्वारा सूचना रविवार से पूर्व आ सकेगी और फिर जिस बात का ज्ञान वह स्वयं करना चाहता था, वह गुप्तचर पता कर सकेंगे अथवा नहीं, इसमें सन्देह था।

जिस दिन कम्बोज–बन्दियों का निर्णय हुआ था, वह बृहस्पतिवार था! इस कारण अगले ही दिन जलौक अश्व पर सवार हो मार्तण्ड विहार पर जा पहुँचा।

मार्तण्ड मन्दिर पर वह एक बार पाँच वर्ष पूर्व गया था। तब वह स्थान लगभग निर्जन ही था। मन्दिर में ज्योतिष विद्या का एक विद्वान् पाँच–दस विद्यार्थियों के साथ रहता था और वे लोग अपने निर्वाह योग्य वस्तुएँ वहाँ के क्षीर सरोवर के समीप तीर्थस्थान से प्राप्त करते थे। वह सरोवर मार्तण्ड मन्दिर से लगभग तीन कोस के अन्तर पर था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अब जलौक वहाँ पहुँचा तो मार्तण्ड मन्दिर एक समृद्ध गाँव प्रतीत होने लगा था। मन्दिर के समीप ही एक विशाल भवन बन चुका था और उसके आसपास कई निवासगृह बन चुके थे। उस गाँव में चहल–पहल थी। गाँव में रहने वालों के अतिरिक्त भी आसपास के गाँव के लोग वहाँ आते–जाते प्रतीत होते थे। विहार के भवन के समीप ही अन्न और अन्य जीवनोपयोगी वस्तुओं की दुकानें बन चुकी थीं।

जलौक इस सब परिवर्तन पर विस्मय और प्रसन्नता प्रकट कर रहा था। ज्यों ही वह गाँव में पहुँचा तो किसी ने उसे पहचान लिया। जलौक चुपचाप वहाँ की स्थिति जानते हुए और अज्ञात रहते हुए आचार्य से मिलना चाहता था, परन्तु उस व्यक्ति के पहचान जाने से यह सम्भव नहीं हो सका। पहचानने वाला व्यक्ति दुकानदार था जो अपनी दुकान के लिए विक्रय योग्य वस्तुएँ क्रय करने प्रायः राजधानी जाता रहता था। कम्बोज के समर से महाराज के लौटकर आने पर श्रीनगर की जनता ने महाराज का नागरिकों की सभा में अभिनन्दन भी किया था और वह दुकानदार उस दिन वहाँ उपस्थित था। अतः उसने महाराज को अश्व पर सवार उस स्थान पर आते देखा तो दुकान से उतर महाराज का जयघोष करने लगा।

यह सुन चलते–फिरते लोग वहाँ एकत्रित हो महाराज का मार्ग रोक नमस्कार करने लगे। अब सब एकत्रित हो महाराज का जयघोष करने लगे तो उस नव नगर के निवासी निकलकर वहाँ एकत्रित होने लगे।

महाराज ने जयघोष करने वालों को हाथ के संकेत से चुप करा पूछ लिया, "आचार्य नारायण से कहाँ मिला जाएगा?"

एक ने नवनिर्मित भवन की ओर संकेत कर कहा, "भदन्त नारायण इस भवन में रहते हैं।"

भदन्त का प्रत्यय नारायण नाम के साथ सुन जलौक ने विस्मय से पूछा, "तो यह बौद्ध भिक्षु हैं?"

एक अन्य ने एक पीतवसनधारी ओजस्वी प्रौढ़ावस्था के व्यक्ति की ओर संकेत कर कह दिया, "भदन्त जी वह आ रहे हैं।"

जलौक को विदित था कि प्रायः बौद्ध भिक्षुक शास्त्रज्ञान से अनभिज्ञ होते हैं। इससे वह घोड़े से उतर आ रहे नारायण की ओर संशित दृष्टि से देखने लगे।

नारायण भी महाराज जलौक की जय–जयकार का नाद सुन अपने भवन से निकल महाराज की ओर आया था। महाराज को अपने अश्व के समीप खड़ा देख वह वहीं चला आया और आशीर्वाद देने के लिए बौद्धमन्त्र बोलने लगा, "धम्मं शरणं गच्छामि! बुद्धं शरणं गच्छामि!! संघं शरणं गच्छामि!!!"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जलौक मुस्कराया और हाथ जोड़ नारायण को प्रणाम कर बोला, "मैं आपके ही दर्शन करने आया हूँ। आपकी प्रशंसा राजधानी में सुनी थी और उस प्रशंसा के पात्र को अपनी आँखों से देखना चाहता था।"

"तो आइए, महाराज! पधारिए! यह समय उपासना का है। इसी के लिए लोग भवन में एकत्रित हो रहे हैं।"

"चलिए, भगवन्!" जलौक ने कहा और नारायण के साथ–साथ चल पड़े।

महाराज जलौक के नारायण से मिलने आने का समाचार पूर्ण बस्ती में विद्युत् की भाँति प्रसारित हो गया और वहाँ के सब लोग, नर–नारी तथा अन्य गाँव से आए लोग भवन की ओर उमड़ पड़े।

भवन में एक बहुत बड़ा आगार था। सब उसमें एकत्रित हो रहे थे। नारायण महाराज को लेकर उसी बृहत् आगार में जा पहुँचा। वहाँ एक उच्च चौकी रखी थी। नारायण ने महाराज को उस चौकी पर बैठने के लिए कहा। जलौक भदन्त को बैठने के लिए संकेत करने लगा तो नारायण ने कह दिया, "मैं तो खड़ा होकर ही उपदेश देता हूँ।"

जलौक चौकी पर बैठ गया और भदन्त हाथ से श्रोतागणों को बैठने और शान्त होने का संकेत करने लगा।

महाराज जलौक के चौकी पर बैठते ही प्रांगण में भूमि पर सब लोग बैठ गए। प्रायः बस्ती के सब लोग नर–नारी, बालक–बालिकाएँ प्रांगण में आकर बैठ गए।

आसपास के देहातों के लोग भी जो उस समय उपदेश सुनने आए हुए थे, वे भी महाराज के आने पर प्रांगण में आ गए। इस प्रकार कई सहस्र की भीड़ एकत्रित हो गई। नारायण महाराज की चौकी के समीप खड़े लोगों को बैठ जाने के लिए संकेत कर रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि नारायण में एक विशेष प्रकार का सम्मोहन था जिस कारण उसके संकेत–मात्र से ही एकत्रित लोग भेड़–बकरियों की भाँति शान्त होकर बैठ गए।

जब सब बैठ गए तो नारायण ने कहना आरम्भ किया, "इस देश के अधिपति महाराज जलौक के पधारने पर मैं उनका धन्यवाद करता हूँ। मैं उनको विश्वास दिलाता हूँ कि भगवान् तथागत अवश्य उनका कल्याण करेंगे। ज्ञान के प्रकाश से वह महाराज के मन में उजाला कर देंगे जिससे महाराज जीवन–पथ पर चलते हुए निर्वाण प्राप्त कर सकेंगे। मेरी शुभकामना महाराज के साथ है।

"यह संसार एक बहती नदी के समान है। उस नदी में सब प्राणी भँवर की भाँति चलायमान अनुभव करते हैं। भँवर नदी के जल से किसी प्रकार भी पृथक् वस्तु नहीं है। केवल गति का अन्तर है। नदी का प्रवाह एक दिशा में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा रहा है। परन्तु भँवर तो अपने केन्द्र के चारों ओर चक्कर लगा रहे हैं। यह केन्द्र मोह, माया, ममता के हैं और प्राणी इनमें फँसा हुआ इन केन्द्रों के चारों ओर चक्कर काटता हुआ नदी के प्रवाह के साथ–साथ बहता जा रहा है। यह भँवर ही सुख–दुःख का रूप है और निर्वाण इन भँवरों का मिटकर नदी के जल में एक समान हो जाना ही होता है। इस कारण जीवन का मुख्य कार्य इस मोह, ममता को त्याग कर विशाल जलराशि में एकीभूत हो जाना है।

''मोह, ममता का त्याग उपासना से ही सम्भव है और उपासना भी भगवान् तथागत की अनुकम्पा से बहुत सरल और सुबोध है। आइए, हम सब उपासना करें।''

इतना कह नारायण ने ऊँचे और मीठे स्वर में 'बुद्धं शरणं गच्छामि, धम्मं शरणं गच्छामि, संघं शरणं गच्छामि' का स्वरसहित उच्चारण करना आरम्भ कर दिया। पहले दो–तीन बार नारायण ने स्वयं गाया। धीरे–धीरे श्रोतागण भी उसके स्वर में स्वर मिलाकर गाने लगे। कुछ ही क्षण में पूर्ण प्रांगण इस उपासना–मन्त्र के शब्दों में गूँजने लगा। यह उपासना का मन्त्र एक घड़ी–भर गाया जाता रहा। श्रोतागण और नारायण इस मन्त्र के स्वर में लीन हो भूल गए प्रतीत होते थे कि देश के नरेश वहीं पर बैठे हैं। सहस्रों कण्ठों से एक स्वर में उपासना का मन्त्र उच्चारण होता हुआ महाराज जलौक को बुरा प्रतीत नहीं हो रहा था। वह भी इस लय में मुख से यही मन्त्र बुदबुदाने लगा था।

लगभग एक घड़ी के मन्त्रगान के उपरान्त नारायण ने हाथ खड़ा कर सबको मौन करा दिया। पूर्ण प्रांगण पुनः शान्त हो गया। अब नारायण ने भगवान् तथागत के जीवन से कथाएँ सुनानी आरम्भ कर दीं।

उसने कहा, ''एक नरेश के राजप्रासाद में प्रत्येक प्रकार की सुख–सुविधा में पले हुए राजकुमार शाक्यमुनि गौतम इस संसार के दुःखों को देख विरक्त हो गए। वह मृत्यु और बुढ़ापे का दुःख देख उन पर विजय प्राप्त करने के लिए घर से निकल पड़े और अन्त में वर्षों की खोज और तपस्या के उपरान्त वह यह समझ गए कि इस संसार–रूपी भँवर से निकलने का उपाय मोह, ममता, स्वार्थ और हिंसा के त्याग देने से ही सम्भव है। इस गुरुमन्त्र का वह जीवन–भर प्रचार करते हुए अस्सी वर्ष की आयु में निर्वाण पा गए।

''अपने जीवन–काल में वह देश–भर में घूमे। कोटि–कोटि मनुष्यों को सुख और शान्ति का उपदेश देते हुए अनेक जनों को निर्वाणपद के योग्य बना गए।

''अब भगवान् के शिष्यों ने उनके जीवन–कार्यों को आगे चलाने के लिए एक संघ का निर्माण किया है। इस संघ ने देश–भर में अनेक केन्द्र संगठित किए हैं जिनमें सहस्रों की संख्या में मेरे जैसे भिक्षु लोक–कल्याण का कार्य कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रहे हैं। यहाँ भी भगवत्पाद की कृपा से एक संघ का निर्माण कर रहा हूँ। इस संघ का उद्देश्य प्राणी–मात्र का कल्याण है। हमारा निमन्त्रण है कि कोई भी दीन–दुःखी यहाँ आए तो हम उसकी यथाशक्ति सेवा करेंगे और उसको अपने समान सुखी बनाने का यत्न करेंगे।

"पूर्ण संसार में एक ही प्रवाह है और उसमें पड़ रहे भँवर शान्त हो जाने पर प्रवाह एकरस हो जाएगा। यही जीवन का लक्ष्य है। भगवान् तथागत आप सबका कल्याण करें।"

अब पुनः 'बुद्धं शरणं गच्छामि' इत्यादि मन्त्र का उच्चारण होने लगा। दस–बीस बार मन्त्रगान कर उपासना समाप्त हुई और नारायण महाराज को लेकर भवन के भीतर उस आगार में गया जहाँ वह स्वयं रहता था। वहाँ अन्य किसी को आने की स्वीकृति नहीं दी गई। नारायण का एक शिष्य द्वार पर खड़ा लोगों को उधर आने से मना कर रहा था। इस प्रकार महाराज और नारायण में साक्षात्कार हो गया।

महाराज जलौक के मन पर प्रार्थना और उपदेश का ऊपर–ऊपर ही प्रभाव हुआ था और अब समय व्यतीत होने पर वह प्रभाव मिट रहा था। नारायण ने महाराज को कहा, "महाराज ने यहाँ आने का कष्ट किया है। इसके लिए बौद्ध संघ आपका आभारी रहेगा। महाराज आज्ञा करें कि मैं आपकी किस प्रकार और क्या सेवा कर सकता हूँ?"

जलौक ने अपने मन की बात कह दी। उसने कहा, "मैं जब कौशाम्बी में शिक्षा ग्रहण कर रहा था तो मेरे सहपाठियों ने महात्मा बुद्ध के विषय में बताया था कि वह शास्त्रज्ञान से विहीन, आत्मा–परमात्मा के अस्तित्व से अज्ञ, एक ओजस्वी व्यक्ति हो चुका है। ओजस्वी होना हम पूर्वजन्म के कर्मों, का फल मानते हैं। बुद्धि की प्रखरता और वाणी की मधुरता भी कर्मफल ही हैं। किन्तु इस जन्म में मनुष्य जो ज्ञान प्राप्त करता है वह तो महात्मा जी को छू तक नहीं गया था।"

नारायण ने कहा, "महाराज का ज्ञान सर्वथा ठीक है। भगवान् तथागत यह मानते थे कि जो कुछ भी ज्ञान इस संसार में प्राप्त किया जाता है, वह मनुष्य को उस भँवर के अन्दर जकड़ने में सहायक होता है। जो व्यक्ति इस ज्ञान को छोड़ सांसारिक मोह, माया से मुक्त होने का यत्न करता है वही इस भँवर को छिन्न–भिन्न कर जल में मिल जाता है। यह ज्ञान जो इस संसार में शास्त्र इत्यादि पढ़ने से प्राप्त होता है, यह कामनाओं को उत्तेजित कर मद्य, मांस, मदिरा और स्त्री के सम्मोहन में फँसाने का साधन बन जाता है। इसलिए जब भी भगवान् के पास कोई पण्डित आया और उसने पूछा, 'महाराज! आप वेद पढ़े हैं?' भगवान् सदा ऐसे व्यक्तियों को यह कहते थे,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

'वेद पढ़ने से क्या होगा? तुम सत्य बोलो, चोरी न करो, क्रोध का त्याग करो और दूसरों के कल्याण में लग जाओ! बस यही जीवन का सार है और इसी से जीवन–बन्धन से मोक्ष प्राप्त होता है।''

जलौक को यह बात तो युक्तियुक्त लगी, परन्तु वह अपने बचपन के संस्कारों को छोड़ नहीं सका। वह समझता था कि भगवान् शिव उसका कल्याण करने वाला है। उस कैलासपति, महान् शक्ति के स्वामी, सबके रोम–रोम में शक्ति का संचार करने वाले का क्या हुआ? जलोक का मानना था कि वह है तो उसी के ही प्रताप से हम लोग भूपति हैं।

इतना विचार कर जलौक ने कहा, ''महाराज! ठीक है। सत्य, अक्रोध, अस्तेय सब अच्छे कर्म हैं। परन्तु ये भी तो परमात्मा की कृपा से ही किए जा सकते हैं।''

''महाराज! तथागत और हम सहस्रों की संख्या में श्रावकगण तो बिना परमात्मा की सहायता के यह कल्याण–कार्य कर रहे हैं। हम बिना उसके आश्रय के मानव–कल्याण करने का निश्चय किए हुए हैं और हमारे प्रयत्न सफल हो रहे हैं। इससे मैं कहता हूँ कि यदि कोई परमात्मा है तो वह रहे। हमारा उससे कोई झगड़ा नहीं। वह हमारे जीवन पर किसी प्रकार का आधिपत्य नहीं रखता।''

जलौक उसके इस वक्तव्य का खण्डन नहीं कर सका। यह तो देखने की बात थी, युक्ति की नहीं। इस कारण उसने बात बदल दी। महाराज ने पूछा, ''सुना था आपके यहाँ एक सुनन्द नाम का कुमार आया हुआ है? हम उसको देखना चाहते हैं। आपके प्रांगण वाले जमघट में तो वह दिखाई नहीं दिया।''

''हाँ, महाराज! सुनन्द को महारानी जी ने पढ़ने के लिए मेरे पास भेजा था। वह दो मास के लगभग मेरे पास रहा है। लड़का मेधावी और ओजस्वी है। मैं समझता हूँ कि बड़ा होकर वह बोधिसत्व की पदवी प्राप्त करेगा। मैं उसको इसी पद के लिए तैयार कर रहा था। कल भैरवपुरी के मन्दिर के पुजारी भूरिश्रवा यहाँ आए थे और लड़के को ले गए थे। जाते समय वह कह गए हैं कि लड़का अब यहाँ नहीं आएगा।

''भगवन्! आपने उन्हें मना नहीं किया?''

''मैंने लड़के को कहा था कि न जाए। यहाँ रहते हुए उसे निर्वाण–प्राप्ति में सुगमता है, परन्तु लड़का नहीं माना और चला गया। हमारे संघ का यह नियम है कि हम किसी को संघ में रहने के लिए विवश नहीं करते। हमारे यहाँ का वातावरण ऐसा है कि जो एक बार यहाँ आता है, फिर वह इसे छोड़ने की इच्छा नहीं करता, परन्तु सुनन्द को अभी आए अल्पकाल ही हुआ था और वह यहाँ रहने के गुणों को समझ नहीं सका।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैंने सुनन्द से जाते समय कहा है कि मैं उससे मिलने आऊँगा। फिर भी मैं यह समझता हूँ कि वह कुछ दिन तक भूरिश्रवा के पास रहेगा तो उसे यहाँ और वहाँ का अन्तर प्रतीत होने लगेगा। तब ही वह मेरे साथ यहाँ लौटने के लिए तैयार हो सकेगा।"

जलौक ने पूछ लिया, "आपके यहाँ आश्रम में रहने वाले कितने लोग हैं?"

"इस समय दो सौ से ऊपर तो श्रावक हैं। वे संन्यास पद प्राप्त कर चुके हैं। लगभग इतने ही विद्यार्थी हैं। इन चार–साढ़े चार सौ आश्रम–निवासियों के खाने–पीने के प्रबन्ध के लिए लगभग सौ सेवकगण हैं। सुनन्द अभी विद्यार्थियों में ही था। मैं उसे श्रावक पद प्राप्त करने के लिए तैयार कर रहा था।"

जलौक इतने बड़े जमघट के खाने–पीने, वस्त्रादिक के व्यय के लिए पाँच सौ रजत प्रतिदिन का अनुमान करता था, और यह विचार कर रहा था कि इतना धन इस महात्मा के पास कहाँ से आता होगा। इस कारण उसने पूछ लिया, "भगवन्! इतने लोगों का व्यय कहाँ से चलता है?"

"भगवान् तथागत की कृपा से सब प्राप्त हो रहा है। हमें खाने–पीने इत्यादि के लिए कभी कष्ट नहीं हुआ। वैसे तो अब यात्री लोग भी यहाँ आने लगे हैं और वे भेंट–पूजा कुछ तो दे ही जाते हैं। परन्तु इस प्रकार से तो अभी बहुत कम मिलता है। शेष तो भगवान् तथागत की कृपा से अनायास ही प्राप्त होता रहता है।"

जलौक इस 'अनायास' का अर्थ नहीं समझ सका। उसने मन में विचार किया कि वह अपने गुप्तचर भेजकर पता करेगा। ऐसा विचार कर वह उठ खड़ा हुआ और नारायण से कहने लगा, "मैं आपके कार्य से अति प्रसन्न हूँ। मैं यत्न करूँगा कि फिर कभी यहाँ पर आऊँ और कुछ दिन आपके आश्रम में रहकर आपके उपदेशों से लाभ उठाऊँ।"

"महाराज! उसके लिए आपको यहाँ आने का कष्ट नहीं करना पड़ेगा। मैं प्रति रविवार महारानी जी को उपदेश देने के लिए राजप्रासाद में आया करता हूँ। यदि महाराज उस समय वहाँ उपस्थित होने का कष्ट करें तो इतनी दूर आकर रहने की आवश्यकता नहीं रहेगी।"

जलौक ने बात बदल दी। उसने कहा, "मैं आज से पाँच वर्ष पूर्व यहाँ आया था। यहाँ एक ज्योतिष विद्या के विद्वान् महापण्डित गणिताचार्य शंखपाणि रहते थे। उनका कुछ पता है?"

"वह अभी भीं मन्दिर में टिके हुए हैं। सुना है कि बहुत कष्ट में हैं।"

"क्या कष्ट है उनको?"

"उनकी भोजन–व्यवस्था में अन्तर पड़ गया है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैं उनसे भी मिलना चाहता हूँ।"

इतना कह जलौक उठ, इस नवीन सुन्दर भवन से निकल भगवान् मार्तण्ड के जर्जरित मन्दिर में जा पहुँचे।

नारायण महाराज के साथ नहीं गया। उसने दो श्रावक महाराज के साथ कर दिए।

जलौक मार्तण्ड मन्दिर में गया तो मन्दिर की जर्जर अवस्था देख चकित रह गया। जहाँ पाँच वर्ष पूर्व मन्दिर साफ–सुथरा और धो–पोंछकर सदा साफ किया हुआ रहता था वहाँ आज उसकी चारदीवारी तक सर्वथा टूट–फूट चुकी थी। मन्दिर का चबूतरा बाहर की भूमि से ऊँचा था, परन्तु उस पर चढ़ने की सीढ़ियाँ टूटी हुई थीं। बाहर की दीवार और सीढ़ियों के पत्थर वहाँ पर नहीं थे।

चबूतरे पर टूटी–फूटी ईंटें और पत्थरों के टुकड़े पड़े थे और ऐसा प्रतीत होता था कि वहाँ पर बुहारी दिए कई मास हो चुके थे। वर्षा के पानी से चबूतरे की भूमि पर काई जम रही थी।

चबूतरे के बीचोंबीच मन्दिर था। मन्दिर पर्याप्त बड़ा था और इसमें केन्द्रीय बृहत् आगार के चारों ओर कई छोटे–छोटे आगार थे। केन्द्रीय आगार में पुस्तकालय था, उसे ताला लगा हुआ था। बाहर के आगारों में एक आगार खुला था और आचार्य शंखपाणि उसमें एक चटाई पर आसन जमाए हुए ध्यानावस्थित बैठे थे।

जलौक शंखपाणि वाले आगार के बाहर पहुँच भीतर आने की स्वीकृति माँगने लगा। उसने कहा, "आचार्यवर! क्या मैं भीतर आ सकता हूँ?"

शंखपाणि ने आँखें खोल द्वार की ओर देखा और एक क्षण तक जलौक को पहचानता रहा। कुछ विचार कर आचार्य ने कहा, "आ जाओ।"

महाराज ने झुककर चरण–स्पर्श किए तो आचार्य ने जलौक को बैठने के लिए कह दिया। वहाँ एक ही चटाई थी। इस कारण जलौक भूमि पर बैठ गया। आगार में भूमि पक्की और धो–पोछकर साफ की हुई थी।

"आप कौन हैं?"

"भगवन्! आपके दर्शन आज से पाँच वर्ष पूर्व किए थे। तब और अब में बहुत अन्तर देख विस्मय कर रहा हूँ कि यह क्या हो गया है? आपकी शारीरिक अवस्था भी बहुत क्षीण हो रही है।"

"क्या इस क्षणभंगुर शरीर के अतिरिक्त और सब ठीक दिखाई दिया है?"

"नहीं भगवन्! परन्तु उसके विषय में तो बाद में पूछने वाला था। इस मन्दिर से अधिक आपके स्वास्थ्य की चिन्ता करनी तो स्वाभाविक ही थी।"

"परन्तु भक्त! मैं यहाँ क्यों बैठा हूँ? जिस कारण बैठा हूँ उसकी बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझसे गौण कैसे हो गई? मुझसे पूर्व तीन सहस्र वर्ष से इस मन्दिर में कुछ कार्य किया जाता रहा है। वह कार्य उन सब आचार्यों द्वारा लेखनीबद्ध करके इस मन्दिर में रखा है। मेरा शरीर तो उसकी तुलना में कुछ भी गणना नहीं रखता।''

''हाँ, भगवन्! यह तो है। फिर भी उसके रक्षक को मैं गौण नहीं मान सकता। भगवन्! इस समय दिन का एक प्रहर व्यतीत हो चुका है। आपने अल्पाहार अभी किया है अथवा नहीं?''

''यहाँ अभी सेवक नहीं आया। वह रात को चला जाता है और प्रातः एक प्रहर जाने पर आता है और अपनी पत्नी की पकाई रोटियाँ लेकर आता है। वह अभी नहीं आया।''

''अर्थात् आपको भोजन का बहुत कष्ट है?''

''केवल यही नहीं! इस मन्दिर के पुस्तकालय की देख–रेख के लिए कोई व्यक्ति नहीं रहा।''

''जब मैं यहाँ पहले आया था तब तो यहाँ शोध और खोज का कार्य करने वाले आपके कई शिष्य थे। उनमें से एक मुझे बहुत प्रतिभाशाली प्रतीत हुआ था। यदि मैं विस्मरण नहीं कर रहा तो उसका नाम महावीर था। वह कहीं दक्षिण का रहने वाला था।''

इस प्रकार कई वर्ष पूर्व की घटनाओं का स्मरण कराने पर आचार्य ने पुनः आखें खोल आगन्तुक की ओर देखा और पूछा, ''तुम कौन हो? मुझे स्मरण नहीं आ रहा कि तुम यहाँ कब आए थे। तुमने मेरे परमप्रिय शिष्य का नाम लेकर उस काल की मधुर स्मृतियों को हरा–भरा कर दिया है।''

जलौक ने अभी भी अपना परिचय नहीं दिया। उसने कहा, ''भगवन्! आज्ञा हो तो आपके लिए कुछ अल्पाहार किसी दुकान से ले आऊँ? तब मैं आया था, तो यहाँ मन्दिर की पाकशाला का बना भोजन करने को मिला था।''

''भक्त!'' आचार्य ने कहा, ''उस काल की स्मृतियाँ व्यर्थ हैं। अब तो चौबीस घण्टे में एक समय खाने का अभ्यास हो चुका है।''

''पर महाराज! मुझे तो भूख लगी है। आज्ञा दीजिए। क्या आप हलुवा खा सकेंगे? मैंने देखा है कि एक दुकान पर हलुवा बनाया जा रहा था।''

आचार्य चुप रहा तो जलौक उठकर आगार से बाहर हो गया और जूता पहन वह बाजार को चल दिया। जलौक के साथ आए श्रावक मन्दिर के बाहर चबूतरे के नीचे ही खड़े थे। वह महाराज के साथ मन्दिर में नहीं गए थे।

जब जलौक उधर को चला जिधर वह अपना अश्व छोड़ आया था तो वे श्रावक भी उसके साथ चल पड़े। वे समझे थे कि महाराज आचार्य को नमस्कार कर राजधानी को लौट रहा है। परन्तु उनके विस्मय की सीमा नहीं

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

रही जब उन्होंने देखा कि महाराज हलवाई की दुकान पर पहुँचकर पूरी और हलुवा तथा साग–भाजी लेने लगे।

एक श्रावक ने कहा, "महाराज! अपने भवन में भोजन तैयार है।"

"यह मैं अपने लिए नहीं ले रहा। यह आचार्य जी के लिए है।"

श्रावक चुप हो गया। दुकानदार ने एक बड़े से डोने में पूरी, साग, भाजी और दूसरे डोने में हलुवा रख दिया। जलौक ने कुछ पत्ते अतिरिक्त ले लिए और जब उठाकर स्वयं चलने लगा तो दुकानदार स्वयं उठ वह सामान उठाकर बोला, "महाराज! मैं छोड़ आता हूँ। आप कष्ट मत करिए।"

श्रावक ने दुकानदार को कहा, "मुझे दीजिए। मैं ले जाता हूँ।"

महाराज ने दुकानदार को कह दिया, "तुम चलो। इनका छुआ आचार्य जी नहीं खाएँगे।"

यह सुन श्रावक ने हाथ जोड़कर कहा, "महाराज! यही तो आचार्य जी में दोष है। इसी कारण उनके सब नौकर–चाकर उनको छोड़कर चले गए हैं।"

"ठीक ही कर रहे हैं। उनको उस मन्दिर में रहने का अधिकार नहीं था।"

कश्मीर–नरेश के साथ श्रावक को बहस करने का साहस नहीं हुआ। इस कारण वह चुप हो गया। दुकानदार पूरी, साग इत्यादि उठा महाराज के साथ मन्दिर को चल पड़ा। श्रावक महाराज के पीछे–पीछे थे। श्रावक पुनः मन्दिर के बाहर ही रह गए। हलवाई और जलौक मन्दिर में पहुँचे तो आचार्य जी का सेवक प्रज्ञात आचार्य जी के सम्मुख मक्की की मोटी–मोटी चार रोटियाँ और सरसों का साग एक कटोरे में रख जल लेने गया हुआ था।

जलौक ने आचार्य का भोजन देखा तो समझ गया कि किस कारण आचार्य जी का शरीर कृश हो रहा है। वह भोजन जो आचार्य जी के सम्मुख रखा था, आठ घण्टे शारीरिक परिश्रम करने वाले के लिए हो सकता था, परन्तु दस घण्टे नित्य बैठे–बैठे पठन–पाठन करने वाले के लिए नहीं।

जलौक उन आधी जली और आधी कच्ची रोटियों को देख अवाक् खड़ा रह गया।

आचार्य ने हलवाई के हाथ में दो बड़े–बड़े डोनों में भोजन–सामग्री देख कह दिया, "हमारा सेवक यह ले आया है। अब आप अपना भोजन करिए। यहीं इस आगार में बैठ जाइए। बाहर तो कोई स्वच्छ स्थान होगा नहीं।"

जलौक ने कहा, "पर भगवन्! मैं तो आपके लिए भी लाया हूँ। ये रोटियाँ आज बाहर खड़े श्वान को डाल दूँगा। ऐसा प्रतीत होता है कि वह भी इनको नहीं खाएगा।"

आचार्य ने कहा, "आज तो ठीक है, परन्तु कल तो फिर श्वान वाला भोजन ही करना होगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जलौक ने कहा, "नहीं, भगवन्! मैं ऐसी व्यवस्था कर रहा हूँ कि अब आपको इस दिशा में कष्ट नहीं रहेगा।"

हलवाई समझ गया कि आचार्य ने कश्मीर–नरेश को नहीं पहचाना। इस कारण उसने बातों का सूत्र अपने हाथ में लेते हुए कहा, "आचार्य जी, आप महाराज को यहाँ की दुर्व्यवस्था का कारण बता दीजिए। महाराज अपनी आज्ञा कर देंगे तो सब व्यवस्था हो जाएगी।"

"भोजन–सम्बन्धी दुर्व्यवस्था गौण है। मन्दिर का पुस्तकालय पिछले कई मास से खोला नहीं गया। मुझे भय है कि पुस्तकों को दीमक चाट रही होंगी। मैंने दो मास पूर्व इस विषय में राज्य को लिखा था। नहीं जानता कि वह पत्र राजा के पास पहुँचा है अथवा नहीं।"

हलवाई ने प्रश्न–भरी दृष्टि से महाराज की ओर देखा। वह देख रहा था कि आचार्य उसके दो–तीन बार महाराज कहने पर भी नहीं समझा। जलौक ने आँख के संकेत से उसे चुप रहने को कह स्वयं कहा, "आचार्यवर! कहा नहीं जा सकता कि आपका पत्र महाराज तक पहुँचा है अथवा नहीं। महाराज पिछले दो मास से देश पर आक्रमण का निवारण करने सीमा प्रदेश में गए हुए थे। भगवन्! यदि एक पत्र मुझे दे दें तो मैं आज ही राजधानी जा रहा हूँ और वहाँ पहुँचते ही महाराज की सेवा में उपस्थित हो आपका पत्र उनको दे सकता हूँ। वह तो अत्यन्त धर्मभीरु हैं। आशा करनी चाहिए कि आपका पत्र पाते ही वह समुचित प्रबन्ध कर देंगे।"

हलवाई समझ गया कि महाराज अज्ञात ही रहना चाहते हैं। आचार्य शंखपाणि ने सेवक को आवाज दी, "प्रज्ञात, ओ प्रज्ञात !"

एक वृद्धसेवक एक हाथ में जल का गगरा लटकाए हुए और दूसरे हाथ में एक लोटा लिए आगार में आ गया।

आचार्य ने उसे देख कहा, "हमारी लेखनी, मसि–पात्र और एक अलिखित पत्रक ले आओ।"

इस समय जलौक ने हलवाई को कह दिया, "तब तक आचार्य जी के सम्मुख तुम जो कुछ लाए हो, लगा दो।"

हलवाई ने पत्ते बिछा दिए। महाराज के सम्मुख और आचार्य के सम्मुख भी। शंखपाणि अपने आसन से उठा और लोटे में जल ले बाहर जा हाथ धो तथा कुल्ला कर भीतर आ गया।

जब तक प्रज्ञात मसि–पात्र में जल डाल मसि को गीला कर कलम और एक पत्र ले आया, जलौक और आचार्य हलुवा और पूरी खा रहे थे।

हलवाई दोनों के समीप बैठा उनके सम्मुख पूरी इत्यादि रख रहा था। ज्यों ही खाना समाप्त हुआ, आचार्य ने प्रज्ञात से कलम और पत्र ले लिख

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया। उन्होंने लिखा :

"कश्मीर–नरेश महाराज जलौक को आचार्य शंखपाणि का आशीर्वाद मिले।

"मैं मार्तण्ड मन्दिर में पिछले चालीस वर्ष से खोज का कार्य कर रहा था। आस–पास के गाँव के लोग मन्दिर देखने आते थे और उनसे प्राप्त दान–दक्षिणा से मेरा, मन्दिर का और यहाँ रहने वाले चार–पाँच शिष्यों का निर्वाह होता था। पिछले दो वर्ष से यहाँ एक विदेशी निरक्षर भट्टाचार्य आचार्य नारायण आया हुआ है और उसने विदेश से आए धन से यहाँ एक विशाल भवन–निर्माण कर रहना प्रारम्भ कर दिया है। उसने मोक्ष का बहुत सुगम उपाय यहाँ के लोगों को बताकर मेरे शिष्यों को मन्दिर से भगा दिया है। इसी प्रकार देहात के लोगों को इस मन्दिर के कार्य को मोक्ष–प्राप्ति में व्यर्थ का खर्चा बताकर यहाँ मिलने वाली दान–दक्षिणा का स्रोत भी बन्द करा दिया है। धनाभाव के कारण यहाँ के सेवक भाग गए हैं। विद्यार्थी भी अब नहीं हैं। भोजन और अन्वेषण–कार्य बन्द हो रहा है।

"मन्दिर को खाली देख नव निर्मित भवन के समीप बन रहे नगर के लोग इस मन्दिर के पत्थर, ईंट इत्यादि उखाड़कर ले जा रहे हैं। परिणाम–स्वरूप मन्दिर गिर रहा है।

"सेवकों तथा शिष्यों के अभाव में पुस्तकालय की देख–रेख करने वाला कोई नहीं रहा और नवागन्तुक आचार्य के समान अज्ञानी भिक्षुक पुस्तकों को ले फाड़कर फेंक रहे हैं। इस कारण मैंने दो मास से पुस्तकालय को ताला लगा रखा है, परन्तु पुस्तकों को दीमक लग जाने का भय है।

"अतः महाराज से निवेदन है कि इस तीन सहस्र वर्ष से एकत्रित की जाने वाली अनमोल निधि की रक्षा का प्रबन्ध हो जाए तो मैं यहाँ से काशी तथा उज्जयिनी के लिए जाने का विचार रखता हूँ।

"यह कश्मीर देश की अमूल्य निधि महाराज कश्मीर को रक्षार्थ देकर चित्त में निश्चिन्तता अनुभव करूँगा।"

पत्र के अन्त में आचार्य जी ने अपने हस्ताक्षर कर पत्र महाराज के हाथ में दे दिया। महाराज जलौक ने यह खुला पत्र लिया और पढ़ा। पढ़कर उसकी आखें तरल हो उठीं। उसने अवरुद्ध कण्ठ से कहा, "भगवन्! मैं आपको विश्वास दिलाता हूँ कि आज सायंकाल से पूर्व आपका यह पत्र निःसन्देह महाराज कश्मीर के पास पहुँच जाएगा और आशा करता हूँ कि शीघ्र ही समुचित प्रबन्ध भी हो जाएगा।

"मैं इस दुकानदार को कुछ धनराशि देकर जा रहा हूँ और यह आपके भोजन का प्रबन्ध प्रातः–सायं आपकी आज्ञानुसार कर दिया करेगा। आशा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता हूँ कि तब तक महाराज कश्मीर का ध्यान इस ओर आकर्षित हो जाएगा।''

''भक्त!'' आचार्य ने भोजन से तृप्ति अनुभव करते हुए पूछ लिया, ''क्या नाम है और कहाँ रहते हो?''

''भगवन्! नाम तो जलौक है। राजधानी में ही रहता हूँ। भगवान् की कृपा से पूर्वजों से अर्जित सम्पत्ति से निर्वाह चलता है।''

जलौक का नाम सुनकर एक बार तो आचार्य ने आँखें उठाकर महाराज की ओर देखा, परन्तु उसे सामान्य नागरिकों के वस्त्रों में देख चुप रहा।

जलौक आचार्य का पत्र लपेट अपने उत्तरीय के नीचे सुरक्षित रख चरणस्पर्श कर उठ खड़ा हुआ।

आचार्य ने आशीर्वाद दिया और जलौक हलवाई के साथ आगार से और मन्दिर से बाहर निकल आया।

मन्दिर के चबूतरे के नीचे और भग्न हुए द्वार के समीप श्रावक खड़े थे। महाराज ने अपने अश्व की ओर जाते हुए श्रावकों से कहा, ''अब तुम लोग जाओ। अपना काम करो और भदन्त नारायण जी से कहना कि मैं रविवार को राजप्रासाद में भदन्त जी की प्रतीक्षा करूँगा।''

श्रावकों ने भी देखा था कि महाराज की आखें तरल हो रही थीं। परन्तु उन्होंने इसमें कोई कारण न देख चुप रहना ही उचित समझा। जब श्रावक चले गए तो महाराज ने अपने उत्तरीय के नीचे से एक स्वर्ण मुद्रा निकाल दुकानदार को देते हुए कहा, ''इसे अभी रखो और दोनों समय अपने सेवक को भेज आचार्य जी की भोजन तथा अन्य सुविधाओं का प्रबन्ध करते रहना। हम शीघ्र ही राजधानी से सहायता भेजेंगे।''

हलवाई ने स्वर्ण मुद्रा ले ली और झुककर प्रणाम किया। समीप ही एक श्रावक महाराज के घोड़े की लगाम पकडे हुए खड़ा था। जलौक ने श्रावक का धन्यवाद किया और अश्व पर सवार हो उसे सरपट दौड़ाता हुआ राजधानी की ओर चल दिया।

: 11 :

कादम्बिनी महाराज को मध्याह्न के भोजन के समय बता रही थी, ''सुनन्द आज यहाँ आया था।''

''क्या कहता था?''

''वह तो यह बताने आया था कि वह मार्तण्ड मन्दिर से चला आया है। मैंने पूछा था कि भूरिश्रवा भी साथ है?''

''नहीं महारानी जी! मैं अकेला ही चला आया हूँ।'' वह कहने लगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"ओह, तो माँ से लड़ आए हो?" मैंने पूछा।

"कहता था कि नहीं, उससे दण्डित होने के भय से भाग आया हूँ। मैंने उसकी पूर्ण कथा सुनी है और उसको अभी अतिथि–गृह में ठहरा दिया है। भैरवपुरी में सन्देश भेज दिया है कि सुनन्द यहाँ है।"

"उसे वापस क्यों नहीं भेज दिया?"

"मैं चाहती हूँ कि उसकी शिक्षा का प्रबन्ध यहाँ राजधानी में कर दूँ।"

"ओह! बहुत मोह हो गया है उससे?"

"कुछ बात तो है। मैं जीवन में इस लड़के की सहायता करना चाहती हूँ।"

"क्या विशेषता देखी है तुमने इसमें?"

"इस बालक में कुछ भी विशेषता न सही। फिर भी कुछ बात है जो मुझे पसन्द आई है।"

दुर्गा माता–पिता की लाड़ली लड़की थी। वह और उसका भाई दामोदर भी समीप बैठे भोजन कर रहे थे। दुर्गा ने कह दिया, "राज्याश्रय लेकर बहुत विद्यार्थी शिक्षा ले रहे हैं। पिताजी! एक अधिक से क्या अन्तर पड़ता है?"

"परन्तु दुर्गा! वे विद्यार्थी राजप्रासाद के अतिथि–गृह में नहीं ठहराए जाते।"

"यह तो मैंने माताजी से कहा था।" दुर्गा ने इस विचार से कह दिया कि उसका आग्रह स्वीकार हो जाएगा। महाराज ने दुर्गा की कही बात आज तक अस्वीकार नहीं की थी।

जलौक लड़की को सुनन्द के विषय में यह कहते सुन विस्मय में उसका मुख देखने लगा था। एकाएक उसको एक बात सूझी। उसने दुर्गा से पूछ लिया, "तुमने माताजी से यह क्यों कहा है?"

"वह बहुत मीठी–मीठी बातें करता है, जो सुनने को जी चाहता है। मैं अपनी सहेलियों से भी तो इसी कारण मिलती रहती हूँ। मुझे उनसे बातें करने में रस आता है।"

"परन्तु यह तो लड़का है।"

"मैंने भैया से कहा है कि वह इसे अपना मित्र बना ले और तब मैं उससे ऐसे ही मिल सकूँगी जैसे भैया से मिलती हूँ।"

दुर्गा की सुनन्द में रुचि तो थी, परन्तु वह इस रुचि में कुछ भी लज्जायुक्त नहीं समझती थी। इस कारण वह सुनन्द की बात बिना संकोच और लज्जा के कह रही थी।

बीच में कादम्बिनी ने टोककर कहा, "मैंने सुनन्द को अभी यहाँ इस कारण रखा है जिससे कि उसकी माताजी से भेंट हो सके। कहीं वह दक्षिण की ओर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चला जाता तो सागर में एक बूँद की भाँति विलीन हो जाता।''

परन्तु वास्तविक बात भूरिश्रवा के आने पर पता चली। भूरिश्रवा महारानी का सन्देश पा राजधानी में आया और उसने महारानी जी को सूचना भेजी तो उसे महारानी और महाराज दोनों के सम्मुख उपस्थित किया गया।

जलौक ने भूरिश्रवा को उचित आदरयुक्त स्थान देकर कहा, ''पिछले शुक्रवार मैं मार्तण्ड बौद्ध आश्रम देखने गया था और वहाँ से यह समाचार लाया था कि आप सुनन्द को वहाँ से ले आए हैं।''

''हाँ, महाराज! सुनन्द ने ही इच्छा प्रकट की थी कि उसे वहाँ से ले जाया जाए।''

''क्या कष्ट था उसे वहाँ पर?''

''वह कहता था कि कष्ट तो कुछ नहीं। वहाँ की भिक्षुणियों ने उसे यह ज्ञान कराया था कि वह पुरुष है और एक सुन्दर पुरुष है।''

''कैसे ज्ञान कराया था?'' महाराज जलौक ने पूछ लिया।

भूरिश्रवा ने कहा, ''महाराज! सुनन्द का कहना था कि उसे प्राप्त करने की उनमें परस्पर प्रतिस्पर्धा लगी थी। वे सायंकाल ओंसी डाल अपना भाग्य पता करती थीं। एक लोटे में कई कंकर डाल दिए जाते थे। उनमें एक कंकर पर रक्त रोली से चिह्न बना होता था। सब आँखें मूँद उस लोटे में से कंकर निकालती थीं। जिसके हाथ में वह रोली लगा कंकर आ जाता था वह प्रसन्नता से उछल पड़ती थी और रात को चोरी–चोरी उसकी संगत में आ जाती थी।''

महारानी ने पूछ लिया, ''कितनी भिक्षुणियाँ हैं उस आश्रम में?''

''वैसे तो एक सौ के लगभग हैं, परन्तु सुनन्द का कहना था कि पन्द्रह–बीस थीं जो संयम से नहीं रह सकती थीं और सुनन्द की संगत की इच्छा करती थीं। यह बात तो सुनन्द ने मुझे बौद्ध आश्रम में ही बताई थी और कहा था, 'पण्डित जी। मुझे यहाँ से बचाइए। मैं इनसे तंग आ गया हूँ।'

''मैंने पूछा था, 'आचार्य जी को बताया है?'

'हाँ, पण्डित जी! वह कहते हैं कि जीवन का यह एक प्रवाह है। इसे निर्लेप भाव से बहने दो। समय पाकर स्वयमेव ठीक हो जाएगा। मुझे उस समय तक बौद्ध मन्त्र उच्चारण करते हुए रहना चाहिए। इससे कर्म का दुष्प्रभाव नहीं होता।'

''परन्तु महाराज! सुनन्द कहता है कि वह उनमें से किसी को अपनी कल्पित स्त्री की जूती समान भी नहीं समझता।''

'' 'ओह !'' महाराज ने पूछ लिया, ''और उसकी कल्पित स्त्री कौन है?''

''वह नहीं जानता।''

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नीला ने अपनी दासी नूतन के द्वारा सुनन्द के रहस्य को जानने का यत्न किया था। नूतन स्वयं सुनन्द के सम्मोहन में फँसी हुई उससे वही कार्य लेने का यत्न करने लगी जो भिक्षुणियाँ लेती थीं और सुनन्द वहाँ से भागकर यहाँ आ गया है।"

जलौक की हँसी निकल गई। उसने कहा, "तो यह बौद्ध सम्प्रदाय और भैरव सम्प्रदाय एक ही पथ के राही हैं।"

"नहीं महाराज! एक नियन्त्रण का मार्ग है और दूसरा उच्छृंखलता का। भैरव–उपासना में भैरवी–चक्र मास में एक दिन चलता है और वहाँ तो नित्य ही भैरवी–चक्र चलाने की स्वीकृति है।

"महाराज! हमने मनुष्य की दुर्बलता को सीमित करने का उपाय विचार किया है और विहार के संचालक इस पर नियन्त्रण की आवश्यकता नहीं समझते। वे कहते हैं कि यह स्वतः शान्त हो जाएगी।"

जलौक दोनों में अन्तर समझता था। फिर भी दोनों में कौन–सा उपाय ठीक है, वह समझ नहीं सका।

कादम्बिनी ने बताया, "कल रविवार है और कदाचित् आचार्य नारायण यहाँ आएँगे। मैं चाहती हूँ कि पण्डित जी भी कल आएँ और दोनों में विवाद हो जाए।"

भूरिश्रवा ने कहा, "मैं वाद–विवाद में विश्वास नहीं रखता। मैं कार्य में विश्वास रखता हूँ। दोनों सम्प्रदायों की विचारधारा को प्रयोग में आने दीजिए और परिणामों से लोग स्वयं अपना मार्ग ले लेंगे।"

"परन्तु पण्डितवर! यह दूर मगध देश की आँधी यहाँ आ रही है। यह कश्मीर देश में आ गई है। इसमें मुझे घोर पतन का मार्ग दिखाई दे रहा है।"

"हाँ, महाराज!" भूरिश्रवा ने कहा, "जहाँ तक यौन–संसर्गों का सम्बन्ध है, दोनों मार्ग इसकी स्वीकृति देते हैं। प्राचीन वैदिक मत ब्रह्मचर्य, संयम और तपस्या का है। वह तो संसार में विरले ही पालन कर सकते हैं। हमारा उन लोगों से विवाद नहीं। जो ऐसा कर सकते हैं, करें। परन्तु वैदिक गृहस्थाश्रम, भैरव सम्प्रदाय और बौद्ध विहार–व्यवहार इन तीनों की परस्पर तुलना है। मैं समझता हूँ कि विहारों में, भैरवी–चक्रों में और गृहस्थ में पुरुष–स्त्री के संसर्ग की स्वीकृति है और अबाध है। साथ ही तीनों में स्वीकृति है कि जब चाहें और जितनी मात्रा में चाहें, इसका प्रयोग करें। परिणाम यह हो रहा है कि यौवन व्यतीत होने पर मनुष्य स्वेच्छा से सीमा बाँधता चला जाता है।

"महाराज! मेरा ही उदाहरण लें तो आप मेरे कथन का अभिप्राय समझ जाएँगे। मैं सोलह वर्ष की आयु में भैरव का उपासक बना और एक वर्ष उपरान्त मैं प्रथम बार भैरवी–चक्र की उपासना में सम्मिलित हुआ था। उस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
समय मैं सत्रहवाँ वर्ष पार कर चुका था। जब कश्मीर में आया था तब मैं पच्चीस वर्ष की आयु का था। मगध साम्राज्य की निरंकुशता देख मैं उस राज्य से चला आया था। उन दिनों कश्मीर में मगध राज्य की पराजय हुई थी और कश्मीर में शैव मतानुयायी राज्य था। आपके पूज्य पिताजी ने मुझे अपना मन्दिर और उपासना–विधि चलाने की स्वीकृति तो दी, परन्तु राज्य की ओर से किसी प्रकार की सहायता नहीं दी। मैंने भी सहायता नहीं माँगी थी। मैं स्वर्ण–निर्माण की विधि जानता हूँ और बिना राज्य की सहायता के भैरवपुरी वाला मन्दिर बनवाने में सफल हो गया। नाग जातीय लोग वैदिक मत में कुछ अधिक विश्वास नहीं रखते थे। इस कारण वे ही मेरी ओर अधिक आकर्षित हुए। नागपुरी अब भैरवपुरी ही बन गई है।

"आपने राज्यकोष से तो शैव मत के प्रचार के लिए कुछ भी व्यय नहीं किया, परन्तु मेरे स्वर्ण का ही राज्य में शैव मत–प्रसार के लिए प्रयोग किया है। फिर भी पूर्ण राज्य में भैरव मन्दिर, जहाँ भैरवी–चक्र की उपासनाएँ होती हैं, बन चुके हैं। परन्तु इसमें रुचि रखने वाले लोग सीमित संख्या में हैं। कारण यह कि राज्य और जनता जानती है कि वहाँ किस विधि से उपासनाएँ की जाती हैं। अनेक लोग ऐसे हैं जो जीवन की एक विशेष आयु में ही भैरवी–चक्रों को पसन्द करते हैं और बाद में अपने गृहस्थ जीवन में स्थिर हो जाते हैं। मैं जीवन के दस वर्ष तक ही इन उपासनाओं में भाग लेता रहा हूँ। अब मैं अपना गृहस्थ जीवन चला रहा हूँ। नीला मेरी पत्नी है। हम एक–दूसरे के प्रति निष्ठावान हैं और प्रति मास भैरवी–चक्रों में सम्मिलित होते हुए भी उन उपासनाओं में पूजा–पद्धति को छोड़ अन्य किसी अंश में भाग नहीं लेते।

"ऐसा बहुत लोगों के साथ हो रहा है। यही, जहाँ तक मेरा अनुमान है, बौद्ध विहारों में हो रहा है। मैंने भदन्त नारायण जी का पूर्व इतिहास जाना है और वह भी अपने जीवन के यौवनकाल में इस प्रकार के जीवन में रत रहे हैं। परन्तु आजकल उनका जीवन सर्वथा विषय–वासनाओं से अलिप्त है।

"सामान्य गृहस्थ जीवन में भी यही कुछ होता है।"

कादम्बिनी ने कुछ उद्विग्न होकर कहा, "पण्डितवर! आपने गृहस्थ जीवन को इस विवाद में क्यों ला खड़ा किया है? उसमें और इसमें एक विशेष अन्तर है; वह यह है कि एक पति का एक पत्नी से स्थित सम्बन्ध ही मान्य है।"

"हाँ, महारानी जी! यह मैं मानता हूँ। परन्तु यह स्त्रियों के लिए ही है। पुरुषों के लिए तो यह नहीं। महाराज मेरे कथन के साक्षी हैं।"

"तो यह मानव धर्म है?" कादम्बिनी ने पूछ लिया।

"नहीं! यह पशु धर्म है।" जलौक ने कहा, "मेरा एक अन्य से भी सम्पर्क बन गया है। मैंने उसे गुरु माना है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैंने विक्रम की पत्नी से पूछा था कि उसे यह शिक्षा किस गुरु ने दी है? इस पर उसने कहा, 'श्रीमान्! मैं बाल्यकाल से यहाँ गाँव के एक विद्वान् से गीता पढ़ती रही हूँ।' अब श्रीमती सुन्दरी के गुरु के एकमात्र पुत्र उनके ज्ञान के उत्तराधिकारी हैं।"

"नीला अपने पुत्र सम पालित सुनन्द को मिलने क्यों नहीं आई?" कादम्बिनी ने पूछ लिया।

"वह जिसे पुत्र समान मानती रही है, उसके सम्मुख अपने पूर्व जीवन का चित्र प्रकट हो जाने पर लज्जा अनुभव करती थी। यदि सुनन्द नूतन से सहवास स्वीकार कर लेता तो कदाचित् वह वर्तमान संकोच अनुभव न करती। परन्तु नूतन ने भैरवी–चक्र का पूर्ण चित्र उसके सम्मुख वर्णन किया और तब भी वह सुनन्द से कुछ प्राप्त नहीं कर सकी। सुनन्द ने नूतन को भी कहा है कि जिसे वह प्रेम करता है, वह नूतन से सहस्रों गुणा अधिक सुन्दर है।"

कादम्बिनी को विश्वास हो रहा था कि सुनन्द दुर्गा के विषय में कह रहा है। इस पर भी निश्चयात्मक रूप में जानने के लिए उसने पूछ लिया, "तो उसने नूतन को बताया है कि वह किससे प्रेम करता है?"

"नूतन कहती है कि उसने नहीं बताया।"

महारानी ने और प्रश्न नहीं किया और उसने कहा, "मैं समझती हूँ कि सुनन्द कोई अति श्रेष्ठात्मा है। उसके हाथ में ज्ञान का साधन देने के लिए मैं उसकी शिक्षा का प्रबन्ध करना चाहती हूँ।"

महाराज ने बात बदल दी। उसने भूरिश्रवा को सम्बोधन करते हुए कहा, "पण्डितवर! मैंने बताया है कि मैं मार्तण्ड विहार देखने गया था। मैं गया तो अकेला और सामान्य पहरावे में था, परन्तु वहाँ पहचाना गया और तब नारायण मुझे अपने प्रार्थना–भवन में ले गया और मैं वहाँ बौद्ध उपासना में सम्मिलित हुआ था। मैं उपासना से बहुत प्रभावित हुआ, परन्तु जब शंखपाणि मार्तण्ड मन्दिर में मिला तो मेरे मन में बौद्धों के प्रति ग्लानि उत्पन्न हो गई। जहाँ दो सौ से ऊपर विहार के प्राणी प्रत्येक प्रकार की सुख–सुविधा–सम्पन्न जीवन व्यतीत करते देखे थे वहाँ शंखपाणि को भूखा रहकर जीवन चला रहा देखकर चकित रह गया।

"मैंने राज्य की ओर से दस पण्डित वहाँ के पुस्तकालय की देख–रेख के लिए और एक अधिकारी भोजन–व्यवस्था इत्यादि के लिए वहाँ भेज दिए हैं। मैं अगले सप्ताह वहाँ पुनः जा रहा हूँ और देखूँगा कि राज्य मन्दिर के लिए और क्या कर सकता है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

द्वितीय परिच्छेद

पेरिस के 'होटे–डी–लक्स' के कमरा नम्बर 45 में मदनमोहन प्रातःकाल उठा तो उसने देखा कि उसकी पत्नी राधा गहरी नींद सो रही है। वह उठ बाहर के कमरे में आ अपना 'इलेक्ट्रिक रेजर' निकाल हजामत बनाने लगा। हजामत बन गई थी, परन्तु अभी 'बेड टी' नहीं आई थी। कदाचित् होटल का बेयरा यह समझ रहा था कि पिछले दिन की भाँति आज भी इस कमरे के रहने वाले अभी सोए ही होंगे। दिन के सात बज गए थे। वह होटल के दफ्तर में लगी घण्टी का बटन दबाने ही लगा था कि बेयरा ने कमरे के बाहर से घण्टी बजा दी। वह समझ गया कि चाय आ गई है। उसने द्वार खोला और बेयरा को चाय की ट्रे भीतर सेण्टर टेबल पर रखने के लिए कह दिया। जब वह चला गया तो मदनमोहन ने पत्नी को जाकर प्यार से उसके गालों को थपथपाते हुए जगाने का यत्न किया। पत्नी ने आँखें खोलीं और फिर करवट बदल सोने का यत्न करने लगी। मदनमोहन ने बताया, "जागने का समय हो चुका है और बेयरा चाय रख गया है।"

राधा ने यत्न किया और पति की बात समझ उठते हुए कहा, "मैं तो आज रात भी ढाई बजे के बाद ही सो पाई थी।"

"क्या करती रही थीं इतनी देर तक? मैं तो तुम्हारी प्रतीक्षा करता–करता सो गया था।"

"मैं वह पुस्तक 'भैरवी–चक्र' पढ़ती–पढ़ती भूल ही गई थी कि आपको मैंने प्रतीक्षा करने के लिए कहा है। जब तक पुस्तक का प्रथम परिच्छेद समाप्त नहीं हुआ मैं पुस्तक की कहानी के अतिरिक्त अन्य कुछ विचार ही नहीं कर सकी थी और जब मैं सोने के लिए आई तो आप गहरी नींद में खुर्राटे ले रहे थे।"

"तो बहुत रुचिकर थी कहानी?"

"जी! यहाँ की नाइट क्लब का हिन्दुस्तानी स्वरूप वर्णन किया था।"

"ओह! क्या स्वरूप था हिन्दुस्तानी नाइट क्लब का?"

"अनाचार तो वही था जो यहाँ हम शनि की रात को देख आए हैं।"

इस समय दोनों ड्राइंग रूम में आ सेण्टर टेबल के समीप कुर्सियों पर बैठ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाय पीने लगे थे। राधा बता रही थी, "परन्तु यहाँ यूरोप में जो कुछ शारीरिक सुख का नाम लेकर किया जाता है, वही कुछ किसी प्राचीन काल में परमात्मा की उपासना और मोक्ष का आनन्द प्राप्त करने के लिए भारत में किया जाता था।"

"और दोनों में कौन–सा ठीक समझ में आया है?"

"मुझे तो हिन्दुस्तानी स्वरूप यहाँ से अधिक ठीक प्रतीत हुआ है। तो भी दोनों ही स्वरूप छोटे दर्जे के लोगों के लिए हैं।"

"पुस्तक में लिखा है कि समाज में ऐसे लोग सदा रहते हैं जो वासना से ऊपर नहीं उठ सकते। इसे नियन्त्रण में रखने के लिए कुछ एक स्थानों में सरकारी तौर पर वेश्यागार नियत किए होते हैं। समाज की वर्तमान अवस्था में वेश्यागार एक घृणा की वस्तु बन गए हैं। प्राचीन काल में भारत में इसे मजहबी रंग देकर भैरवी–चक्र के रूप में एक सम्प्रदाय चलाते थे। आज समाज इसे नाइट क्लब का नाम देकर चलाता है। मैं यह समझी हूँ कि इन नाइट क्लबों से यह मजहब के रूप में कम हानिकर है।"

"परन्तु गृहस्थ में एक पत्नी और एक पति का आदर्श अधिक ठीक लग रहा है। फिर भी पुस्तक अभी समाप्त नहीं हुई। इस कारण लेखक क्या कहना चाहता है, यह कल बताऊँगी।"

"तो इसे अभी पढ़ोगी?"

"नहीं! स्नानादि कर और प्रातः का अल्पाहार करके जब आप अपने काम में लग जाएँगे, तब शेष पुस्तक पढ़ने का यत्न करूँगी।"

"मैं आज मध्याह्न के भोजन के समय खाने के लिए होटल में नहीं आ सकूँगा।"

"ठीक है। तब तो पुस्तक सायंकाल तक समाप्त कर दूँगी।"

"मैं मध्याह्नोत्तर चाय के समय तो आ जाऊँगा।"

इसके बाद दोनों शौचादि के लिए उठ खड़े हुए।

अल्पाहार के उपरान्त मदनमोहन अपना ब्रीफकेस उठा अपने ग्राहकों से मिलने चल दिया और राधा कमरे में आकर पुस्तक का शेषांश पढ़ने बैठ गई।

पुस्तक का अगला अंश इस प्रकार था :

"पण्डित जी! मेरे मन में भैरवी–चक्र की उपासना में सम्मिलित होने की लालसा माताजी की दासी नूतन ने ही उत्पन्न की थी।

"एक दिन एकाएक उसने मेरा आलिंगन किया और मुख चूमा तो मुझे सुखकर अनुभव हुआ। जब मैंने उससे इसका अर्थ पूछा तो उसने कहा कि इसका अर्थ यहाँ बताना पाप होगा, परन्तु यह सब कुछ भैरवी–चक्र में तो भगवान् की इच्छानुसार होता है। इस कारण वहाँ बताना पाप नहीं होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उसने मुझे कहा कि मैं अपनी माताजी से कहकर उपासना में जाने की स्वीकृति ले लूँ।''

दामोदर के आचार्य पण्डित विष्णुकान्त के सम्मुख सुनन्द अपनी आत्मकथा बता रहा था।

विष्णुकान्त पिछले चार वर्ष से राजधानी में दामोदर के शिक्षक के रूप में कार्य कर रहा था। उसे सपरिवार राजप्रासाद के एक भाग में रहने को स्थान मिला हुआ था और दामोदर उससे शिक्षा ग्रहण कर रहा था।

जलौक को यह जानकर विस्मय हुआ था कि विष्णुकान्त विक्रम के गाँव का ही रहने वाला है और वहाँ के एक प्रसिद्ध विद्वान् की सन्तान है।

विक्रम की पत्नी सुन्दरी ने इसी के विषय में महाराज को बताया था कि विष्णुकान्त के पिता चन्द्रकान्त से वह भगवद्गीता पढ़ती रही है और उसी से उसके अपने विचार बने हैं।

उस समय तो कुछ अधिक जानकारी प्राप्त करने का अवसर नहीं मिला, परन्तु महाराज जब राजधानी पहुँचे तो उन्होंने विष्णुकान्त से उसके पिता और परिवार का इतिहास जाना।

विष्णुकान्त ने बताया था कि उसके माता–पिता ने अशोक के अन्याययुक्त राज्य को छोड़ कश्मीर में आश्रय लिया था। वे काशी के रहने वाले थे। उसके परिवार को गाँव में रहते हुए बीस वर्ष हो चुके हैं और इस समय उसके माता–पिता दोनों का देहावसान हो चुका है। विष्णुकान्त अपनी विद्या से जीविकोपार्जन के विचार से महाराज के सम्मुख उपस्थित हुआ था और उन्होंने उसे दामोदर का शिक्षक नियुक्त कर लिया था। दामोदर उस समय पाँच वर्ष का था और उसे दामोदर को पढ़ाते हुए चार वर्ष हो चुके थे।

सुनन्द के भैरवपुरी से भागकर चले आने पर कादम्बिनी ने महाराज के सम्मुख सुनन्द को आश्रय देने का विचार रखा तो सुनन्द को भी दामोदर के गुरु विष्णुकान्त के पास रखना ही उचित समझा गया।

विष्णुकान्त के साथ सुनन्द की समस्या पर भी विचार हुआ था। महाराज ने सुनन्द के अज्ञात पिता से भैरवी–चक्र में बीजारोपण का वृत्तान्त बताया तो विष्णुकान्त ने कहा, ''महाराज! मानव–जीवन के आविर्भाव के विषय में स्वयं मनुष्य को ही केवल धुँधला–सा ज्ञान है।

''यह तो निर्विवाद है कि संसार में प्रकृति की ही लीला हो रही है। परन्तु क्या प्रकृति बर्फ की भाँति तेजविहीन कोई चेतन ही है अथवा यह चेतन से भिन्न है, इसका स्पष्ट ज्ञान तो मनुष्य को नहीं है। योगाभ्यास से इसका ज्ञान प्राप्त होता है। परन्तु महाराज! मैं अभी उस विद्या में वहाँ तक नहीं पहुँचा। मैं यत्न तो कर रहा हूँ परन्तु मेरा वर्तमान ज्ञान, योगियों द्वारा लिखित शास्त्रों

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से ही प्राप्त है।''

जलौक ने विष्णुकान्त से पूछा, ''तो तुम्हें भी शास्त्रज्ञान पर सन्देह है?''

''नहीं महाराज! अज्ञात के विषय में सत्य ज्ञान प्राप्त करने का एक अन्य उपाय भी है। वह है अनुमान–प्रमाण। अनुमान से हम घटनाओं का ज्ञान तो प्राप्त कर लेते हैं, परन्तु उन घटनाओं की व्याख्या तो योग से प्राप्त सिद्धि के द्वारा ही हो सकती है।

''सिद्धान्त की बात जानने के लिए सांख्यदर्शन ने अनुमान का ही वर्णन किया है। परन्तु उन सिद्धान्तों की व्याख्या तो दर्शनाचार्य भी अपने योग की सहायता से ही बताते हैं।''

''इस कारण किसी का भैरवी–चक्र में बीजारोपण होना अथवा राजप्रासाद के सुख–सुविधायुक्त स्थान पर होना गौण है। मुख्य हैं आने वाले जीवात्मा के कर्मफल जो उसे धकेलते हुए किसी के पेट में ले आते हैं।''

''पण्डित जी! इस बालक के विचारों का पता करिए। महारानी जी इस बालक में रुचि अनुभव करने लगी हैं। यदि आप इस बालक को उपयुक्त शिष्य पाते हैं तो मैं चाहूँगा कि इसकी शिक्षा का भार भी आप पर ही डाल दूँ।''

महाराज के इस आदेश के अनुसार विष्णुकान्त सुनन्द को अपने पास बुलाकर घर से भाग आने का कारण पूछ रहा था। कारण बताते हुए ही सुनन्द ने कहा था कि उनके घर की सेविका ने ही मुझे भैरवी–चक्र की उपासना में सम्मिलित होने की प्रेरणा दी थी। परन्तु माँ ने बात टालकर मुझे उस रात एक विशिष्ट कार्य करने पर नियुक्त कर दिया। मैं भैरवी–चक्र में नहीं जा सका।

''घटनावश महारानी जी ने मुझे मार्तण्ड विहार में शिक्षा के लिए भरती करवा दिया।''

''वहाँ पढ़ाई, जैसी पण्डित भूरिश्रवा जी करवाते थे, नहीं होती। वहाँ का आचार्य भदन्त नारायण के नाम से विख्यात है। उसने मुझसे एक दिन पूछा था, 'क्या पढ़े हो?'

'' 'महाशिवस्तोत्र और भैरवी–उपासना के मन्त्र।''

'' 'बोलकर सुनाओगे?''

''मैंने स्वरसहित गाना आरम्भ किया। पहले तो वह मेरे मीठे स्वर पर मुग्ध हो, मेरा मुख देखता रह गया। फिर एकाएक मेरे गाने को बन्द कर बोला, 'नहीं। यहाँ यह नहीं चलेगा। इसे भूल जाओ और ध्यान रखो बौद्ध मन्त्रों का ही बार–बार उच्चारण करना चाहिए।'

''मैं बौद्ध मन्त्र का जाप करने लगा। बस, यही वहाँ पढ़ाई समझी जाती

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
थी। मैं दो महीने के लगभग वहाँ रहा था और मुझे एक भी अक्षर नहीं बताया गया।''

''परन्तु पण्डित जी! वहाँ मुझे कई अन्य शिक्षिकाएँ मिलीं। एक दिन मैं अपने आगार में बैठा मन्त्र जाप कर रहा था। मेरी आँखें उस समय मुँदी हुई थीं और ध्यान महात्मा तथागत की मूर्ति में लगा रहा था कि मेरे कानों में कुछ स्त्रियों के खिलखिलाकर हँसने का शब्द पहुँचा तो मैंने आँखें खोलकर देखा। लगभग दस श्राविकाएँ आगार में खड़ी मेरी ओर देखकर हँस रही थीं। मैं उनकी ओर प्रश्न–भरी दृष्टि से देख पूछने लगा, 'भगिनी! हँस क्यों रही हैं?'

''वे सब सिरमुँडी पीत वस्त्र धारण किए हुए थीं। श्रावक और श्राविकाओं के वस्त्रों में अन्तर नहीं होता। केवल दाढ़ी–मूँछ से ही श्रावक–श्राविकाओं में भेद हो सकता है। मैंने जब उनसे हँसने का कारण पूछा तो वे सब मुझे चारों ओर से घेरकर बैठ गईं। उनमें से एक ने कहा, 'हम तुम्हारे विषय में ही विचार कर रही थीं।'

''क्या विचार कर रही थीं?''

''यही कि तुम पुरुष हो अथवा नहीं।''

''मैं तो पुरुष नहीं हूँ।'' मैंने कहा, 'मैं अभी कुमार हूँ।'

''यह सुन वे पुनः हँसने लगीं। एक ने कहा, 'कुमार ही पुरुष हो जाते हैं।''

''तब ठीक है।' मैंने कहा, 'तुम्हारी दृष्टि में मैं पुरुष हो गया हूँ?''

''हाँ।' वही श्राविका बोली जो पहले बात कर रही थी, 'हम सब स्त्री हैं।'

''सत्य? मैं तो तुम सबको कुमार समझ रहा था। तुममें और मुझमें कोई अन्तर प्रतीत नहीं होता।''

''परन्तु अन्तर तो है?'' वही बोल उठी।

''क्या अन्तर है?''

''सब एक–दूसरे का मुँह देखने लगीं। वे आँखों के संकेत से ही परस्पर कुछ कह रही प्रतीत होती थीं। तब वही बोली, 'अन्तर तो है, परन्तु क्या यहीं और दिन के समय ही बताएँ?'

''मैंने कहा, 'क्या हानि है?'

''तब एक श्राविका उठी और मेरे आगार का द्वार बन्द करने लगी। मैंने कहा भी, 'इसकी क्या आवश्यकता है?'

''परन्तु हम तुम्हें अपने में और तुममें अन्तर दिखाना चाहती हैं। यह अन्तर किसी अन्य श्रावक को नहीं बताना चाहतीं।'

''मैं अभी विचार ही कर रहा था कि वह क्या करना चाहती हैं कि द्वार बन्द होते ही सब उठ खड़ी हुईं। वे मेरे चारों ओर खड़ी रहीं और सब तुरन्त अवस्त्र हो गईं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मैंने बाल्यकाल में अपनी माँ को अवस्त्र देखा था। मुझे वे सब उस जैसी, परन्तु उससे बहुत कुरूप दिखाई दीं। मैंने उनको कह दिया, 'ऐसी तो मेरी माँ है।'

"उसी श्राविका ने, जो वार्तालाप कर रही थी, कहा, 'हाँ! तुम ठीक कहते हो। हम तुम्हारी माता की श्रेणी की ही हैं। हम तुम्हें तुम्हारे पिता की श्रेणी में समझती हैं।'

"सबने वस्त्र पहन लिए और उनकी प्रवक्ता ने कहा, 'देख लिया न, कि तुम वह नहीं हो जो हम हैं?'

"यह तो मैं पहले ही जानता था।"

"नहीं। तुम अभी नहीं जानते। तुमको हम सिखाएँगी।"

"आगार का द्वार खोलकर वे चली गईं और उसी रात मुझे वास्तविक पुरुष–स्त्री में अन्तर का ज्ञान हो गया। वही श्राविका, जो दिन के समय श्राविकाओं की प्रवक्ता थी, आई और उसने मुझे पुरुष होने का ज्ञान करा दिया।

"जब नित्य रात के समय उनमें से एक मेरे पास आने लगी तो मैंने भदन्त नारायण को पूर्ण वृत्तान्त बताया। उन्होंने कहा, 'यह चिन्ता का विषय नहीं है। चिन्ता इस बात की है कि तुम दिन के समय इस अनुभव को स्मरण तो नहीं रखते। भूलने से ही निर्वाण यात्रा पर जाया जा सकता है।'

"मैंने कहा था, 'आचार्यवर! मैं इसे कैसे भूल सकता हूँ। नित्य रात को यही कृत्य होता है।"

"भूल जाओ सुनन्द। रात जब कोई तुम्हारे अंग लगी हो तो उस समय तुम मन्त्र जाप किया करो। इससे तुम उस समय का अनुभव भूल सकोगे।"

"मैंने यह किया, परन्तु दिन–भर मैं परेशान रहता था और रात को उनमें से कोई–न–कोई मेरी नींद खराब करती रहती थी।"

"इसी बीच एक दिन पण्डित भूरिश्रवा आए तो मैंने उनसे कहा कि मैं वहाँ से जाना चाहता हूँ। उन्होंने कारण पूछा तो मैंने सब वृत्तान्त, ऐसा ही जैसा आपको सुना रहा हूँ, बता दिया।

"उन्होंने मुझे बताया कि यह पति–पत्नी का सम्बन्ध है। इस पर मैंने उनको बताया, 'परन्तु आचार्य जी! मैं तो विवाह उससे करूँगा जिसे मैं पसन्द करूँगा।'

"और वह कौन होगी?"

"मैंने बताया, 'अभी नही बता सकता। परन्तु वह इन सबसे अधिक सुन्दर और श्रेष्ठ होगी।"

"क्या श्रेष्ठता है उसमें?"

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"इनमें से कोई उसके जूते की भी तुलना नहीं कर सकती।"

"पण्डित जी चुप रहे और मुझे वहाँ से ले आए।"

"और माँ के घर से क्यों भाग आए हो?" विष्णुकान्त ने अपना प्रश्न दोहराया।

"वहाँ नूतन को जब मैंने यह वृत्तान्त बताया तो वह भी मुझसे वैसा ही व्यवहार करने लगी। तब मैंने माँ का घर भी छोड़ दिया।"

"और तुम यहाँ किसलिए चले आए हो?"

"एक दिन राजकुमारी दुर्गा ने कहा था कि जब राजधानी में आऊँ तो उसे मिलूँ। इससे मैंने समझा कि उससे मिलना चाहिए। किन्तु मिल गईं महारानी जी। मैंने उनको बताया कि मैं माँ के घर से भाग आया हूँ।"

"महारानी जी ने पूछा, 'क्यों? माँ से लड़ पड़े हो?"

"नहीं महारानी जी, माँ से कोई नहीं लड़ सकता। माँ के घर से लड़ पड़ा हूँ। लड़ने का कारण माँ को बता नहीं सका और वहाँ से चला आया हूं।"

"क्या नहीं बता सके?"

"जिस कारण घर से लड़ पड़ा था।"

"यही तो पूछ रही हूँ कि किस कारण लड़ पड़े थे?"

"मैंने कहा, 'परन्तु आप भी तो माँ हैं। मैं अपनी करतूत माँ को नहीं बता सकता।"

"यह सुन महारानी जी चुप रहीं और मुझसे पूछने लगीं, 'यहाँ अतिथिगृह में रहोगे?"

'यदि आप आज्ञा देंगी तो रहूँगा।'

"उन्होंने आज्ञा दे दी और तब से मैं यहाँ हूँ।"

विष्णुकान्त इस वृत्तान्त को सुन गम्भीर विचार में मग्न हो गया। सुनन्द गुरुजी को गम्भीर विचार में मग्न देखता रहा।

एकाएक विष्णुकान्त ने कहा, "मुझसे पढ़ोगे?"

"आचार्य जी। क्या पढ़ाएँगे?"

"जो कुछ राजकुमार दामोदर को पढ़ाता हूँ।"

"तो पढ़ाइए। मैं समझा था कि आप भी 'बुद्धं शरणं गच्छामि' पढ़ाएँगे।" विष्णुकान्त हँस पड़ा।

: 2 :

विष्णुकान्त ने सुनन्द की आपबीती महाराज को बता दी। साथ ही कहा, "मैंने उसे पढ़ाना आरम्भ कर दिया है। महाराज, वह कोई श्रेष्ठ आत्मा है और किसी श्रेष्ठ माता–पिता की सन्तान है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"दर्शनशास्त्र में वर्णन किया गया है– 'आत्म कृतेः परिणामात्' और 'योनिश्च हि गीयते'। इनका भावार्थ है कि शरीर में आत्मा तो कर्मों के परिणामस्वरूप आता है, परन्तु शरीर योनि अर्थात् माता के शरीर से बनता है।

"महाराज! अतएव मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि सुनन्द का आत्मा पूर्वजन्म के कर्मों से इस सुन्दर शरीर में आया है और उसे श्रेष्ठ बुद्धि और मन मिला है। मैंने उसे पढ़ाना आरम्भ कर दिया है।"

"परन्तु पण्डित जी, मैं उसका लगाव राजपरिवार के किसी व्यक्ति से बढ़ता देख राजप्रासाद में रहने की स्वीकृति नहीं दे सकता।"

"तो मैं उसे अपने निवास–गृह में रखूँगा। उस गृह में कई आगार रिक्त पड़े हैं।"

"परन्तु वहाँ तुम्हारी लड़की है। वह उसे पतित कर सकता है।"

"वह अभी बालिका–मात्र है। फिर भी मैं यह समझा हूँ कि पण्डित भूरिश्रवा और नीला स्वयं अशिक्षित होने से उसे उचित शिक्षा नहीं दे सके। इस कारण उसके जीवन में एक महान् दुर्घटना घट गई है। मैं समझता हूँ कि छः मास में मैं उसे नीला के घर के तथा बौद्ध विहार के संस्कारों से मुक्त कर दूँगा। तब वह कुन्दन की भाँति पुनः निर्मल दिखाई देने लगेगा।"

"ठीक है! यह आप देख लें कि उसे आपको अपने घर पर रखना है अथवा मैं उसका नगर में किसी स्थान पर प्रबन्ध करूँ।"

"मैं उसे आज ही अपने निवास–गृह पर ले जाऊँगा।"

सुनन्द को पहले तो महाराज के इस निर्णय पर विस्मय हुआ कि वह उसे राजप्रासाद में रखना नहीं चाहते, परन्तु स्वभाववश उसने मन की अवस्था को प्रकट नहीं किया। उसने अपना जूता पहना और पण्डित जी के साथ चल पड़ा। वह अपने वस्त्र पहने हुए ही वहाँ आया था और शेष सब कुछ उसे राजप्रासाद में महारानी की आज्ञा से मिला था।

उसी दिन सायंकाल अतिथि–गृह का सेवक उसके वस्त्र और अन्य सामान उसे दे गया। सामान देते हुए उसने कहा, "महारानी जी ने ये आपके लिए ही बनवाए थे। उनका कहना है कि जब कभी उसे किसी वस्तु की आवश्यकता हो जो यहाँ प्राप्त न हो तो तुम पण्डित जी के सेवक के द्वारा उनको कहलवा देना। वह वस्तु मिल जाएगी।"

इस प्रस्ताव पर भी सुनन्द ने कभी महारानी जी से कुछ नहीं माँगा। उसकी सामान्य आवश्यकताएँ पण्डित जी की पत्नी पूर्ण कर देती थीं।

जिस दिन विष्णुकान्त और जलौक में सुनन्द के विषय में वार्त्तालाप हुआ था, उसी सायंकाल जलौक और कादम्बिनी में भी सुनन्द के विषय पर

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बातचीत हुई थी।

इस वार्त्तालाप से पूर्व भूरिश्रवा और नीला भी राजधानी में आए थे और भूरिश्रवा महाराज से तथा नीला महारानी जी से मिले थे। दोनों सुनन्द का सन्तोषजनक प्रबन्ध हो गया देख भैरवपुरी लौट गए थे।

महारानी से जलौक का वार्त्तालाप भूरिश्रवा के प्रसंग से ही आरम्भ हुआ था। जलौक ने कादम्बिनी को बताया, "भूरिश्रवा सुनन्द के विषय में यह जानने के लिए आया था कि हमने उसका क्या प्रबन्ध किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि नीला उससे पुत्रवत् स्नेह करती है। अब तक वह भूरिश्रवा के द्वारा सुनन्द के साथ बौद्ध विहार में हुए व्यवहार का समाचार पा चुकी है। साथ ही नूतन ने अपनी भूल स्वीकार कर नीला से क्षमा माँग ली है।"

"तो आपने भूरिश्रवा को क्या बताया है?"

"मैंने सुनन्द के प्रबन्ध के विषय में बता दिया है।"

महाराज ने वह पूर्ण वार्त्तालाप सुना दिया जो पण्डित विष्णुकान्त ने उसे सुनाया था और उस पर अपनी आज्ञा भी महारानी को बता दी।

"तो आपने सुनन्द को अतिथि–गृह से निकाल दिया है?" महारानी ने पूछा।

"अतिथि–गृह से नहीं, राजप्रासाद से। पण्डित विष्णुकान्त ने उसे अपने गृह में रख लिया है। पण्डित जी का विचार है कि वह इतना भयानक जीव नहीं जितना कि मैं समझता हूँ।"

"मैं समझती हूँ कि पण्डित जी का विचार ठीक है।"

"परन्तु तुमने ही तो बताया था कि दुर्गा उसकी ओर आकर्षित हो रही है। मैं इसे कम करना चाहता हूँ।"

"मैं तो इसमें भी कुछ दोष नहीं समझती। वह उसके लिए योग्य वर हो सकता है।"

"अभी तो वह उसकी संगति के योग्य नहीं। वर होने की बात तो बाद में देख लेंगे। सुना है कि दामोदर भी उससे मेलजोल रख रहा है।"

"मैं जानती हूँ। परन्तु दामोदर ने अभी तक कोई ऐसी बात नहीं बताई जिसे मैं अनुचित समझूँ।"

"दामोदर अभी अल्पायु है और वह इन विषयों पर कुछ नहीं जानता।"

यद्यपि कादम्बिनी सुनन्द को अपनी देख–रेख में रखना चाहती थी, परन्तु विष्णुकान्त को वह अनुपयुक्त व्यक्ति नहीं मानती थी। इस कारण चुप रही। सायंकाल उसने सेविका को भेज अतिथि–गृह से पता किया कि सुनन्द वहाँ से क्या कुछ ले गया है। जब उसे ज्ञात हुआ कि वह वे सब वस्त्र और सामान वहीं छोड़ गया है जो उसने उसकी सुख–सुविधा के लिए भेजा था तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महारानी ने अतिथि–गृह के सेवक द्वारा वह सब सामान सुनन्द के पास भेज दिया।

इससे सुनन्द को प्रसन्नता हुई थी और उसने कृतज्ञतापूर्ण भाव में एक पत्र महारानी जी को लिखा था। उसने लिखा :

"पूज्यनीय महारानी माताजी।

"मुझे पण्डित जी के घर में किसी प्रकार की असुविधा नहीं है। आपने जो वस्तुएँ मेरे लिए भेजी हैं, उनके लिए मैं अति कृतज्ञ हूँ। भविष्य में जो कुछ भी आप भेजें, माताजी के द्वारा ही भेजने की कृपा करें। यह उनके घर का नियम है।

"मेरी राजकुमारी दुर्गा जी को स्नेहमय नमस्कार देने की कृपा करें।"

दुर्गा को सुनन्द के मनोद्गारों का ज्ञान करा दिया गया।

दिन व्यतीत होने लगे।

पण्डित जी सुनन्द को घर पर ही पढ़ाते थे। दामोदर को वह राजप्रासाद में जाकर पढ़ाया करते थे। इसका परिणाम यह हो रहा था कि सुनन्द दुर्गा तथा दामोदर से मिलने का अवसर नहीं पाता था।

इस प्रकार एक वर्ष से ऊपर काल व्यतीत हो चुका था। एक दिन जलौक के मन में विचार आया कि आचार्य शंखपाणि का सुख–समाचार लेने जाना चाहिए।

वैसे तो राजसी सहायता मार्तण्ड मन्दिर को भेजी जा रही थी। जलौक ने विष्णुकान्त को बुलाकर पूछा, "पण्डित जी, अश्वारोहण कर सकते हो अथवा नहीं?"

"हाँ, महाराज! बचपन में इसका अभ्यास किया है। घोड़ा सधा हुआ होना चाहिए।"

"तो कल प्रातःकाल अपने निवास–गृह पर अश्व–यात्रा के लिए तैयार रहिएगा। मैं आपको अपने साथ एक स्थान पर ले चलना चाहता हूँ।"

विष्णुकान्त इस यात्रा का लक्ष्य और उद्देश्य नहीं समझ सका। वह प्रातः सूर्योदय से पूर्व ही स्नानादि से अवकाश पा अल्पाहार कर तैयार हो प्रतीक्षा करने लगा था। सूर्योदय से कुछ पूर्व महाराज की अश्वशाला का सेवक एक अश्व लेकर आ गया। सेवक ने पण्डित जी को बताया, "महाराज की आज्ञा थी कि इस अश्व के साथ मैं यहाँ पहुँच जाऊँ। महाराज यहाँ आने वाले हैं।"

पण्डित तो यात्रा के लिए तैयार था। वह अभी अश्व को देख ही रहा था कि महाराज अपने अश्व पर सवार वहाँ आ पहुँचे। विष्णुकान्त को आज्ञा हो गई कि अश्व पर सवार हो उसके साथ चले। विष्णुकान्त अश्व पर बैठा और दोनों घोड़ों को सरपट दौड़ाते हुए पूर्व की ओर चल पड़े।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नगर से निकलते ही जलौक ने विष्णुकान्त को बताया, "हम मार्तण्ड मन्दिर देखने जा रहे हैं। वहाँ दो व्यक्तियों से मिलने की सम्भावना है। एक तो आचार्य शंखपाणि जी से और दूसरे बौद्ध विहार के भदन्त नारायण से।

"हम पण्डित जी को इसलिए साथ ले जा रहे हैं कि वे इन दोनों की विद्वत्ता का अनुमान लगाकर हमें बताएँगे। आजकल हम एक अति विकट समस्या को सुलझाने में लगे हुए हैं।

"भूतपूर्व कम्बोज–नरेश नरकण्ट हमारे पास प्रार्थी है कि हम उसे बौद्ध विहार में रहने की स्वीकृति दें। उसकी इस प्रार्थना पर हम आपकी सम्मति चाहते हैं।"

विष्णुकान्त महाराज के मार्तण्ड मन्दिर देखने जाने का एक उद्देश्य समझ गया था, परन्तु राज्य को इस विषय पर राजनीतिक दृष्टि से ही विचार करना चाहिए। इस कारण उसने निवेदन किया, "महाराज, नरकण्ट राजनीति के अनुसार बन्दी रखा गया है। जहाँ तक मुझे ज्ञात है, उसने कश्मीर राज्य की नागरिकता स्वीकार नहीं की। अतः उसके विषय में विचार करने के लिए इन धार्मिक संस्थानों के पुजारियों को बीच में लाने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।"

"कोई विशिष्ट व्यक्ति नरकण्ट पर दया का भाव रखने का सुझाव दे रहा है।"

यह विख्यात हो रहा था कि भदन्त नारायण महारानी जी को उपदेश देने के लिए सप्ताह में एक बार आता है। इस कारण विष्णुकान्त को सन्देह हो गया था कि वह विशिष्ट व्यक्ति महारानी जी हो सकती हैं। अतः पण्डित जी ने पूछ लिया, "महाराज! वह विशिष्ट व्यक्ति क्या राज्य की राजनीति से सम्बन्ध रखता है?"

"राज्य की राजनीति से तो नहीं, परन्तु राज्य के सर्वोच्च अधिकारी से सम्बन्ध रखता है।"

"यदि क्षमा करें तो महाराज! मेरी सम्मति यह है कि उस विशिष्ट व्यक्ति को कह दीजिए कि राज्य का सर्वोच्च अधिकारी भी राज्य से ऊपर नहीं हो सकता। इस विषय पर मन्त्रिमण्डल से बातचीत होनी चाहिए।"

"पण्डित विष्णुकान्त! मन्त्रिमण्डल के सब मन्त्री अपने–अपने विभाग के विशेषज्ञ हैं। वे दूसरे के विभाग में बहुत कम हस्तक्षेप करते हैं।"

"और विदेश नीति का मन्त्री कौन है?"

"वह तो मैं ही हूँ। इस कारण मैं अपनी जाँच के उपरान्त ही निर्णय लेना चाहता हूँ। तुम निर्णय लेने में मेरी सहायता कर दो।"

"तब तो महाराज! आपने मुझपर बहुत बड़ा उत्तरदायित्व डाल दिया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मुझे बहुत सावधानी से काम लेना होगा।''

"हाँ! अब हम इस विषय में राजधानी लौटकर आपकी सम्मति जानेंगे। इस विषय में मैं कल तक अपना निश्चय मन्त्रिमण्डल को बताना चाहता हूँ।''

विष्णुकान्त ने बात बदल दी। उसने कहा, "सुनन्द को मुझसे पढ़ते हुए एक वर्ष से कुछ ही ऊपर हुआ है और मेरा अनुमान है कि जो कुछ एक क्षत्रिय युवक को पढ़ने के लिए आवश्यक होता है, वह एक और वर्ष में वह समाप्त कर लेगा।''

"ओह!'' महाराज के मुख से निकल गया, "तो वह प्रतिभा सम्पन्न है?''

"महाराज! एक तो अब वह पन्द्रहवें वर्ष में जा रहा है। वह दामोदर से पाँच वर्ष बड़ा है। दूसरे सत्य ही उसकी बुद्धि अति प्रखर है।''

"वह अपनी माँ को स्मरण करता है अथवा नहीं?''

"उसकी माँ, भैरव के मन्दिर की पुजारिन, मास में एक बार आ उससे मिल जाया करती है। वह लड़के से बहुत स्नेह रखती प्रतीत होती है। वैसे वह भी बहुत ही बुद्धिशील स्त्री है। वह पढ़ी–लिखी कुछ नहीं। सामान्य भाषा का ज्ञान रखती है, परन्तु बात बहुत गम्भीर ज्ञान की किया करती है।

"एक दिन मैंने उससे पूछा था कि वह भैरव के मन्दिर में पुजारिन का काम किसलिए करती है? उस जैसी बुद्धिशील स्त्री को तो यह काम नहीं करना चाहिए।''

"उसका उत्तर था, 'मैं नहीं करूँगी तो कोई अन्य करने लगेगी और वह क्या करेगी, इसकी कल्पना ही की जा सकती है।

'पुजारी जी कहते थे कि मुझसे पहले एक वाराणसी की स्त्री उनके साथ आई थी और वह इन उत्सवों में उपासिका बन खुलकर भाग लेती थी। इस कारण वह पाँच–छः वर्ष में ही शरीर छोड़ गई थी। उसके उपरान्त कई नाग–स्त्रियाँ यह काम करती रही हैं। परन्तु वे पुजारिन का कार्य करती हुई भी उपासना में भाग लेती थीं। परिणामस्वरूप पूजा–कार्य में त्रुटि रह जाती थी। जब से मैंने पुजारिन का काम सँभाला है, मैंने उपासनाओं में भाग लेना छोड़ दिया है। मैं भूरिश्रवा की पत्नी के रूप में ही हूँ। यद्यपि हम दोनों ने विवाह नहीं किया। दोनों पृथक्–पृथक् घरों में रहते हैं और अपने जीवन को नियम से चलाते हैं।

"जब सुनन्द एक मास का था, मैं बारह वर्ष की थी और भगवती के स्थान पर पूजित की जाती थी। मुझे पता चला कि बालक माताविहीन हो गया है तो मैं बालक को अपनी माँ के घर ले आई और वहाँ उसका लालन–पालन आरम्भ हो गया। रजस्वला होने पर मेरा सम्बन्ध पुजारी से बना तो मैं पुजारिन के पद पर नियुक्त हो गई, परन्तु इस पद पर नियुक्त होते ही मैंने पुजारी

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से कुछ शर्तें तय की थीं और उनमें एक शर्त यह भी थी कि हम निष्ठावान पति–पत्नी बने रहेंगे।

'अब हम पिछले दस–ग्यारह वर्ष से ऐसे ही रह रहे हैं। यह भाग्य की बात है कि मेरी कोई सन्तान ही नहीं हुई। यह दोष मैं पुजारी जी में समझती हूँ। अपने को तो मैं सन्तानोत्पत्ति के सर्वथा योग्य मानती हूँ।'

"महाराज! मैंने नीला से पूछा था, 'विवाह क्यों नहीं कर लेतीं?'

"उसने बताया था, 'किया तो है। पुजारी जी मेरे पति हैं।'

'परन्तु सन्तान नहीं हो रही न?'

'तो नियोग करूँ, जैसे कुरु की पत्नियों ने किया था?

"मैंने मुस्कराते हुए कहा, 'क्या हानि है?'

"तो वह बोली, 'पण्डित जी! आप ही कर लीजिए। है स्वीकार?'

"मेरी पत्नी सामने बैठी थी। वह हमारे बच्चों की माँ है। वह हँस पड़ी और बोली, 'लीजिए! कर लीजिए! फोकट में धर्म कमा लीजिए।'

"मुझे यह स्वीकार्य नहीं था तो नीला भी हँसकर चुप रह गई। उसने एक अन्य दिन बताया, 'पण्डित जी! जब भाग्य में सन्तान होगी तो सन्तान का पिता भी कहीं से आ जाएगा।'

: 3 :

इस प्रकार बातें करते हुए दस कोस की यात्रा समाप्त कर वे मार्तण्डपुरी में जा पहुँचे। इस बार दोनों अश्वारोही सीधे मार्तण्ड मन्दिर के द्वार पर पहुँचे। द्वार पर राजसी सुभट्ट चौकीदारी कर रहे थे और मन्दिर तथा इसकी चारदीवारी और द्वार मरम्मत हो चुके थे। मन्दिर में भी अब टूट–फूट के चिह्न नहीं थे। पूर्ण मन्दिर की रूप–रेखा स्पष्ट निकल आई थी।

मन्दिर में पुनः आचार्य जी के शिष्य चलते–फिरते दिखाई देते थे। चौकीदारों ने महाराज को पहचाना और झुककर नमस्कार किया और आदरयुक्त मुद्रा में सम्मुख खड़े हो गए।

पण्डित विष्णुकान्त ने पूछा, "आचार्य जी भीतर हैं?"

"हाँ, महाराज! आपकी प्रतीक्षा हो रही है।"

इस पर दोनों आगन्तुक व्यक्तियों को विस्मय हुआ, परन्तु प्रतीक्षा का शब्द सुन वे सीधे भीतर गए। कुछ विद्यार्थी चबूतरे पर खड़े थे, उन्होंने दो अश्वारोहियों को द्वार पर अश्वों से उतरते देखा तो उनमें से एक भागकर भीतर सूचना देने चला गया और शेष खड़े विद्यार्थी आगे बढ़ महाराज तथा उनके साथी को नमस्कार करने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णुकान्त ने कुछ कहने के लिए ही वहाँ सत्कार करते हुए विद्यार्थियों को कहा, "हम आचार्य जी से मिलने आए हैं।"

"हाँ! आचार्य जी जानते हैं। वह देखिए..." उसने मन्दिर की ओर से आचार्य शंखपाणि तथा कुछ अन्य लोगों को साथ आते हुए अँगुली का संकेत करके दिखा दिया। आचार्य जी ने हाथ में पुष्पमाला पकड़ी हुई थी।

महाराज विद्यार्थियों को छोड़ आचार्य जी की ओर चल पड़ा। जलौक ने और विष्णुकान्त ने आचार्य जी के चरण–स्पर्श किए और आचार्य जी ने महाराज के गले में पुष्पमाला डाल उनका स्वागत किया।

जब सब भीतर पहुँचे तो पुस्तकालय के बाहर खुले भवन में महाराज तथा दूसरे अतिथि को ले जाकर बिठा दिया गया। एक वर्ष पूर्व जब जलौक आचार्य जी से मिलने आया था तो यह भवन बन्द था। भवन की दीवारों के साथ सैकड़ों पुस्तक–घर बने हुए थे और उनमें ग्रन्थों की हस्तलिखित प्रतियाँ पड़ी थीं। भवन की भूमि पर दरियाँ, कालीन, श्वेत चादरें और तकिये लगे थे।

जलौक और उनसे कुछ पीछे हटकर विष्णुकान्त को बैठाकर आचार्य ने खड़े–खड़े ही कश्मीर–नरेश की स्तुति में स्वर सहित एक प्रशस्ति कही। पहले संस्कृत भाषा में तदन्तर प्राकृत में कहा, "महाराज! आप एक वर्ष पूर्व यहाँ पधारे थे और आपने यहाँ की जर्जर अवस्था देखी थी। आपके उपचार से यह जर्जर मन्दिर अब पुनः अपने पाँव पर खड़ा हो इस योग्य हो गया है कि श्रीमान् का यथोचित सम्मान कर सके।

"मैंने कल विचार किया था कि आपको अब यहाँ के दर्शन कराए जाएँ। इस कारण मैंने श्रीमान् जी से निवेदन कर दिया था और आपने निवेदन स्वीकार कर यहाँ आने का कष्ट किया है। मैं आपका धन्यवाद करता हूँ और स्वागत करता हूँ।"

इस सब समय आचार्य, उनके साथ नगर के कुछ लोग और विद्यार्थीगण खड़े थे। महाराज जलौक और विष्णुकान्त अपने लिए लगाए आसनों पर बैठे थे। प्रशस्ति कहने के उपरान्त आचार्य महाराज के सम्मुख एक आसन पर बैठ गया और कहने लगा, "महाराज! पिछली बार जब आप आए थे तो मैं यहाँ की दुर्व्यवस्था से दुःखित अपने पूर्ण चैतन्य में नहीं था। एक बहुत बड़े उत्तरदायित्व को निभा न सकने के कारण चिन्ताग्रस्त था। इस कारण मैंने श्रीमान् को पहचाना नहीं था। आज स्थिति दूसरी है। मैंने अपने उत्तरदायित्व को निभाना आरम्भ कर दिया है। अब आपकी कृपा से यह स्थान मनुष्योचित निवास–स्थान बन गया है। अतः अब मैंने यही उचित समझा था कि श्रीमान् जी को यहाँ आने का कष्ट दूँ और यहाँ की समस्याओं के विषय में निवेदन करूँ।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराज जलौक विस्मय में आचार्य के कथन को सुन रहा था। उसका विस्मय तो द्वार पर संरक्षक सुभट्टों के कथन से ही आरम्भ हुआ था। सुभट्टों ने कहा था कि महाराज की भीतर प्रतीक्षा हो रही है। तदनन्तर विद्यार्थियों ने कहा था कि उनके आने की बात आचार्य जी जानते हैं। अब आचार्य जी ने यह कहा था कि महाराज उनके निमन्त्रण पर आए हैं। अतः सर्वप्रथम जलौक ने इसी सम्बन्ध में अपना संशय उपस्थित कर दिया, "आचार्यवर। मैं समझ रहा था कि मैं स्वेच्छा से किसी को आने की सूचना दिए बिना यहाँ आ रहा हूँ और आप कह रहे हैं कि आपने यहाँ आने का मुझे निमन्त्रण दिया था। मैं यही विचार कर रहा हूँ कि कदाचित् आप द्वारा भेजा हुआ निमन्त्रण ले जाने वाला दूत राजधानी नहीं पहुँचा।"

आचार्य ने मुस्कराते हुए कहा, "दोनों ही बातें सत्य हैं। यहाँ का दूत वहाँ पहुँचा है और उसने अपना सन्देश भी दिया है, परन्तु मनुष्य के सांसारिक कार्यों में व्यस्त मन उस ज्ञानदाता को देख नहीं रहा जो उसके मन के भीतर बैठा उसके संकल्पों का निर्माण करता है।

"महाराज! यह वही कहानी है कि सर्वशक्तिमान परमात्मा ने आदि ज्ञान का स्रोत मनुष्य को उसके मन में संकल्प–विकल्प उत्पन्न करते हुए दिया था, परन्तु मनुष्य उस ज्ञान से प्रेरित कार्य करता हुआ भी समझता है कि वह ही यह सब अपनी कल्पना से कर रहा है।

"मैंने यह सन्देश तो उसी सर्वशक्तिमान के द्वारा आपके पास भेजा था। उसी ने आपके मन में यहाँ आने का संकल्प उत्पन्न किया और जब संकल्प बन गया तो उसी ने मुझे यह सूचना दे दी कि आज आपके यहाँ दर्शन होंगे।"

विष्णुकान्त तो आरम्भ से ही समझ रहा था कि आचार्य एक सिद्ध योगी है। अतः उसके लिए अब आचार्य जी का पूर्ण कथन स्पष्ट हो गया था।

महाराज जलौक ने इस विषय को आगे न चलाकर कहा, "हम यह देखने आए हैं कि यहाँ अब किस वस्तु का अभाव है?"

"श्रीमान्! मेरे लिए तो कुछ विशेष अभाव न तब था और न अब है। हाँ, मन्दिर तब अत्यन्त अभावग्रस्त था। अब उतना नहीं है, परन्तु ज्ञान असीम है। इस कारण ज्ञानकेन्द्र तो कभी भी अभाव से सर्वथा रहित नहीं हो सकते।

"मैं अभी श्रीमान जी को इस ज्ञानकेन्द्र की सर्वोत्तम निधि, इसका पुस्तकालय दिखाऊँगा और उसकी रक्षा तथा उसमें वृद्धि पा रहे ज्ञान का वृत्तान्त बताऊँगा।

"यह संस्थान अब इतना बड़ा हो गया है कि इसके शत्रुओं, अन्धकार के देवताओं के मन में ईर्ष्या उत्पन्न होने लगी है और इस प्रकाश–पुंज मार्तण्ड को उन्होंने अस्ताचल की ओर धकेलने का प्रयत्न आरम्भ कर दिया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"श्रीमान जी के इस संस्थान का रक्षक बन जाने पर यह षड्यन्त्र आरम्भ हो गया है कि रक्षक को निस्तेज किया जाए और उसके लिए प्रयत्न आरम्भ हो गया है।

"महाराज के घर में सेंध लग चुकी है। उस सेंध में विस्फोटक पदार्थ रखकर पूर्ण राज्य को ही विध्वंस करने का प्रयास किया गया था, परन्तु भगवान् की असीम कृपा से वह विस्फोटक सेंध में नहीं रहा और अब उस विस्फोटक को भगवान् के सात्विक हाथों में दिया जा रहा है।

"अन्धकार के देवताओं को इसका ज्ञान हो गया है कि वह विस्फोटक अपने स्थान पर–सेंध के स्थान पर–नहीं रहा और वे अब एक दूसरी योजना से कार्य करने का यत्न करना चाहते हैं।

"परन्तु महाराज! भगवान् सर्वव्यापक परमात्मा ने जिस साधन से उस विस्फोटक को दुष्ट कार्य करने के स्थान पर सात्विक हाथों में पहुँचाया है वही साधन वह इस नए षड्यन्त्र को विफल करने में प्रयोग करना चाहता है।"

जलौक इस पहेली को समझ नहीं रहा था। एक बात वह समझ रहा था कि वह किसी अद्भुत प्रभायुक्त व्यक्ति द्वारा कही बात को बिना समझे सुन रहा है। जैसे तीव्र प्रकाश में आँखें चुँधिया जाती हैं और उजाला होने पर भी कुछ देख नहीं सकतीं, वही अवस्था जलौक की हो रही थी।

विष्णुकान्त आचार्य जी के अलंकार को समझ रहा था और मुस्करा रहा था।

इस समय आचार्य जी की पाकशाला से महाराज के लिए शीतल पेय आया। महाराज और उनका साथी दस कोस की यात्रा ज्येष्ठ मास के आतप में करते हुए आए थे, अतः उस पेय का स्वागत किया गया। तदनन्तर मिष्ठान्न खाने को मिला।

भवन उस समय तक दर्शकों से खचाखच भर गया था। महाराज के वहाँ आने का समाचार नगर में पहुँचा तो लोग अपना काम करना छोड़ मार्तण्ड मन्दिर में चले आए थे।

वैसे तो महाराज के उस दिन वहाँ आने का समाचार एक दिन पहले ही विख्यात हो चुका था और भदन्त नारायण इस विचार से कि महाराज पूर्व की भाँति पहले विहार में आएँगे, अपने उपासकों को एकत्रित कर उनकी प्रतीक्षा कर रहा था। वह यह भी विचार कर रहा था कि कश्मीर–नरेश आएँगे तो उनके साथ दस–बीस सेवक और अन्य राज्याधिकारी भी आएँगे और उसने नगर के बाहर दो श्रावक स्थित किए हुए थे जिससे वे महाराज को वहीं ठहराकर सूचना भेजें और नगर का शिष्टमण्डल नगर के बाहर से ही महाराज का स्वागत कर विहार में ले आए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नगर के बाहर खड़े श्रावकों ने दो अश्वारोहियों को सरपट घोड़े भगाते आते देखा था। परन्तु उन्होंने समझा था कि वे महाराज के संरक्षक हैं जो महाराज की सवारी के एक कोस आगे आ रहे हैं। इस कारण उन श्रावकों ने इन अश्वारोहियों की ओर ध्यान नहीं दिया।

भदन्त नारायण को महाराज के आने का समाचार तब ज्ञात हुआ जब वहाँ एकत्रित उपासकों में से कुछ लोग उठ–उठकर मार्तण्ड मन्दिर की ओर जाने लगे। उसने उठकर जाते हुए एक व्यक्ति को रोककर पूछा, "कहाँ जा रहे हो?"

"महाराज के दर्शन करने। सुना है कि वह मन्दिर में पहुँच गए हैं।"

इस पर निराशा और क्रोध से नारायण का मुख फीका पड़ गया। वह अपने विहार के बृहत् आगार से निकल विहार के द्वार पर पहुँचा तो नगर के सब लोगों को मन्दिर की ओर जाते देख सब समझ गया।

नारायण ने एक क्षण तक विचार किया और वह चुपचाप विहार के भीतर अपने आगार में चला गया। वहाँ जाकर इस अवहेलना के प्रतिकार पर विचारने लगा।

महाराज मन्दिर में अल्पाहार कर मन्दिर का पुस्तकालय देखने लगे। लगभग एक लक्ष हस्तलिखित ग्रन्थ थे। वहाँ बीस लेखक बैठे ग्रन्थों की प्रतिलिपियाँ तैयार कर रहे थे।

पुस्तकाध्यक्ष ने महर्षि व्यासकृत महाभारत की एक प्रतिलिपि सुन्दर लेख में महाराज को भेंट में दी। महाराज ने भेंट स्वीकार करते हुए उसे पुस्तकालय में रखने को कह दिया। उन्होंने कहा, "हमारे यहाँ आने की स्मृति में सुरक्षित स्थान पर इसे रखा जाए।"

आचार्य जी ने बताया, "श्रीमान्! यह पुस्तकालय महाराज युधिष्ठिर के काल में कश्मीर–नरेश गोनन्द द्वितीय ने स्थापित किया था और उन्होंने इसमें तत्कालीन विभिन्न पुस्तकालयों में सहस्रों वर्ष से एकत्रित वाङ्मय की प्रतिलिपियाँ करवाई थीं। इस प्रकार यहाँ आज से तीन सहस्र वर्ष पूर्व का लिखा साहित्य एकत्रित है।

"महाराज गोनन्द को द्वारिकाधीश भगवान् वासुदेव कृष्ण का आशीर्वाद प्राप्त था और उनके जीवन–काल में यहाँ किसी प्रकार की विषमता उत्पन्न नहीं हुई।

"महाराज गोनन्द का परिवार चलता रहा। आज से पचास वर्ष पूर्व मगध के महाराज चन्द्रगुप्त ने इस भूमि पर अपना साम्राज्य स्थापित किया था और तब से यह देश चन्द्रगुप्त मौर्य की सन्तान के अधीन है। आप भी उसी सम्राट की सन्तान हैं। यद्यपि परिवार की मुख्य धारा से पृथक् हो रहे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आपके परिवार की मुख्य धारा के अगुवा ने यहाँ सांस्कृतिक विजय करने के लिए इन पीत वसनधारी श्रावकों की सेना भेजी है। उनकी सेना के सैनिक तो इस सुन्दर, सुखद देश और सुन्दर नर–नारियों की भूमि के प्राकृतिक प्रलोभनों में फँस पराजित होकर हथियार डाल रहे हैं, परन्तु महाराज अशोक की सहायता से पराजित पीत वसनधारी सैनिकों की सेवा का प्रवाह जारी है। ये सेनानी निरन्तर अक्षुण्ण धारा में यहाँ आ रहे हैं।"

महाराज जलौक और आचार्य पुस्तकालय–कक्ष के बीचोंबीच खड़े वार्तालाप कर रहे थे। अन्य दर्शकगणों को पुस्तकालय में आने की स्वीकृति नहीं थी। आचार्य शंखपाणि ने कहा, "श्रावक यहाँ आते हैं और यहाँ की सुन्दर स्त्रियों के मोहजाल में फँस पीत वसन उतार घर–गृहस्थी कर लेते हैं, परन्तु जितने पीत वसन उतारते हैं उससे अधिक संख्या में यहाँ और भेज दिए जाते हैं। उन सबके भोजन, वस्त्र का व्यय वहाँ का राजकोष दे रहा है। इस कारण मेरे जैसा निराश्रय व्यक्ति उनकी इस राजकीय सेना से पराजित हो रहा था।

"महाराज का किंचिन्मात्र आश्रय पाकर मैं सर्वथा परास्त होता–होता उठकर पुनः युद्ध के लिए तैयार हो गया हूँ और एक वर्ष के अल्पकाल में ही हमने इस देश में उत्पन्न हो रही अपक्रान्ति अवरुद्ध कर दी है। पुनः शास्त्र–चर्चा होने लगी है।"

जलौक ने कहा, "हमारे भी एक विद्वान् पुजारी हैं। नाम है भूरिश्रवा। वह कहते हैं कि राज्य को जनता की मान्यताओं में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। यह कर्म देश के विद्वानों का है कि वे जनमत को ठीक मार्ग पर ले आएँ।"

"भैरवपुरी के पुजारी की बात कह रहे हैं?" आचार्य ने पूछा।

"हाँ, आचार्यवर! मैं शैव उपासक हूँ और वह मुझे शैव मत का प्रचार करने से भी मना करते हैं।"

"वह ठीक कहते हैं। यद्यपि मैं शैव मत और भैरव–उपासनाओं के पक्ष में नहीं, परन्तु उस पुजारी के कथन को ठीक मानता हूँ। किन्तु महाराज! जब एक ओर भारत जैसे देश का अपार धन एक विशिष्ट विचारधारा का पक्ष ले रहा हो वहाँ भूरिश्रवा अथवा शंखपाणि, जो एक पाई की भी सम्पत्ति नहीं रखते, कैसे उसका विरोध कर सकेंगे?"

"हाँ, यह तो ठीक है। परन्तु हमारे परिवार के एक वरिष्ठ सदस्य यह कह रहे हैं कि बौद्ध जीवन–मीमांसा संसार में सर्वश्रेष्ठ है। इस कारण राज्य को उसकी सहायता करनी चाहिए। निकृष्ट जीवन–मीमांसाओं की राज्य को सहायता नहीं करनी चाहिए।

"एक बात उस व्यक्ति ने बताई है कि एक सहस्र कोस लम्बा–चौड़ा देश बिना सेना के शान्ति से निर्वाह कर रहा है। यह चमत्कार इसी कारण है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उनकी जीवन–मीमांसा अतिश्रेष्ठ है।''

''परन्तु वहाँ शान्ति है? यह आपके उस वरिष्ठ अधिकारी से किसी ने झूठ बताया है।''

शंखपाणि मुस्करा रहा था। जलौक समझ रहा था कि उसने महारानी का नाम नहीं लिया; इसी कारण वह मुस्करा रहा है। परन्तु जब शंखपाणि ने भी बिना नाम लिए ही बात कही तो महाराज ने बात आगे चला दी।

जलौक ने कहा, ''तो आपको विदित है कि भारत देश में अशान्ति है?''

''महाराज! वहाँ घोर अशान्ति व्याप्त है। इस पर भी उस अशान्ति का प्रकटीकरण नहीं हो रहा। यह ऐसे ही है जैसे कि किसी नारी को मद्य पिला अचेत कर उससे व्यभिचार किया जाए और उस स्त्री को प्रतिकार न करते देख कह दिया जाए कि स्त्री प्रसन्न है।''

महाराज इसका अर्थ समझने के लिए आचार्य का मुख देखता रह गया। आचार्य ने एक क्षण तक चुप रह कहना जारी रखा। उन्होंने कहा, ''उस राज्य में चोरी, डाका, बलात्कार और सब प्रकार के अनाचार बहुत बड़ी संख्या में होते हैं, परन्तु अपराधियों को न्यायालय में उपस्थित करने के स्थान पर उनको पीत वसन पहना श्रावक समुदाय में सम्मिलित कर लिया जाता है। कहा जाता है कि भगवान् तथागत की अपार कृपा हो गई है और वे अनाचार छोड़ निर्वाण–पथ के राही हो गए हैं।''

इस समय जलौक को सुनन्द की बताई कथा स्मरण हो आई कि कैसे सुनन्द पर बलात्कार करने वालियों के व्यवहार को नारायण ने क्षम्य मान लिया था। केवल इतना ही नहीं, वरंच उन्होंने सुनन्द को बलात्कार सहन करने की प्रेरणा दी थी।

जलौक को चुप देख आचार्य शंखपाणि ने कह दिया, ''महाराज! आपके पास एक विद्वान् रहता है। आपने उसे अपना सेवक–मात्र समझ उसकी अवहेलना की है। मेरी सम्मति है कि आप उसे मन के संशय बताएँगे तो वह आपका पथ–प्रदर्शन कर सकेगा।''

''वह कौन है भगवन्?''

''बड़वा गाँव के रहने वाले चन्द्रकान्त के पुत्र विष्णुकान्त हैं। आपने अभी तक उसकी विद्वत्ता को उचित मान्यता नहीं दी।''

जलौक समझ गया था कि आचार्य किसके विषय में कह रहे हैं। परन्तु वह विस्मय कर रहा था कि यह आचार्य तो राज्य परिवार की बहुत बातें जानता है। इससे महाराज ने और अधिक प्रश्न नहीं किए। उसे भय लग गया कि कहीं उसके भैरव–उपासक होने और भैरवी–चक्र का ही वर्णन न होने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 4 :

जलौक मन्दिर से विहार में जा पहुँचा। इस पर मन्दिर में एकत्रित जनता भी विहार में आ पहुँची। सामान्य जनता तो तमाशा देखने वाली होती है। उसके लिए मन्दिर और विहार में अन्तर नहीं था। साथ ही राजसी पद में आकर्षण था और लोग आचार्य और भदन्त में भेदभाव किए बिना देश के नरेश के पीछे–पीछे एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच गए।

महाराज के आने का समाचार पा भदन्त नारायण भागा–भागा द्वार पर आ पहुँचा और महाराज को आदरपूर्वक भीतर उपासना–भवन में ले गया। वहाँ वही कार्यक्रम दोहराया गया जो एक वर्ष पूर्व महाराज के आने पर सम्पन्न हुआ था। वैसा ही कुछ शब्दों के हेर–फेर से उपदेश भी नारायण का हुआ। तदनन्तर नारायण महाराज को अपने आगार में ले गया।

यहाँ पीने को दूध मिला और दूध पीते हुए नारायण ने अपने मन की बात कह दी। उसने कहा, "महाराज! मैं आशा कर रहा था कि आप पहले इस गृह को विभूषित करेंगे और उपासक आपकी प्रतीक्षा में यहाँ एकत्रित थे।"

जलौक ने मुस्कराते हुए कहा, "यह पहले–पीछे की बात मेरे मन में नहीं थी। शंखपाणि जी आपसे पहले के यहाँ रहने वाले हैं। इससे उनका पहले स्मरण आना स्वाभाविक ही था। पिछली बार जब मैं यहाँ आया था तो उनके अभी तक सशरीर यहाँ होने का ज्ञान नहीं था। इस कारण इस बार विचार किए बिना ही वहाँ जा पहुँचा था।

"साथ ही वह आपसे विद्या और ज्ञान में भी अधिक हैं। सबसे बड़ी बात यह है कि उन्होंने मुझे आमन्त्रित किया था।"

"तो कुछ विशेष प्रयोजन रहा होगा?"

"हाँ! प्रयोजन तो था। वह उन्होंने वर्णन किया है। मैंने सुन लिया है और उस पर अभी कोई आज्ञा नहीं दी।"

"श्रीमान जी ने लाखों रजत तो पहले ही मन्दिर के जीर्णोद्धार पर व्यय किए हैं?"

"यह इसलिए कि वहाँ राज्य की एक अनुपम निधि रखी है। उसकी रक्षा के लिए भवन की मरम्मत आवश्यक थी।"

"महाराज! क्या रखा है वहाँ राज्य का?"

"एक पुस्तकालय है जिसमें एक लक्ष के लगभग ग्रन्थ संगृहीत हैं।"

"वहाँ भगवान् तथागत की दो पटिका, जो तैयार हो गई हैं, भी हैं?"

"हाँ! मुझे बताया गया है कि वे पुस्तकें एक विशेष व्यक्ति को पाटलिपुत्र भेजकर मँगवा ली गई हैं और अब प्रत्येक की बीस–बीस प्रतियाँ तैयार कराई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा रही हैं।''

''ओह! यह तो बहुत ही शुभ काम हुआ है। परन्तु महाराज! अन्य सब–कुछ तो भाररूप ही है। भगवान् तथागत ने कहा है कि शास्त्र पढ़ने से कुछ नहीं हो सकता। आचरण ही मनुष्य को निर्वाण–पद प्राप्त कराने में समर्थ है।''

''यह तो सब महापुरुषों ने कहा है, परन्तु विवाद इस बात पर उत्पन्न होता है कि श्रेष्ठ आचरण क्या है?''

''यह तो है ही और निस्सन्देह यह वह आचरण नहीं जो भैरवी–चक्रों में व्यवहार में आ रहा है।''

''जो लोग उन आचरणों में विश्वास रखते हैं, वे वहाँ जाते हैं। जो उनको ठीक व्यवहार नहीं मानते, वे वहाँ नहीं जाते। दोनों हमारी प्रजा हैं। व्यवहार को ठीक तथा मिथ्या कहना हमारा अर्थात् राज्य का काम नहीं। यह आप गुरुजनों का कार्य है।

''राज्य तो तब ही हस्तक्षेप करता है जब किसी भी मत वाले दूसरों पर बलात्कार करते हैं। अभिप्राय यह है कि किसी को अपना आचरण स्वीकार करने पर बलपूर्वक बाध्य करते हैं।''

''तो नर–बलि मनुष्य के मन में बलि की इच्छा से होती है?''

''बलि हो जाने के उपरान्त तो बलि की इच्छा–अनिच्छा जानना अति कठिन होता है। इस कारण इच्छा–अनिच्छा का विचार छोड़ हमारे राज्य में पिछले बीस वर्ष से नर–बलि वर्जित है और जहाँ तक हमारी सूचना है कि इस राज्य में आजकल यज्ञों में नर–बलि नहीं दी जाती। कोई ऐसी घटना जिस किसी को भी पता चले, उसकी राज्याधिकारियों को सूचना देनी चाहिए।''

नारायण ने बात बदल दी और पूछने लगा, ''पशुओं की बलि क्यों देनी चाहिए?''

''वह तो आप लोगों का भी भोजन है। बिना बलि के आपको खाने को कहाँ से मिलेगा?''

''परन्तु महाराज! हम यज्ञ में बलि दिया पशु नहीं खाते।''

''हम तो कसाई की दुकान को भी यज्ञशाला समझते हैं।''

इसका अभिप्राय भदन्त नारायण नहीं समझा। वह महाराज का मुख देखने लगा। नारायण के समाधान के लिए विष्णुकान्त ने बातों में हस्तक्षेप करते हुए कहा, ''भगवन्! यज्ञ उन सब कर्मों को कहते हैं जिसका उद्‌देश्य लोक–कल्याण हो। भला भगवान् और उसके विहार में रहने वालों की क्षुधा–निवारण से अन्य श्रेष्ठ कार्य क्या हो सकता है? इस कारण आपका पेट भरने के लिए होनेवाली

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पशु–हत्या भी तो यज्ञ ही होगा।''

''तो फिर नर–बलि किसलिए वर्जित की गई है, उसका मांस भी तो किसी का पेट भरने के काम आता होगा?''

''परन्तु वह भगवान् तथागत और उनके समुदाय के लोग प्रयोग नहीं करते। इस कारण यह यज्ञ नहीं और राज्य ने उसे वर्जित कर रखा है।''

नारायण निरुत्तर हो रहा था और उसने बात बदल दी। उसने कहा, ''महाराज! हमारे विहार से एक प्रार्थना–पत्र राज्य को भेजा गया था। उसका उत्तर अभी तक नहीं मिला। मेरा अनुमान है कि उस याचिका को दिए दो मास से अधिक हो गए हैं।''

''वह याचिका मेरे पास आई है। कारण यह कि जिस व्यक्ति के विषय में याचिका थी, वह उस अधिकारी की देख–रेख में नहीं है जिसके पास आपने याचिका की थी। वह व्यक्ति कश्मीर राज्य का बन्दी है और अधिकारी ने आपकी याचिका राज्य के पास भेज दी है।

''राज्य ने वह याचिका मेरे पास भेज दी। यह इस कारण कि राज्यबन्दी राज्य के रक्षामन्त्री का विषय है और राज्य का रक्षामन्त्री मैं हूँ।''

''तो महाराज ने उस याचिका पर क्या निर्णय दिया है?''

''अभी कोई निर्णय नहीं दिया। वैसे तो वह याचिका अभी तक अस्वीकार कर दी जानी चाहिए थी। कारण यह कि राज्य का रक्षामन्त्री उस बन्दी को इस विहार में सुरक्षित नहीं समझता। परन्तु आपकी याचिका पर राज्य के एक वरिष्ठ व्यक्ति की सिफारिश है और रक्षामन्त्री उसकी सिफारिश की अवहेलना करने में कठिनाई अनुभव कर रहा है।

''इस पर भी मैं आपको आश्वासन देता हूँ कि शीघ्र ही इस विषय पर निर्णय दिया जाएगा। हमारे राज्य के नियमानुसार प्रजा की कोई भी याचिका तीन मास से अधिक काल तक निरुत्तरित नहीं रह सकती। इस कारण आपको उसका उत्तर शीघ्र ही मिल जाएगा।''

विष्णुकान्त ने वार्तालाप में रुचि लेते हुए पूछा, ''परन्तु भदन्त नारायण की उस बन्दी में क्या रुचि है?''

भदन्त मांस और बलि के विषय में विष्णुकान्त की युक्ति का उत्तर नहीं दे सका था। इसलिए इस विषय में भी वह इस व्यक्ति से उलझना नहीं चाहता था। इस कारण उसने उसका उत्तर देने के स्थान पर महाराज से पूछ लिया, ''महाराज! इनका परिचय नहीं हुआ।''

''हाँ! यह हैं पण्डित विष्णुकान्त। आजकल रक्षामन्त्री के परामर्शदाता हैं।''

''समझ गया हूँ महाराज! यहाँ के एक भागे हुए उपासक के बन्दीगृह के दारोगा हैं।''

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णुकान्त समझ रहा था कि सुनन्द के विषय में कहा जा रहा है। इस कारण उसने कह दिया, "यहाँ पर बलात्कार किए जा रहे युवक के भागकर आने पर मैं आश्रय देता हूँ।"

"ओह! परन्तु उस पर बलात्कार कौन कर रहा था? वह कोई लड़की अथवा स्त्री थी जिस पर बलात्कार किया जा रहा था?"

"नहीं, भगवन्! वह युवक है और उस पर बलात्कार करने वाली कई श्राविकाएँ थीं। वे सब बिना उसकी इच्छा और अनुमति के उसका भोग करती थीं। उसने भगवान नारायण को इस अत्याचार से अवगत किया था और श्रीमान जी ने कहा था कि समय पाकर सब कुछ शान्त हो जाएगा।

"वह पीड़ित व्यक्ति यहाँ से भागकर महाराज के पास पहुँचा और महाराज ने उसे मेरे आश्रय रख छोड़ा है।"

"आपकी यह सूचना असत्य भी हो सकती है।"

"इसका निश्चय किया गया है और उस युवक पर बलात्कार का प्रमाण कुछ श्राविकाओं के लिखे पत्रों के रूप में मिल गया है। हमारे गुप्तचर यहाँ आए हैं और उनमें से कुछ श्राविकाओं के वक्तव्य लिखाकर ले गए हैं।"

भदन्त नारायण क्रोध में आ गया और बोला, "तो राज्य ने हमारे विहार में चोर भेजे थे?"

"प्रभु!" विष्णुकान्त ने शान्त भाव से ही कहा, "यह चोरी नहीं। यह राज्य का नियमित कार्य है। यह जानना भी आपके लिए लाभप्रद होगा कि उन श्राविकाओं को बलात्कार के अपराध में दण्ड दिया जाना था, परन्तु राज्य के एक महान् व्यक्ति ने उनके अपराध को क्षमा करवा दिया है। इसमें मुख्य कारण यह है कि पीड़ित ने अपना आरोप वापस लेकर कह दिया है कि किसी को दण्ड दिलवाना उसे अभिप्रेत नहीं।

"ओह! तो उस युवक के मन में अपने पर बलात्कार करने वालों से मोह जाग पड़ा है?"

"कुछ ऐसा ही अनुभव हुआ है। उसने राज्य से प्रार्थना की है कि उन भटकी बहनों पर दया की जाए।"

जलौक उठ खड़ा हुआ। परन्तु चलने से पूर्व विष्णुकान्त ने एक बात कह दी। उसने कहा, "राज्य की ओर से आपके पास एक आदेश आने वाला है।"

"क्या?"

"यही कि आप सौगन्धपूर्वक कश्मीर के नागरिक होने की घोषणा कर दें।"

"आदेश आने पर उचित उत्तर भेज दिया जाएगा।"

राजधानी को लौटते हुए पुनः महाराज और विष्णुकान्त में दोनों आचार्यों

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के विषय में बातचीत होने लगी।

महाराज ने कहा, "हमने यहाँ आने का निश्चय कल तीसरे प्रहर किया था और उस निश्चय को किसी को बताया नहीं था। आपको भी हमने यह नहीं बताया कि हम इस स्थान पर आ रहे हैं। इस कारण हम नहीं जान सके कि आचार्य शंखपाणि जी का कहना कि हमें निमन्त्रण भेजा है, इससे उनका क्या अभिप्राय था?"

"महाराज! ऐसा प्रतीत होता है कि आचार्य जी की इच्छा आपके दर्शन की कल हुई थी और उन्होंने वह इच्छा सर्वव्यापक परमात्मा के द्वारा आपके मन तक पहुँचाई थी। आपके मन ने आपको यहाँ आने के लिए तैयार किया तो उसी सर्वव्यापक परमात्मा ने ही आचार्य जी को उनके निमन्त्रण की स्वीकृति उन तक पहुँचा दी थी।"

जलौक मुस्कराया और कहने लगा, "परमात्मा बहुत ही कुशल सन्देशवाहक है क्या?"

"सन्देशवाहक से बहुत अधिक है। महाराज! वह सर्वगुणसम्पन्न है।"

"परन्तु वह तो निर्गुण है?"

"नहीं महाराज! वह सर्वगुणों का स्वामी है। जहाँ निर्गुण कहा गया है वहाँ अभिप्राय प्रकृति के गुणों से है। सत्व, रजस् और तमस् गुण उसमें नहीं हैं।"

"तब तो यह मानना पड़ेगा कि शंखपाणि जी भूरिश्रवा से इस दिशा में अधिक गुणवान हैं। वह परमात्मा के अधिक समीप हैं। परन्तु एक गुण भूरिश्रवा में है जो आचार्य जी में नहीं है। यदि होता तो उनकी पिछले वर्ष की–सी दुर्दशा न होती।"

"महाराज! आपका अभिप्राय स्वर्ण–निर्माण से है?"

"हाँ।"

"वह तो महाराज! एक कुम्हार का–सा काम है। विद्वान् ब्राह्मण कुम्हार के व्यवसाय को नहीं कर सका तो उसे अविद्वान् नहीं कहा जा सकता। जैसे मिट्टी के गुणों को जानकर कुम्हार मिट्टी के विभिन्न प्रकार के बर्तन बना सकता है वैसे ही भूरिश्रवा प्रकृति के गुणों को जान उससे स्वर्णादि बना सकता है। परन्तु आचार्य जी का काम कुम्हार से श्रेष्ठ है। वह मानव का मन–निर्माण कर रहे हैं।"

"परन्तु वह भदन्त नारायण के मन को प्रेरणा नहीं दे सके।"

"महाराज! इसमें दोष आचार्य जी का नहीं। वरंच यह दोष तो भदन्त के पूर्वग्रह का है। यदि किसी प्रकार भदन्त जी के बाल्यकाल का इतिहास जाना जाए तो पता चल सकता है कि उनके मन पर कैसे पूर्वग्रह संचित हैं जिस कारण उनको एक श्रेष्ठ आत्मा का समीप्य नहीं मिल सका।"

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"हाँ तो, नरकण्ट के विषय में क्या कहते हो?"

"महाराज! आपने एक बात की ओर ध्यान नहीं दिया। मैंने भदन्त जी से एक बात कही थी। वह वास्तव में मैंने अपने मन से कही थी। राज्य की ओर से वैसा कोई आदेश नहीं है।"

"नागरिकता के विषय में कह रहे हो? हमारे राज्य में कोई भी आकर रह सकता है।"

"हाँ, महाराज! मेरे कहने का अभिप्राय यह था कि राज्य का बन्दी उसकी देख–रेख में नहीं दिया जा सकता जो राज्य का निष्ठावान नागरिक नहीं है।"

जलौक के मन में प्रकाश होने लगा था। सुनन्द के विषय में भी यही समस्या उपस्थित हुई थी। भूरिश्रवा का कहना था कि उन श्राविकाओं को दण्ड देना चाहिए। परन्तु श्राविकाओं ने कहा था कि वे कश्मीर राज्य की नागरिक नहीं। इससे वे राज्य–नियमों के पालन न करने के कारण दण्डित नहीं हो सकतीं। इस पर सुनन्द ने महारानी के कहने पर अपना आरोप वापस ले लिया था।

अब पुनः वही प्रश्न उपस्थित हुआ था। विष्णुकान्त का कहना ठीक था कि राज्य का बन्दी राज्य के निष्ठावान नागरिक के अतिरिक्त किसी अन्य को नहीं सौंपा जा सकता।

महाराज ने पूछ लिया, "धर्म की इस विषय में क्या व्यवस्था है कि विदेशियों से राज्य का व्यवहार किस नियम से किया जाए?"

"धर्म–व्यवस्था स्पष्ट है। वह यह कि विदेशियों का व्यवहार राज्य के नागरिक के साथ राज्य के नियमानुसार होना चाहिए। यदि कोई विदेशी राज्य–नियम के विपरीत किसी प्रकार का व्यवहार करे तो वह दोषी है और उसको दण्ड दिया जा सकता है। कम–से–कम उसे राज्य से बाहर तो निकाला ही जा सकता है।"

"यह तो बहुत कठिन होगा। आज हम नारायण को देश से बाहर निकाल दें तो कल वह किसी अन्य दिशा से पुनः देश में आ सकता है। राज्य किसी प्रकार का पिंजरा तो है नहीं। इसकी सीमाएँ खुली हैं।"

"ऐसी अवस्था में महाराज अपराधी को दण्ड दे सकते हैं। यह सर्वथा धर्मानुसार होगा।"

जलौक आज विष्णुकान्त के गुणों को जान गया था। वह बहुत स्पष्ट युक्ति करता था।

कुछ दूर तक जलौक गम्भीर भाव में चलता गया। उसे एक अन्य बात स्मरण हो आई। उसने पूछा, "आचार्य जी ने आपकी प्रशंसा की है। क्या वह आपके पूर्व परिचित हैं?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"जहाँ तक मुझे स्मरण है कि मैंने उनके आज ही दर्शन किए हैं।"

"तो उन्होंने आपकी इतनी प्रशंसा आपके मुख पर ही किस कारण कर दी है?"

"महाराज! मैं नहीं जानता। उन्होंने मेरे मस्तक पर किसी बात का लक्षण देखा होगा। अन्यथा उनके सम्मुख तो मैंने एक शब्द भी नहीं कहा था।"

"फिर भी हम आचार्य जी की सिफारिश को मान आपकी परीक्षा करेंगे।"

"मैं तो आपका आश्रित ही हूँ।"

"नहीं, विष्णुकान्त! आचार्य जी ने कहा है कि हमने आपको सेवकमात्र समझ आपसे अन्याय किया है।"

"मुझे इसमें किसी प्रकार का अन्याय समझ में नहीं आ रहा। आपने मुझपर बहुत बड़ा विश्वास कर रखा है। भावी कश्मीर–नरेश को मेरी शिक्षा में दे रखा है।"

"परन्तु अब हम इसके अतिरिक्त भी आपसे काम लेने का विचार कर रहे हैं।"

: 5 :

बौद्ध संघ में सब श्रावक और उपासक एक संगठन में कार्य करते थे। संघ की एक महासमिति थी जिसका केन्द्रस्थान गया में था। वहाँ से समिति पूर्ण देश के बौद्ध धर्म–सम्बन्धी कार्यों का संचालन करती थी और 'संघे शक्तिः' का गुण सब बौद्ध मतावलम्बियों के मन में इतनी दृढ़तापूर्वक बिठाया जाता था कि पूर्ण देश के श्रावक और उपासक इस महासमिति के आदेशों को मानते थे।

इसी महासमिति का आदेश मार्तण्ड विहार के संचालक, भदंत्त नारायण को आया था कि नरकण्ट को मुक्त करा विहार में प्रवेश देने का यत्न किया जाए। नारायण पहले तो इस आदेश का कारण समझ ही नहीं सका। इसे समझने के लिए उसने महारानी जी की सिफारिश से नरकण्ट से मिलने की स्वीकृति ले ली।

यह तो नरकण्ट ने ही बताया कि उसने बौद्ध महासमिति को एक पत्र लिखा था।

नारायण ने उससे पूछा, "भगवन्! पत्र में क्या लिखा था?"

"यही कि मैं बौद्ध मत स्वीकार करना चाहता हूँ, परन्तु यह मत है क्या, इसके विषय में मुझे ज्ञान प्राप्त करने की सुविधा दी जाए। इस पत्र का उत्तर मेरे पास नहीं आया।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"मुझे आदेश आया है कि आपको विहार में भरती करने का यत्न करूँ।"

"कैसे यत्न करेंगे?"

"मैं मुख्य न्यायाधीश के पास एक याचिका कर दूँगा कि आपके मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया है। यह भगवान् तथागत की कृपा से हो रहा है और आप अपना भविष्य सुधारने के लिए बौद्ध श्रावक बनना चाहते हैं। अतः आपको संन्यास़ लेने की स्वीकृति मिल जाए।"

"परन्तु यह सम्भव है कि आपसे इस विषय में पूछा जाए। यदि आपने भी मेरी याचिका का समर्थन किया तो फिर हम प्रयत्न करेंगे कि आपको दुर्ग से निकाल विहार में भेज दिया जाए। वहाँ आप स्वतन्त्रता से घूम–फिर सकेंगे।"

"तो क्या मैं कश्मीर से बाहर भी जा सकूँगा?"

"तब आप भूमण्डल के नागरिक होंगे और आपको बन्दी बनाकर किसी देश अथवा मकान में बन्द नहीं रखा जा सकेगा।"

"और मैं अपने बाल–बच्चों से मिल सकूँगा?"

"हाँ, मिल सकेंगे। परन्तु जब तक पीत वसन धारण किए रखेंगे, आप पत्नी के साथ नहीं रह सकेंगे।"

"परन्तु क्या मैं कभी यह पीत वसन उतार भी सकूँगा?"

"मानव–स्वतन्त्रता का यही तो अर्थ है।"

"तब आप याचिका करिए और मुझसे पूछे जाने पर मैं इसका समर्थन कर दूँगा।"

वास्तव में यही तो नरकण्ट की योजना थी। वह किसी–न–किसी प्रकार से कश्मीर राज्य के बन्दीगृह से निकलना चाहता था।

नारायण ने कश्मीर राज्य के मुख्य न्यायाधीश के पास याचिका कर दी। न्यायाधीश ने याचिका मन्त्रिमण्डल के पास भेज दी। मन्त्रिमण्डल ने महाराज को इस पर अपनी सम्मति देने के लिए कहा।

नारायण महारानी कादम्बिनी से भी मिला। महारानी ने पहले तो राज्य–कार्य में हस्तक्षेप करने से इंकार कर दिया, परन्तु जब नारायण ने मानवता के नाम पर याचिका की तो उसका नारी–हृदय द्रवित हो उठा और उसने महाराज से नरकण्ट की सिफारिश कर दी।

इसी जाँच–पड़ताल के सन्दर्भ में महाराज जलौक विष्णुकान्त के साथ आचार्य शंखपाणि के पास गया था। शंखपाणि का विष्णुकान्त के पिता चन्द्रकान्त से परिचय था। वह जानता था कि पण्डित और उसका परिवार गीता के भक्त हैं। यद्यपि वासुदेव कृष्ण की महिमा परमात्मा के अवतार तक अभी तक नहीं पहुँची थी; फिर भी व्यासकृत महाभारत की सामान्य रूप में और भगवद्गीता की विशेष रूप में महिमा वैदिक धर्मानुयायियों में बहुत थी। इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नाते शंखपाणि ने विष्णुकान्त की सिफारिश की थी।

विष्णुकान्त ने नरकण्ट को नारायण के पास भेजने का विरोध किया था। इस कारण महाराज ने विष्णुकान्त की युक्ति पर कार्य किया। मन्त्रिमण्डल से नारायण को एक पत्र लिखवा दिया जिसमें पूछा गया कि वह कश्मीर का नागरिक है अथवा नहीं।

नारायण समझ गया कि यह प्रश्न विष्णुकान्त के मस्तिष्क की उपज है। उसने उत्तर में लिखा :

"मैं संन्यासी हूँ और संन्यासी किसी देश का नागरिक नहीं होता। वह भूमण्डल का नागरिक है।"

मन्त्रिमण्डल के इस प्रश्न को जान नारायण समझ गया कि नरकण्ट पीले वसन की आड़ में राजनीति खेलना चाहता है। इस कारण विचार करने लगा कि क्या बौद्ध महासमिति को इस बात का भी ज्ञान है। इस बात को जानने के लिए उसने नरकण्ट को कह दिया, "इस विषय में आपको गया वाली महासमिति से पता करना होगा।"

"मैंने पता किया है।" नरकण्ट का उत्तर था।

"तो वहाँ से क्या उत्तर आया है?"

"उत्तर यही है कि प्रतीक्षा करो और काल अपना रहस्य स्वयं बता देगा।"

"तब तो श्रीमान्! मुझे यत्न करने दीजिए और आप काल की प्रतीक्षा करिए।"

नारायण को जब यह समझ आया कि महासमिति चाहती है कि कश्मीर राजनीति में बौद्ध संघ भाग लेना आरम्भ करे तो वह निश्चिन्त हो याचिका करने चल पड़ा।

याचिका मुख्य न्यायाधीश के पास की गई थी और उसने याचिका मन्त्रिमण्डल के पास भेज दी थी। वह इस विषय में अपने को हस्तक्षेप करने का अधिकारी नहीं मानता था। मन्त्रिमण्डल ने महाराज को इस विषय पर अपनी सम्मति देने के लिए कह दिया। इस पर जलौक और महारानी कादम्बिनी के बीच बातचीत हो गई। महाराज पर कादम्बिनी दबाव डाल रही थी कि राज्य का यह अधिकार नहीं कि किसी मानव की आत्मोन्नति में बाधक बने।

महाराज ने यही उचित समझा कि नारायण से मिलकर इस याचिका का कारण पता करे। वह वहाँ गुप्तचर भेज पता करना चाहता था कि एक दिन एकाएक जलौक के मन में विचार उत्पन्न हुआ कि स्वयं चलना चाहिए और फिर मार्तण्ड मन्दिर की व्यवस्था का ज्ञान भी प्राप्त करना चाहिए। वहाँ जाते समय उसे विष्णुकान्त को साथ ले चलने का विचार आया। विष्णुकान्त न तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

शैव था और न ही बौद्ध। इस कारण उसे साथ ले जाना उचित प्रतीत हुआ।

मार्तण्ड मन्दिर की यात्रा के उपरान्त एक दिन महारानी ने महाराज को नारायण की याचिका के विषय में स्मरण कराया तो महाराज ने कह दिया, "मन्त्रिमण्डल ने नारायण से पूछा है कि वह किस देश का नागरिक है।"

"परन्तु महाराज! संन्यासी से यह प्रश्न किसलिए पूछा जा रहा है?"

"इसलिए कि एक राज्यबन्दी को राज्य के निष्ठावान नागरिक के अतिरिक्त किसी अन्य के अधिकार में नहीं दिया जा सकता।"

कादम्बिनी ने कहा, "यह प्रश्न अब कैसे उत्पन्न हो गया? याचिका तो थी कि उसे मुक्त कर दिया जाए क्योंकि उसके मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया है।"

"वैरागी को अपने वैराग्य की घोषणा करने की क्या आवश्यकता आ पड़ी है? यही विचारणीय बात है।"

"मैं समझी नहीं महाराज कि मन्त्रिमण्डल का इससे क्या अभिप्राय है।"

"अभिप्राय तो स्पष्ट है कि नरकण्ट के वैराग्य की कथा असत्य है और राज्य उसे मुक्त नहीं कर सकता। हाँ, बन्दी रहता हुआ वह बौद्ध ग्रन्थों का अध्ययन कर सकता है।"

"तो महाराज! ऐसा किया जाए कि उसे किसी धर्मगुरु से बन्दीगृह में ही उपदेश सुनने की स्वीकृति दी जाए।"

"यह नरकण्ट को स्वयं एक याचिका में कहना चाहिए। उपदेश देने वाले को नहीं।"

इस प्रकार नारायण ने जब देखा कि विष्णुकान्त की योजना से तो नरकण्ट विहार में नहीं भेजा जाएगा तो उसने विहार को ही उठाकर बन्दीगृह में ले जाने की योजना बना दी।

नरकण्ट ने याचिका की और उसे अपनी इच्छा के किसी गुरु से उपदेश सुनने की स्वीकृति मिल गई।

इस प्रकार सप्ताह में एक बार नारायण ने दुर्ग में नरकण्ट से मिलने का कार्यक्रम बना लिया। जिस दिन वह राजप्रासाद में उपासना के लिए आता था, उसी दिन वह दुर्ग में भी जाने लगा।

शंखपाणि के कहने पर महाराज जलौक ने विष्णुकान्त को अपना निजी परामर्शदाता नियुक्त कर लिया। इस विषय में भी महाराज और महारानी में विचार–विनिमय हुआ था। बात हुई थी भूरिश्रवा के यह कहने पर कि राज्य को साम्प्रदायिक झगड़ों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। महाराज ने कादम्बिनी को बताया, "आचार्य शंखपाणि जी यह कह रहे थे कि भूरिश्रवा की बात ठीक है कि राज्य को सम्प्रदायों के झगड़ों में नहीं पड़ना चाहिए, परन्तु जब भारत

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसे विशाल देश का राज्य अपनी पूर्ण सामर्थ्य के साथ एक सम्प्रदाय की सहायता करता हो तो दूसरे सम्प्रदाय अनाथों की भाँति पराजित हो जाएँगे। उनका कहना है कि उनके पीत वसनधारी सेना के सैनिक यहाँ पराजित हो अपनी सेना को छोड़ रहे हैं, परन्तु पीछे से इन पीत वसनधारियों की बाढ़ आ रही है। उस जल–प्रवाह में निराश्रित लोग बह जाएँगे।"

"मैं उनका अभिप्राय यह समझा हूँ कि मुझे उन निःसहाय बाढ़ग्रस्त निराश्रितों का आश्रय बन जाना चाहिए।"

"इसका अभिप्राय है कि इन साम्प्रदायिक झगड़ों में अब राज्य को हस्तक्षेप करना चाहिए?"

"इस विषय में उन्होंने मुझे विष्णुकान्त से सम्मति करने के लिए कहा है।"

"तो आचार्य शंखपाणि विष्णुकान्त को जानते हैं?"

"ऐसा प्रतीत होता है कि उनका विष्णुकान्त के पिता पं. चन्द्रकान्त से परिचय रहा है। वह उनका पुत्र कह विष्णुकान्त का परिचय दे रहे थे।"

महारानी ने स्वीकार करते हुए कहा, "विष्णुकान्त है तो विद्वान् व्यक्ति। उसने दो वर्ष में ही सुनन्द को दामोदर से अधिक योग्य कर दिया है।"

"तो तुम सुनन्द से मिली हो?"

"हाँ, और मुझे ज्ञात हुआ है कि दुर्गा भी उससे मिलती रहती है।"

"किसने बताया है यह?"

"दुर्गा की सखी नीति ने अपनी माँ को बताया था और उसने मुझे बताया है। मैंने महामन्त्री की पत्नी सुमित्रा से ही कहा है कि वह नीति से पता करे कि दोनों कब और कहाँ मिलते हैं।"

"तो कुछ पता चला है?"

"अभी नहीं। परन्तु मैं विचार कर रही हूँ कि चोरी–चोरी भेंट करने से तो प्रत्यक्ष में अपने सम्मुख भेंट करने देना अधिक ठीक होगा।"

"मैं विष्णुकान्त से पता करूँगा और तुम दुर्गा से पता करना।"

उसी दिन विष्णुकान्त जब महाराज से मिलने आया तो जलौक ने कहा, "मुझे विश्वस्त सूत्रों से ज्ञात हुआ है कि दुर्गा और सुनन्द परस्पर मिलते रहते हैं।"

"तो क्या आपने इनमें से किसी को परस्पर न मिलने का आदेश दे रखा है?"

"आदेश तो नहीं, परन्तु उसे आपके घर में रखने का उद्देश्य ही यह था कि इस लड़के को दुर्गा से पृथक् रखा जाए।"

"महाराज! पृथक् तो वे हैं ही। परन्तु वे बन्दी नहीं। आज से कई मास पूर्व दुर्गा की एक सेविका मेरी पत्नी के पास आई थी और दुर्गा का एक पत्र

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दे गई थी। उस पत्र में दुर्गा ने उसे मिलने के लिए बुलाया था।

"मेरी पत्नी पद्मा, दुर्गा से मिली तो उसने पूछा, 'क्या सुनन्द आपके घर में बन्दी के रूप में है?'

"पद्मा ने बताया कि नहीं, बन्दी नहीं है, तो राजकुमारी ने पूछा था, 'क्या मैं उससे मिल सकती हूँ?'

"पद्मा का कहना था, 'तुम हमारे घर में आकर प्रत्यक्ष रूप में मिल सकती हो। चोरी–चोरी नहीं मिल सकती।'

"उसके उपरान्त दुर्गा सप्ताह में एक–आध बार आती है और पद्मा के सम्मुख दोनों में भेंट होती है। पद्मा का कहना है कि दोनों के वार्त्तालाप में कुछ भी तो गोपनीय नहीं होता। कुछ बचपन की और कुछ साहित्यिक नोंक–झोंक हुआ करती है। इसके अतिरिक्त कुछ नहीं।"

"आपने कभी बताया नहीं?"

"मैं समझता हूँ कि जब राजकुमारी को राजप्रासाद से बाहर घूमने की स्वीकृति मिल गई है तो उसे मेरे घर में आने की भी स्वीकृति है। मैं कश्मीर राज्य के किसी भी नागरिक से घटिया व्यक्ति नहीं हूँ।"

जलौक विष्णुकान्त की युक्ति पर चकित था। यह सत्य था कि राजकुमारी अब अपनी सेविका तथा सहेलियों के साथ राजप्रासाद के बाहर जाती थी। फिर भला विष्णुकान्त के घर जाने से क्यों मना किया जाए?

: 6 :

भदन्त नारायण को मार्तण्ड विहार चलाते हुए सात वर्ष हो चुके थे और इस काल में उसने राज्य में बीस अन्य छोटे–छोटे विहार खोल दिए थे। इन सबमें कश्मीर से बाहर के व्यक्ति अध्यक्ष थे और वहाँ कश्मीर के नागरिकों को बौद्ध बनने की प्रेरणा दी जाती थी। इस समय तक कई सहस्र कश्मीरी नागरिक बौद्ध श्रावक बन चुके थे और पूर्ण राज्य में कई लाख के लगभग उपासक थे। इन सबको एक नियन्त्रित समुदाय की भाँति रहने की प्रेरणा दी जा रही थी।

इन उपासकों में अधिकांश स्त्रियाँ तथा कम शिक्षित और अल्पायु के लोग थे।

जिस दिन से नारायण नरकण्ट को उपदेश देने जाने लगा था वह नरकण्ट और बौद्धमहासमिति की नीति को समझने लगा था। उसे ज्ञात था कि भारत में अशोक के एक क्रूर तथा निरंकुश शासक विख्यात होने का लाभ उठाकर उसे बौद्ध बनने पर विवश किया गया था। महासमिति की कश्मीर

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में इसी प्रकार की योजना चलाने की बात वह समझ रहा था। अतः जितने भी उपदेशक मगध राज्य से आते थे, वह महाराज के भैरवी–चक्रों में सम्मिलित होने और अपनी कुमारी लड़की के अवस्त्र वहाँ पूजा करने की बात जनता में कहते नहीं थकते थे। इससे महाराज की प्रतिष्ठा कम होने लगी थी। नारायण अब किसी अवसर की प्रतीक्षा में था जब वह महाराज को घेरकर बौद्ध उपासक बना ले।

राजप्रासाद की उपासनाओं में महारानी के अतिरिक्त दुर्गा, उसकी दो सखियाँ और बीस के लगभग राजप्रासाद के अन्य सेवक–सेविकाएँ उपस्थित होते थे।

उपासना राजप्रासाद के एक आगार में हुआ करती थी। ऐसे ही एक अवसर पर नारायण ने महारानी से कहा, ''महारानी जी संघ की सहायता नहीं कर रहीं। संघ आपसे बहुत आशा करता है।''

कादम्बिनी ने यह निश्चय किया हुआ था कि वह उपासनाओं में अपने को राजपरिवार की एक सदस्या नहीं मानेगी। उस समय वह एक सामान्य नागरिक के रूप में ही अपने को समझेगी।

अतः जब नारायण ने प्रश्न किया तो कादम्बिनी ने कह दिया, ''भगवन्! जब मैं उपासना में सम्मिलित होने आती हूँ तो अपने महारानी–पद को उतारकर इस आगार के बाहर रख आती हूँ।''

नारायण विचार करने लगा–इस दोहरे जीवन का अर्थ क्या है और यह कैसे सम्भव हो सकता है? कुछ विचारकर उसने पूछ लिया, ''तो इस समय आप कश्मीर राज्य की महारानी नही हैं?''

''हाँ, गुरुदेव! आप ठीक समझे हैं। मैं इस देश में उत्पन्न होने से, यहाँ के राज्य का संरक्षण पाने से यहाँ की नागरिक तो सदैव रहती हूँ। वह मैं महाराज से विवाह से पूर्व भी थी। परन्तु यहाँ के नरेश की पत्नी तो नागरिक होने के बाद बनी थी। इन उपासनाओं में भी मैं एक नागरिक के रूप में ही सम्मिलित होती हूँ।''

''परन्तु देवी!'' अब नारायण ने भी उसे महारानी न कहकर सामान्य रूप में ही सम्बोधित किया, ''बौद्धसंघ के विषय में आप क्या समझती हैं?''

''मुझे बौद्ध संघ की जीवन–मीमांसा पसन्द है।''

''आप संघ का प्रचार चाहती हैं?''

''हाँ, भगवन्!''

''यदि उसके प्रचार के लिए आपको कुछ यत्न करना पड़े तो आप करेंगी?''

''हाँ, भगवन्! यथाशक्ति करूँगी।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो देवी अपने को बौद्ध उपासिका घोषित कर दें।"

"आगामी सप्ताह कर दूँगी।"

"तब स्वयमेव आपके पद का प्रयोग संघ की सेवा में होने लगेगा।"

"जो स्वयमेव होता है, मुझे उसमें आपत्ति नहीं। मैं स्वयं अपने पद का प्रयोग नहीं करना चाहती।"

नारायण ने अपना आशय समझा दिया। उसने कहा, "इस समय दो परस्पर–विरोधी धाराएँ देश की जनता के सम्मुख उपस्थित हैं। एक यह भैरवी–चक्र है। यह एक अति घृणित प्रकार का व्यवहार है। यदि आपको विदित न हो तो मैं एक उपासिका आपके पास भेज सकता हूँ जो आपको भैरवी–चक्र में होने वाले व्यवहार का सत्य वृत्तान्त बता सकती है। इस विचारधारा के लोग देवता के सम्मुख मनुष्यों की बलि चढ़ाते हैं और फिर उसका माँस पकाकर खाते हैं। पशुओं की बलि तो एक सामान्य बात है। पूज्यों और माँ तथा बहन से भी विषय–भोग देवता के सम्मुख करते हैं।

"दूसरी ओर हम लोग हैं जो एक च्यूँटी तक को भी मारना पाप मानते है। पुरुष–स्त्रियाँ इकट्ठे रहते हुए भी बहन–भाई की भाँति रहते हैं। हम सत्य, शुचि, अस्तेय, अक्रोध और अहिंसा के व्यवहार को धर्म मानते हैं।

"यदि देवी जी को मेरे इस कथन पर अविश्वास हो तो मैं साक्षी उपस्थित कर सकता हूँ।

"उपासिका बनते ही आपको एक मानव के नाते अपना पक्ष लेना पड़ेगा। आप मार–काट, दुराचार और व्यभिचार का पक्ष लेंगी अथवा न्याय, धर्म, दया तथा क्षमा का पक्ष लेंगी?"

नारायण प्रभावी वक्ता तो था ही, अतः उसके उक्त कथन ने कादम्बिनी का मुख बन्द कर दिया। वह दोनों पक्ष की बातें जानती थी और वह इस पक्ष को श्रेष्ठ मानकर ही बौद्ध उपासनाओं में सम्मिलित होती थी। इस कारण वह गम्भीर हो नारायण के वक्तव्य पर विचार करने लगी। नारायण ने कह दिया, "देवी! हमारा राज्य से किसी प्रकार का झगड़ा नहीं है, परन्तु राज्य में जो दैत्य प्रवृत्ति है, उसका ही हम विरोध करना चाहते हैं।"

"तो भगवन्! आप मुझे समय दीजिए। मुझे विचार करने दीजिए। मेरे दो हाथ हैं। दोनों हाथों को विरोधी विचार पकड़कर अपनी–अपनी ओर खींच रहे हैं। मैं इस विरोधी खींचातानी में क्षत–विक्षत हो रही अनुभव करती हूँ। इस कारण मुझे समय दीजिए कि मैं विचार कर अपना पक्ष ग्रहण कर सकूँ।"

"ठीक है। आगामी उपासना पर मैं आपसे स्पष्ट उत्तर की प्रतीक्षा करूँगा।"

जब से विष्णुकान्त को महाराज ने परामर्शदाता स्वीकार किया था तब से

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वह बौद्ध संघ पर अपने गुप्तचर नियुक्त किए हुए था। राजप्रासाद की एक सेविका नन्दिनी को उसने नारायण की उपासनाओं के समाचार लाने के लिए नियुक्त कर रखा था। यह महाराज जलौक की जानकारी में था।

जिस दिन नारायण महारानी को उक्त उपदेश और प्रेरणा दे गया उसी सायंकाल नन्दिनी विष्णुकान्त के घर जा पहुँची। विष्णुकान्त इस समय महाराज से मिलने गया हुआ था।

वह महाराज को बता रहा था, ''महाराज! मेरी जानकारी में राजपरिवार की महिमा राज्य में बहुत हीन हो रही है। बौद्धों ने किंचिन्मात्र भूल का आश्रय लेकर आपकी निन्दा का पहाड़ खड़ा कर दिया है।''

''कौन–सी किंचिन्मात्र भूल का आश्रय लिया जा रहा है?''

''आपने भूरिश्रवा को उचित से अधिक प्रतिष्ठा दे रखी है। उसकी बदनामी के साथ आपके प्रति भी अपमानजनक बातें कही जा रही हैं।''

''परन्तु विष्णुकान्त! जानते हो कि भूरिश्रवा ने राज्य की दो युद्धों में अपार धन से सहायता की थी? राज्य उसका बहुत ज्यादा ऋणी है।''

''महाराज! धन–सम्पदा की बात तो कोई जानता नहीं। लोग यह जानते हैं कि महारानी भैरव–उपासिका रही हैं और राजकुमारी भैरवी–चक्र में सम्मिलित हो चुकी हैं।''

''मैं समझता हूँ कि यह मेरी निजी बात है।''

''ठीक है। परन्तु सामान्य शिक्षा के लोग व्यक्ति और समष्टि में भेद नहीं जानते। ये तो परमात्मा को भी अपनी रुचि अनुसार सजाना चाहते है। राजा तो उससे बहुत छोटा है।''

''ये लोग हमसे अब क्या चाहते हैं?''

''वे आपसे राजपद–त्याग के लिए कहेंगे।''

''इसके लिए मैं सदैव तैयार रहता हूँ।''

''पर महाराज! देश के बुद्धिशील लोग यह नहीं चाहते।''

''तो यह उनका काम है कि वे मेरे मान और मेरी उचित स्वतन्त्रता की रक्षा करें।''

''इसी अर्थ मैं आपसे आज एक निवेदन करना चाहता हूँ।''

''हाँ, कहो।''

''आप सेना और विद्वानों को अपने पक्ष में करने का यत्न करें।''

''कैसे करूँ?''

''आप मुझे अपने मन्त्रिमण्डल से वार्तालाप करने की स्वीकृति दें। मैं समझता हूँ कि देश के बुद्धिशीलों के वे अगुवा हैं।''

''तो मिलो। मैंने मन्त्रिमण्डल में कह रखा है कि तुम मेरे परामर्शदाता हो।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तब ठीक है। मैं आज से ही इस दिशा में यत्न आरम्भ करता हूँ।" विष्णुकान्त यह चाहता था कि जनता के पढ़े–लिखे लोगों को राज्य और राजपरिवार के पक्ष में खड़ा कर उस पर लग रहे लांछनों का प्रतिवाद उन से ही करवाया जाए। इस दिशा में वह मन्त्रीगण से ही अपना विचार प्रकट करना चाहता था।

इस प्रकार महाराज से कार्य करने की स्वीकृति ले वह राजप्रासाद से घर को लौट गया।

इन दिनों सुनन्द राजकुमार दामोदर के साथ घोड़े की सवारी करने जाया करता था। वह दामोदर के साथ गया हुआ था। आजकल दोनों में बहुत गहरी छन रही थी।

विष्णुकान्त घर पर पहुँचा तो वहाँ घर की बैठक में नन्दिनी उसकी प्रतीक्षा में बैठी मिल गई। उसने उपासना के उपरान्त नारायण और महारानी में हुआ वार्तालाप सुना दिया।

नारायण के वक्तव्य को सुन चिन्ता अनुभव करता हुआ वह चुप रहा। एक बात नारायण के वक्तव्य से स्पष्ट थी कि वह अब अपने को राज्य में एक ध्यान देने योग्य व्यक्ति समझने लगा था।

उपासना में हुए वार्तालाप के साथ यह समाचार जोड़ कि भारतवर्ष से नित्य झुण्ड–के–झुण्ड सिरमुँडे पीतवसनधारी श्रावक कश्मीर में आ रहे हैं, विष्णुकान्त निकट भविष्य में किसी प्रकार के झगड़े की आशंका अनुभव करने लगा था।

नन्दिनी के जाने पर वह महामन्त्री के निवास–गृह को चल पड़ा। उसके घर से पचास पग के अन्तर पर ही उसका गृह था। महामन्त्री विप्रबन्धु दिन–भर राजकार्य से थका हुआ घर पर पहुँचा था कि विष्णुकान्त वहाँ जा पहुँचा।

विप्रबन्धु को ज्ञात था कि विष्णुकान्त महाराज जलौक के पदामर्शदाता के रूप में कार्य कर रहा है। उसने विष्णुकान्त को बिठाकर, उसके बाल–बच्चों का कुशल–समाचार जान, पूछ लिया– "शीतल पेय के साथ क्या लोगे, मिष्ठान अथवा नमकीन?"

"महामन्त्री जी! मैं आपसे एक बात सर्वथा पृथक् में करने आया हूँ।"

महामन्त्री ने गम्भीर भाव में विष्णुकान्त का मुख देखते हुए पूछ लिया, "यह आज नई बात क्या है? आज से पहले तुम्हारी सब बातें महाराज के द्वारा मन्त्रिमण्डल में आती रहती हैं। आज उस मार्ग से न आकर सीधा मेरे पास किसलिए आए हो?"

"श्रीमन्!" विष्णुकान्त ने कहा, "यह इस कारण कि मैं महाराज का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परामर्शदाता होने से पहले कश्मीर का नागरिक था, और हूँ। उस नाते ही राज्य के प्रमुख व्यक्ति के पास एक समस्या लेकर आया हूँ।''

''तो यह समस्या महाराज के द्वारा नहीं आ सकती थी क्या?''

''नहीं, श्रीमन्। मैं राष्ट्र को राज्य से बड़ा मानता हूँ, और राज्य को राजा से बड़ा। मैं राष्ट्र का एक अंग हूँ और इसी कारण राजा तक न जाकर राज्याधिकारी के पास पहुँचा हूँ। यदि राज्याधिकारी ने भी मेरे निवेदन की ओर ध्यान नहीं दिया तो राष्ट्र का आह्वान करना पड़ेगा।''

''बहुत भयंकर जीव हो, विष्णु!''

विप्रबन्धु इस समय पचास वर्ष की वयस का व्यक्ति था और विष्णुकान्त की वयस इस समय छत्तीस वर्ष के लगभग थी। इसी कारण उसने उसे स्नेहमयी भाषा में केवल 'विष्णु' कहकर सम्बोधित किया था। विष्णुकान्त इससे उत्साहित हो कहने लगा, ''महामन्त्री महोदय! इसमें कुछ भी भयंकरता नहीं। यह एक राजनीतिक समस्या है और उसी की भाषा में बात करनी उचित प्रतीत होती है।''

''श्रीमन्! कोई माने अथवा न माने, यह बात शत–प्रतिशत सत्य है कि राष्ट्र सर्वोपरि है। राज्य और राजा दोनों राष्ट्र को सुखी रखने के लिए बने हैं।''

''इस समय संकट राष्ट्र पर आया है और राज्य ही अन्तिम स्थान है जहाँ इस समस्या के सुझाव का यत्न हो सकता है।''

''अपना अभिप्राय तनिक स्पष्ट करो। यह सिद्धान्त की बात मैं जानता हूँ कि राज्य ही अन्तिम स्थान है जहाँ राष्ट्र की समस्या का सुझाव उपस्थित किया जा सकता है। परन्तु समस्या क्या है? राष्ट्र पर क्या संकट आ रहा है?''

''श्रीमन्! राष्ट्र पर एक बाहरी राष्ट्र ने आक्रमण कर दिया है। राष्ट्र के कार्यवाह राज्य और उसके सर्वोच्च राज्याधिकारी महाराज के घर में विदेशी राष्ट्र ने सेंध लगा दी है। उस सेंध में विस्फोट की सामग्री रखी जा रही है। किसी भी दिन वह सामग्री फूट पड़ेगी। तब... तब... मैं समझता हूँ कि सब–कुछ भक् से उड़ जाएगा। न राजा रहेगा और न राज्य! राष्ट्र तो पहले ही विनाश को प्राप्त हो चुका होगा।''

''यह सब ठीक है। मेरी सूचना है कि कोई भी बौद्ध श्रावक अपने उत्तरीय में छुपाकर किसी प्रकार के शस्त्रास्त्र लेकर नहीं आ रहा। इस कारण यह सैनिक आक्रमण नहीं। यह सांस्कृतिक आक्रमण है।

''जब देश का अधिपति अपनी अल्पायु कन्या को भैरवी–चक्र में पूजित कराने के लिए भेज सकता है और राष्ट्र में लाखों की भीड़ इस निर्लज्जतापूर्ण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कार्य को देखने के लिए लालायित है तो उस राष्ट्र और राजा के विरुद्ध बवण्डर उठेगा ही। इसमें राज्य कुछ नहीं कर सकता। राष्ट्र, राज्य और राजा की शृंखला में राष्ट्र और राजा का गठजोड़ हो गया है। स्वाभाविक परिणाम होगा कि दोनों में सन्धि से राज्य टूटेगा।''

''परन्तु भगवन्! राज्य यदि राष्ट्र के प्रति अपने उत्तरदायित्व को निभाए तो राजा विवश हो राष्ट्र और राज्य में समन्वय कर लेगा।''

विप्रबन्धु समझ रहा था कि विष्णुकान्त राजा से पृथक् राज्य के पास पहुँचा है तो राजा का विरोध करने के लिए पहुँचा है। उसे सन्देह हुआ था कि वह महाराज से लड़कर आ रहा है। इससे वह सतर्क हो वार्तालाप करने लगा।

विष्णुकान्त ने अब स्पष्ट बात कर दी। उसे भी सन्देह होने लगा था कि महामन्त्री उसको विद्रोही समझने लगा है।

अतः उसने कह दिया, ''बौद्ध सम्प्रदाय मगध सम्राट से पोषित है। इस कारण उसका विस्तार मगध राज्य का विस्तार मानना होगा।

''मगध राज्य और कश्मीर राज्य में सैद्धान्तिक भेद हैं। एक साम्प्रदायिक राज्य है और दूसरा असाम्प्रदायिक है। अतः कश्मीर देश में साम्प्रदायिक राज्य अर्थात् मगध राज्य की स्थापना होगी। इस कारण अन्तिम परिणाम यह होगा कि कश्मीर का राष्ट्र न केवल मगध के साम्प्रदायिक राज्य का दास बनेगा, वरंच एक दुर्बल राष्ट्र बन जाएगा।

''कश्मीर राष्ट्र भी करवट ले रहा है और घोर संघर्ष होने की सम्भावना है।

''इस संघर्ष से राज्य निरपेक्ष रहेगा तो अपना नाश स्वयं कर बैठेगा। अर्थात् अपने गले में डाले जा रहे फंदे को सहर्ष स्वीकार करेगा।

''श्रीमन्! भारत में राष्ट्र स्वतन्त्र नहीं रहा। यह राज्य और राजा का दास हो गया है। यही बात कश्मीर की होगी।''

''तो तुम क्या सम्मति देने आए हो?''

''सम्मतिदाता तो मैं महाराज जलौक का हूँ। इस कारण सम्मति तो उनको ही दूँगा। मैं तो आपको यह बताने आया हूँ कि आज राजप्रासाद में राष्ट्र–विरोधी विस्फोट रखा गया है। राष्ट्र राज्य से इस विषय में आकांक्षा रखता है।''

इसके उपरान्त विष्णुकान्त ने भदन्त नारायण और महारानी कादम्बिनी में हुए वार्तालाप का वर्णन कर दिया।

''परन्तु!'' विप्रबन्धु ने पुनः सैद्धान्तिक स्तर पर वार्तालाप को लाते हुए कहा, ''झगड़ा राष्ट्र–राष्ट्र में है। शैव राष्ट्र और बौद्ध राष्ट्र के विरोध में राज्य

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हस्तक्षेप नहीं करेगा। मेरा निजी विचार है कि शैव राष्ट्र बौद्ध राष्ट्र से निष्कृष्ट जीवन–मीमांसा प्रस्तुत करता है। इस कारण वह विनष्ट होगा।''

''परन्तु बौद्ध राष्ट्र वेद और ईश्वर से विच्छिन्न हो जाने से शैव सम्प्रदाय से निकृष्ट है। शैव मत में केवल पूजन–विधि विलक्षण है अर्थात विलक्षण सभ्यता है और बौद्ध मत विलक्षण संस्कृति है।''

''परन्तु!'' विप्रबन्धु का कहना था, ''बौद्ध आचरण वैदिक आचरण के समीप अर्थात् समान है और शैव आचरण वैदिक आचरण से भिन्न है।''

''श्रीमन्! आचरण का सुधार हो सकता है, परन्तु एक बार मूल संस्कृति का विनाश हुआ तो आचरण भी विनष्ट होगा। इसमें सन्देह नहीं।''

''परन्तु मीमांसा शास्त्र कहता है कि धर्म ही मूल है। अभिप्राय यह है कि आचरण ही मोक्ष का साधन है।''

''मेरा निवेदन यह है कि आचरण का मूल स्रोत ज्ञान है। जब ज्ञान अर्थात् कर्म का मूल स्रोत ही विनष्ट होगा तो आचरण भी बिगड़ेगा।''

''तो मूल स्रोत के ठेकेदारों को आचरण सुधारने का यत्न करना चाहिए।

''देखो विष्णुकान्त! वेदज्ञाताओं का यह कार्य है कि वेद का नाम लेने वालों का आचरण ठीक करें– और अवैदिक संस्कृति स्वयं विनष्ट हो जाएगी।''

विष्णुकान्त महामन्त्री के पास इस प्रयोजन से आया था कि महारानी के बौद्ध प्रभाव में आ जाने से महाराज का बौद्ध सम्प्रदाय के प्रति सुखद व्यवहार हो जाएगा और कश्मीर में भी एक विशाल जनसमूह कर्महीन हो जाएगा। तब देश और जाति बलवान लोगों की दया पर हो जाएगी। परन्तु उसे यह समझ आया कि विप्रबन्धु भी पहले से ही बौद्ध प्रभाव में है। बौद्ध सम्प्रदाय का अशोक के राज्य पर प्रभुत्व हो जाने के कारण पूर्ण राज्य का धन और जन बौद्ध सम्प्रदाय के अधीन हो गया था। राज्य के बल पर कश्मीर की जनता और वरिष्ठ जन भी प्रभावित हो रहे थे।

विष्णुकान्त ने महामन्त्री से विदा होते हुए कहा, ''श्रीमन्! मैंने सचेत कर दिया है। यह महाराज के द्वारा नहीं किया जा सकता था। इस कारण उनका उल्लंघन कर राज्य को सचेत करने चला आया था। अब यह आपका काम है कि विचार कर लें कि राज्य को किस प्रकार इस चुनौती का सामना करना है। अब आज्ञा दीजिए। मुझे घर पर काम है।''

विप्रबन्धु मुस्कराया और बोला, ''ईश्वर का धन्यवाद है कि आपको घर पर काम है, भैरव–मन्दिर में नहीं!''

विष्णुकान्त इस कटाक्ष को समझता था फिर भी उसने उत्तर देना उचित नहीं समझा और घर को लौट आया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 7 :

विष्णुकान्त घर पहुँचा तो उसकी पत्नी ने बताया, ''महाराज का सेवक आपको बुलाने आया था। वह कह गया है कि पण्डित जी को तुरन्त भेज दिया जाए। आज आपको भोजन महाराज के साथ ही करना है।''

परिणाम यह हुआ कि विष्णुकान्त पुनः राजप्रासाद की ओर चल पड़ा। वह यह तो अनुमान लगा रहा था कि अवश्य नारायण की प्रेरणा के अनुरूप महारानी जी ने महाराज को कुछ कहा है। उस विषय में महाराज परामर्श करना चाहते होंगे। परन्तु उसमें परामर्श करने को क्या है, वह समझ नहीं सका। साथ ही भोजन का निमन्त्रण किस अर्थ है? क्या महारानी जी से वार्तालाप कराने के लिए भोजन की व्यवस्था है? यह विचार करता हुआ वह महाराज के बैठकघर के द्वार पर जा पहुँचा और भीतर सूचना भेज दी।

महाराज ने सूचना मिलते ही विष्णुकान्त को भीतर बुला लिया। दामोदर और सुनन्द दोनों भीतर महाराज के सामने खड़े थे। महाराज एक चौकी पर बैठे थे।

विष्णुकान्त ने नमस्कार की तो महाराज जलौक ने उसे भी एक चौकी पर बैठ जाने का संकेत कर दिया। विष्णुकान्त समझा कि सुनन्द इत्यादि ने कुछ खराबी कर दी है जिस कारण उसे बुलाया गया है। वह प्रश्नभरी दृष्टि से सुनन्द इत्यादि की ओर देखने लगा।

सुनन्द ने महाराज का संकेत पा बताना आरम्भ कर दिया। उसने कहा, ''हम दुर्ग के पार्श्व में खुले मैदान पर अश्वारोहण का अभ्यास कर रहे थे कि एक पीतवसनधारी राजपथ से उत्तर मैदान में से गुजरते हुए राजकुमार के घोड़े के आगे आ खड़ा हो गया। राजकुमार ने श्रावक को बचाने के लिए एकाएक घोड़े को घुमाया तो घोड़ा और राजकुमार दोनों भूमि पर लोट–पोट हो गए। मैं दूर से खड़ा देख रहा था। इस पर मैंने उस श्रावक के पास जा पूछा, 'यहाँ किसलिए खड़े हो?'

''इस समय तक राजकुमार भूमि पर से उठकर मिट्टी झाड़ रहा था। घोड़ा भी उठ खड़ा हुआ था। श्रावक ने कहा, 'इस छोकरे ने मुझे घोड़े के नीचे कुचलने का यत्न किया है। मैं इसे पकड़कर न्यायाधीश के पास ले जाना चाहता हूँ।'

''मैं तो उसको झूठ बोलने पर वहाँ ही पीट देना चाहता था, परन्तु दो नगर–रक्षक जो राजपथ पर से इस घटना को देख रहे थे, मैदान में आ गए और श्रावक से बोले, 'चलो न्यायाधीश के पास!'

''वह श्रावक तो पहले ही न्यायाधीश के पास चलने को कह रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
उसका विचार था कि दोष राजकुमार का है और इसे दण्ड मिलना चाहिए।

"नगररक्षकों ने श्रावक के साथ हमें भी साक्षी के रूप में साथ ले लिया। नगरपालिका के कार्यालय में हम सबको उपस्थित कर नगररक्षक ने श्रावक के विरुद्ध आरोप लगा दिया :

"मैदान अश्वारोहियों के अभ्यास का स्थान है। उस मैदान में यह व्यक्ति अकारण जाकर एकाएक इस अश्वारोही के सम्मुख खड़ा हो गया था। इस कुमार ने अश्व को एकाएक रोका तो अश्व और कुमार भूमि पर लोट–पोट हो गए। सौभाग्य से दोनों को किसी प्रकार की गम्भीर चोट नहीं लगी, परन्तु यह व्यक्ति दोषी है। इसे हम पकड़ लाए हैं।"

"न्यायाधीश ने मुझसे पूछा और मेरा कथन भी लिख लिया गया। तदनन्तर राजकुमार का कथन लिखा गया और जब राजकुमार ने अपना नाम–धाम बताया तो न्यायाधीश ने उस पीतवसनधारी को पन्द्रह दिन के कठोर कारावास का दण्ड दे दिया।

"राजकुमार ने कहा, 'मैं चाहता हूँ कि इस अज्ञानी व्यक्ति को भविष्य में सचेत रहने की चेतावनी देकर छोड़ दिया जाए।'

"न्यायाधीश ने कहा, 'राजकुमार! यह तुम किसलिए कहते हो?'

"राजकुमार ने कहा, 'मुझे इस अज्ञानी पर दया आ रही है।'

"न्यायाधीश ने कहा, 'मेरा अधिकार न्याय करना है। मैं दया नहीं कर सकता। यहाँ दया करने का अधिकार केवल आपके पिता महाराज को है। आप अथवा अपराधी महाराज के सम्मुख याचना करें तो महाराज दया कर इसे दण्ड से मुक्त कर सकते हैं।'

"इस कारण हम महाराज के पास आए थे कि वे उस श्रावक को दण्ड से मुक्त कर दें।"

"और महाराज क्या कह रहे हैं?" विष्णुकान्त ने पूछ लिया।

"महाराज कह रहे हैं कि क्षमा उनको किया जाता है जो अपनी भूल स्वीकार कर पुनः वही अपराध न करने का वचन दें। क्योंकि उस श्रावक ने ऐसी कोई याचिका नहीं दी, इस कारण उसको क्षमा नहीं किया जा सकता।

"राजकुमार कह रहे थे कि महाराज को किसी प्रकार भी हो, उसे छोड़ने का कोई उपाय करना चाहिए।

"महाराज ने इस विषय में सम्मति करने के लिए आपको बुलाया है।" विष्णुकान्त मुस्कराता हुआ सुनन्द की ओर देख रहा था। जब वह अपना कथन समाप्त कर चुका तो विष्णुकान्त महाराज की ओर देखने लगा। महाराज जलौक ने पूछा, "पण्डित जी! क्या मैं दया अथवा क्षमा को अपराधी के याचिका किए बिना प्रयोग कर सकता हूँ?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णुकान्त का कहना था, "महाराज! दया तो आप स्वतः बिना किसी के कहे भी प्रकट कर सकते हैं। यह आपके अन्तरात्मा की प्रेरणा पर हो सकता है। दया में आप दण्ड कम कर सकते हैं। इतना कम कि जितना दण्ड अपराधी भोग चुका हो उतना पर्याप्त माना जा सकता है। क्षमा में दण्ड से मुक्त किया जा सकता है। वह अपराधी के पश्चात्ताप करने पर ही हो सकता है।

"दया क्षमा से भिन्न बात है। दया में अपराधी की अवस्था और अपने अन्तरात्मा की प्रेरणा ही मुख्य है।

"मैं समझता हूँ कि श्रावक दया का पात्र नहीं है। यदि महाराज को उस पर दया आती है तो उसको शेष कारावास की अवधि से मुक्त कर सकते हैं। उसे अपराध–मुक्त नहीं किया जा सकता।"

महाराज ने एक क्षण तक ही विचार किया और राजकुमार को कह दिया, "देखो, दामोदर! मैं किसी मूर्ख पर दया नहीं कर सकता। मुझे उसे देखना पड़ेगा। यदि वह किसी प्रकार से अंगहीन अथवा अपाहिज है और उसकी अवस्था मेरे मन में दया–भाव उत्पन्न करती है तब ही मैं उस पर दया कर सकता हूँ।

"क्षमा मैं उसे तब तक नहीं कर सकता जब तक वह मेरे सम्मुख अपने अपराध को स्वीकार कर पुनः वैसा अपराध न करने का वचन नहीं देता।"

राजकुमार पिता का और अपने गुरुजी का मुख देखता रह गया। सुनन्द ने कह दिया, "महाराज! कुमार के मन में उस श्रावक के लिए दया का भाव उत्पन्न हुआ है। इसी कारण उसने स्वतः उसे क्षमा कर दिया है। आप दामोदर से बहुत स्नेह रखते हैं। इस कारण आपको उसके मनोभाव का विचार कर श्रावक को दया करते हुए छोड़ देना चाहिए।"

महाराज जलौक सुनन्द को युक्ति करते देख प्रसन्न हो गए और बोले, "कुमार के दया–भाव को देखकर तो नहीं; हाँ, तुम्हारी युक्ति की श्रेष्ठता को देख मैं श्रावक को छोड़ता हूँ। जितना दण्ड उसको अभी तक मिला है उतना ही पर्याप्त समझ उसका शेष दण्ड वापस लेता हूँ।"

कुमार इससे प्रसन्न हो गया और कृतज्ञता–भरी दृष्टि से सुनन्द की ओर देखने लगा।

सुनन्द ने हाथ जोड़ प्रणाम करते हुए पूछ लिया, "तो महाराज! हम जाएँ?"

"कहाँ जाओगे?"

"महारानी माताजी को प्रणाम करने।" सुनन्द ने कह दिया।

"वहाँ नित्य जाया करते हो?"

"जी! वे भी बहुत दयावान हैं। पण्डितायिन माताजी ने कहा है कि उन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जैसी दयावान का नित्य चरणस्पर्श करने से वही लाभ होता है जो भगवान् की उपासना से होता है। और महाराज! वहाँ प्रायः एक अन्यदया की मूर्ति के दर्शन हुआ करते हैं।''

''वहाँ कौन दया की मूर्ति मिलती है?''

''राजकुमारी दुर्गा जी! वे एक अज्ञात माता–पिता की सन्तान को भी वही आदर प्रदान करती हैं जो अपने भाई दामोदर जी को।''

महाराज को यह विदित था कि दामोदर जब महारानी जी के चरणस्पर्श करने जाया करता है तो राजकुमारी सब काम छोड़ महारानी जी के पास आ जाया करती है। दोनों कुमार महाराज से स्वीकृति ले गए तो विष्णुकान्त ने भी पूछ लिया, ''तो महाराज! मैं भी जाऊँ?''

''परन्तु पण्डित जी को इस कार्य के लिए नहीं बुलाया था। यह कार्य तो आपके घर पर सेवक भेजने के उपरान्त उत्पन्न हुआ था। आप आ रहे थे, इस कारण हमने अपना निर्णय आपसे सम्मति करने के लिए रोक रखा था।''

''परन्तु महाराज! आपके इस निर्णय पर मुझे असन्तोष है। यह निर्णय न्याय की दृष्टि से हीन है।''

''परन्तु यह तुम्हारे इस शिष्य सुनन्द के सुझाव पर ही तो दिया है।''

''यह तो, महाराज, आपने राजकुमार की सिफारिश मान ली है। अर्थात् राजपरिवार के सदस्यों की सिफारिश से आप अब राजकार्य चलाएँगे। यह तो महाराज, ठीक नहीं हुआ!''

जलौक भौचक्का हो मुख देखता रह गया। विष्णुकान्त ने अपने कथन का अर्थ समझा दिया। उसने कहा, ''मैं तो यह आशा कर रहा था कि आप यह कहेंगे कि कल प्रातःकाल आप बन्दीगृह में जाकर उस श्रावक से मिलेंगे और यदि राजकुमार का उस पर दया–भाव रखना उपयुक्त प्रतीत हुआ तो आप श्रावक को छोड़ देंगे।

''महाराज! आपने बिना इस बात की परीक्षा किए इस बात को केवल इस कारण स्वीकार किया है कि वह राजकुमार है और आपके स्नेह का पात्र है। राजकुमार के मनोभाव में कोई युक्ति और प्रमाण है अथवा नहीं, यह आपने नहीं देखा।''

जलौक ने कह दिया, ''हमने श्रावक को मुक्त करने की आज्ञा इस कारण नहीं दी कि राजकुमार के मन में दया–भाव उत्पन्न हुआ है। हमने सुनन्द की युक्ति पर मुग्ध होकर दया की है।''

''और महाराज! सुनन्द की युक्ति यह ही थी कि पिता के पुत्र के प्रति स्नेह से आपको राजकार्य चलाना चाहिए।''

जलौक देख रहा था कि यह ब्राह्मण–सन्तान क्षत्रिय नरेश से अधिक

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

युक्ति करना जानता है। इस कारण मन–ही–मन अपनी पराजय स्वीकार कर मौन हो गया। कुछ विचार कर बोला, "अब तो राजाज्ञा हो चुकी। अब इसे वापस लेना ठीक नहीं।"

जलौक ने बात बदल दी। उसने कहा, "महारानी जी ने एक अन्य समस्या उपस्थित कर दी है। मैं चाहता हूँ कि तुम भी उनकी बात सुन लो और तब उनको और मुझे भी सम्मति दो कि हमें क्या करना चाहिए।"

विष्णुकान्त जानता था कि किस विषय पर महारानी जी ने महाराज से बात की होगी, जिसमें उसे सम्मति देने के लिए ले जाया जा रहा है। घटना–चक्र को यह मोड़ लेते देख वह प्रसन्न था। इस कारण बोला, "महाराज! सेवक ने अपने सन्देश में यह तो कहा था कि मुझे श्रीमान के साथ भोजन करना है; परन्तु मैं समझा था कि कार्य समाप्त हो गया है, इस कारण आपके साथ भोजन करने का सौभाग्य किसी अन्य दिन के लिए स्थगित हो गया है।"

"नहीं, पण्डितवर! वह सौभाग्य आज ही प्राप्त होगा। हम समझ रहे हैं कि आप महारानी जी को अपने अकाट्य तर्क से समझा सकेंगे कि उनका क्या कर्तव्य है।"

इसके उपरान्त विष्णुकान्त ने बताया, "महाराज! मुझे भी एक गुप्तचर द्वारा यह सूचना मिली है कि भदन्त नारायण ने महारानी जी को एक प्रेरणा दी है और उस प्रेरणा के विषय में महामन्त्री विप्रबन्धु जी से मैं बातचीत करने गया था। परन्तु उन्होंने मेरी सूचना को वह महत्त्व नहीं दिया जो मैं दे रहा था। इस कारण वहाँ से असफल हो लौट आया हूँ।"

"क्या सूचना दी है आपके गुप्तचर ने?"

""यही कि इस समय राज्य में दो पक्ष हैं। एक दया, धर्म और अहिंसा का, और दूसरा दुराचार, क्रूरता और नृशंसता का। इन दोनों पक्षों में संघर्ष चलने वाला है। भदन्त जी ने महारानी जी को प्रेरणा दी है कि वे बौद्ध सम्प्रदाय का पक्ष लें।"

"और पण्डित जी! आप महामन्त्री से क्या कहने गए थे?"

"महाराज! यही कि राष्ट्र में संघर्ष होने वाला है। एक पक्ष ने राजपरिवार में सेंध लगाकर उसमें विस्फोट की सामग्री रख दी है। इस अवस्था में, मैं महामन्त्री से यह निवेदन करने गया था कि राष्ट्र में होने वाले संघर्ष में राजपरिवार को एक ओर रखकर इस संघर्ष के विषय में राज्य की ओर से कुछ यत्न करें।"

"क्या यत्न करें?"

"यह बताने का तो अवसर ही उपस्थित नहीं हुआ। उनको मेरा आपके

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्ग के अतिरिक्त उनके पास पहुँचना रुचिकर नहीं था। इस कारण उन्होंने मेरी बात नहीं सुनी।''

''तो अब क्या करोगे?''

''मैंने महामन्त्री से कहा था कि मैं महाराज के परामर्शदाता के नाते उनकी सेवा में नहीं पहुँचा, वरन् राष्ट्र का एक घटक होने के नाते ही यह निवेदन करने वहाँ गया था। उन्होंने स्पष्ट तो नहीं कहा, परन्तु मुझे ऐसा लगा कि महामन्त्री इस संघर्ष से अवगत हैं और वे बौद्ध पक्ष को श्रेष्ठ पक्ष मानते हैं। उनका कहना था कि बौद्ध आचरण वैदिक आचरण के अधिक समीप है। इस कारण उसकी विजय की वे इच्छा करते हैं। यह जानकर मैं वहाँ से चला आया हूँ।''

इस समय सेविका आई और बोली, ''महारानी जी भोजनालय में आपकी प्रतीक्षा कर रही हैं।''

इस सन्देश पर दोनों उठ खड़े हुए और भोजनालय की ओर चल पड़े।

Central Library Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar 167958

: 8 :

भोजनालय में कादम्बिनी, दुर्गा, दामोदर तीनों पहले ही बैठे थे। महाराज जलौक और पण्डित विष्णुकान्त के लिए भी चौकियाँ लगी थीं। महारानी को विदित था कि विष्णुकान्त भोजन पर आमन्त्रित हैं, परन्तु दुर्गा और दामोदर विस्मय कर रहे थे कि आज पाँचवाँ व्यक्ति कौन आ रहा है!

जब उन्होंने देखा कि पण्डित जी महाराज के साथ भोजन करने के लिए आए हैं तो दोनों प्रसन्न थे। पण्डित जी, ने उनको बहुत सीमा तक स्वतन्त्रता दिलवाई थी। राजसी आडम्बर के कारण जो प्रतिबन्ध उन पर थे, वे पण्डित जी के कहने पर ही ढीले हुए थे। दुर्गा का सुनन्द से मिल सकना भी पण्डित जी की ही प्रेरणा से सम्भव हुआ था। इस कारण पण्डित जी को देख दोनों बच्चों की आँखों में चमक दौड़ गई। कादम्बिनी को यह अनुभव हुआ कि दोनों बच्चे पण्डित जी के व्यवहार से अति प्रभावित हैं।

हाथ–पाँव धो, कुल्ला कर जब महाराज और विष्णुकान्त चौकियों पर बैठे तो कादम्बिनी ने बात आरम्भ कर दी। उसने कहा, ''पण्डित जी! आज आपको यहाँ आने का कष्ट इस कारण दिया है कि एक सार्वजनिक विषय पर महाराज से मेरा मतभेद हो गया है। आप विद्वान् हैं, इस कारण आप उस विषय का उचित विश्लेषण कर सकेंगे।''

विष्णुकान्त मौन हो महारानी के कथन के समाप्त होने की प्रतीक्षा में बैठा था। वैसे तो समस्या का स्रोत वह जानता था, परन्तु वह जानना चाहता था

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कि महारानी ने उसे किस रूप में समझा है। इस कारण वह चुपचाप सुन रहा था।

पाचक सबके सम्मुख चाँदी के थालों में भोजन लगा रहा था। चावल, शाक–भाजी, चटनी, अचार और मिष्ठान्न परसा जा रहा था।

महारानी कह रही थी, "सार्वजनिक विषय यह है कि देश की जनता के सम्मुख एक नवीन विचारधारा उपस्थित हुई है। इससे पूर्व जनता शैव थी। शैवों में भी मुख्य रूप से दो प्रकार के लोग थे– वामपन्थी और शैव। यद्यपि सबके सब शैव वामपन्थी मत को पसन्द नहीं करते फिर भी सामान्य शैव वामपन्थियों को सहन करते हैं।

"परन्तु बौद्ध मत वाले न तो शैवों को पसन्द करते हैं और न ही वामपन्थियों को। वे शिश्नदेव की उपासना करने पर वैदिक मत वालों की हँसी उड़ाते हैं।

"परिणाम यह हो रहा है कि जनता में दो पक्ष हो रहे हैं, और दोनों पक्ष अति प्रबल हो रहे हैं। उनमें संघर्ष अनिवार्य प्रतीत हो रहा है। बौद्ध श्रावक तो शान्तिप्रिय, अहिंसावादी हैं। इस कारण उनको भय है कि शैव जो महादेव के त्रिशूल को अपना ध्वज व चिह्न मानते हैं, वे उनके बीच हत्याकाण्ड मचा देंगे। इस कारण प्रश्न उपस्थित हुआ है कि राज्य कौन–सा पक्ष ले?"

भोजन परोसा जा चुका था और पाचक परोसने के उपरान्त भोजनालय से बाहर चला गया था। यह नियम था कि भोजन परोसकर वह बाहर जाकर बुलाए जाने की प्रतीक्षा किया करता था। वह भीतर बैठे हुए लोगों का वार्तालाप नहीं सुन सकता था, यदि उसकी सेवा की आवश्यकता होती थी तो भीतर लगी घंटी बजा दी जाती थी और पाचक भीतर आ जाया करता था।

जब महारानी कह चुकी तो महाराज ने विष्णुकान्त को कहा, "पण्डित जी! आप मुझे सम्प्रदायों की बातों से राज्य को तटस्थ रखने की सम्मति देते रहते हैं। मैं भी यह देख रहा हूँ कि तटस्थ रहने का अभिप्राय है निष्प्राण, निष्क्रिय रहना। परन्तु मनुष्य निष्क्रिय तो रह सकता ही नहीं। साथ ही निष्क्रियता भी तो किसी–न–किसी पक्ष की सहायता करना ही है। अब बताओ, दोनों पक्षों में से आप किसकी सहायता करेंगे?"

"महाराज!" विष्णुकान्त ने कहा, "मेरी बात छोड़िए। मैं तो दोनों पक्षों को भटका हुआ समझता हूँ और मेरा पक्ष दोनों में से किसी की ओर नहीं है। परन्तु महाराज! राजा तो तटस्थ नहीं रह सकता। वह परमात्मा का प्रतिनिधि है। इस कारण उसका पक्ष वही है जो मनुष्य के कार्यों में परमात्मा का पक्ष होता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"वेद भगवान् ने कहा है :

तयोरन्यः पिप्पलं स्वाद्वत्तयनश्नन्नन्यो अभिचाकशीति।

"यहाँ जीवात्मा और परमात्मा की बात कही है। उन दो में से एक वृक्ष के फल बहुत स्वाद से खाता है और दूसरा नहीं खाता। वह देखता है।

"महाराज! परमात्मा देखता इस कारण है कि यदि कोई अन्याययुक्त व्यवहार करे तो उसे दण्ड दे। मैं समझता हूँ कि यह दूसरे (परमात्मा) का–सा व्यवहार राज्य का होना चाहिए।"

"परन्तु," कादम्बिनी ने कहा "बौद्ध तो शान्तिप्रिय हैं। वे अन्याययुक्त व्यवहार कर ही नहीं सकते।"

"महारानी जी! शान्तिमय होना एक बात है और अन्याययुक्त होना दूसरी बात है। दोनों अन्योन्याश्रित नहीं हैं। एक शान्तिप्रिय व्यक्ति भी असत्यभाषी और चोरी करने वाला हो सकता है। मैं समझता हूँ कि राजा को सतर्क और सचेत रहना चाहिए। वह ध्यानपूर्वक देखता रहे। जब भी कोई पक्ष राजनियम का उल्लंघन करे तो तुरन्त उसे पकड़कर दण्ड देना चाहिए।"

"पण्डित जी। यदि यह मान भी लिया जाए कि राजा को नियम भंग करने वाले को दण्डित करना है, इतना तो राज्य को करना ही चाहिए कि वह घोषणा कर दे कि वह बौद्ध सम्प्रदाय वालों के शुद्ध और शान्तिमय आचरण को ठीक मानता है।"

"महारानी जी। यह काम राज्य का नहीं। राज्य न विद्वान् है और न अविद्वान्। यह तो एक यन्त्र है जो नियमों से बँधा हुआ कार्य करता है। जो भी नियम भंग करेगा वह इस यन्त्र में पिस जाएगा।"

कादम्बिनी अनुभव तो करती थी कि शान्तिप्रिय भी ऐसा व्यवहार कर सकते हैं जिससे दूसरे भड़ककर युद्ध करने पर उतर आएँ, परन्तु भदन्त नारायण का यह कहना कि भैरवी–चक्र में अति नीच व्यवहार किया जाता है, वह जानती थी। इस कारण बौद्धों की सहायता की इच्छा रखती थी। फिर भी वह विष्णुकान्त के कथन का प्रतिवाद नहीं कर सकी।

महारानी को चुप देख जलौक ने कहा, "पण्डित जी। यह बात मेरी समझ में नहीं आई कि राजा अथवा राज्य किसी मत को मानने वाला क्यों नहीं हो सकता।"

"राजा और राज्य किसी भी मत के अनुयायी हो सकते हैं। राजा तो जो मत उसे ठीक समझ में आए, उसको मान सकता है। राज्य उस मत वाला होगा राज्य में जिस मत के मानने वाले अधिक संख्या में होंगे।

"राजा और राज्य भिन्न–भिन्न मत के भी हो सकते हैं। परन्तु महाराज! राजनियम मत–मतान्तरों से ऊपर हैं। राजा और राज्य किसी भी मत के हों,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राजा नियम भंग करने वालों को दण्ड देगा ही।"

"तो क्या राजा अपने मत वालों के साथ सहृदयता का व्यवहार नहीं रख सकता?" महारानी का प्रश्न था।

"राजा और राज्य का व्यवहार सब सम्प्रदायों के लोगों से एक समान होना चाहिए। नियम भंग करने वाला चाहे तो राज्य के मत वाला हो और चाहे विरोधी मत वाला, उसे नियम–भंग का दण्ड समान रूप में मिलना ही चाहिए।"

"तो नियम ऐसे बनाए जाने चाहिए जिनसे भले लोगों के साथ दयाभाव हो सके।" कादम्बिनी की युक्ति थी।

विष्णुकान्त का कहना था, "जो नियम भंग करेगा, वह भला कैसे हो सकता है? मैं भूल से नियम भंग की बात नहीं कह रहा। मैं जान–बूझकर नियम भंग करने की बात कह रहा हूँ। ऐसा करने वाला भला नहीं माना जा सकता।"

"तो मैं कल राज्य में यह विख्यात करने की घोषणा कर रही हूँ कि मैं बौद्ध उपासिका हो रही हूँ।"

"मेरे विचार से आपको ऐसी घोषणा करने की स्वीकृति होनी चाहिए। परन्तु कठिनाई एक होगी कि कदाचित् महाराज यह घोषणा नहीं कर सकेंगे। वे शैव हैं। तब आप दोनों के लिए कठिनाई उपस्थित होगी।"

"क्या कठिनाई होगी?"

"पति–पत्नी में व्यवहार–समानता होनी चाहिए। मत व्यवहार का सूचक है। इससे घर में पति–पत्नी के व्यवहार में भेद हो जाएगा।"

जलौक ने कह दिया, "मैं समझता हूँ कि व्यवहार–भेद नहीं होगा।"

"परीक्षा करने की आवश्यकता है। मैं समझता हूँ कि परीक्षा–परीक्षा में ही तटस्थता आरम्भ हो जाएगी।"

कादम्बिनी ने कह दिया, "मैं राजप्रासाद में होने वाली आगामी उपासना में घोषणा कर दूँगी।"

"परन्तु महारानी जी! जहाँ तक उपासिका होने का सम्बन्ध है, वह तो विख्यात ही है–आप बौद्ध उपासिका हैं। अब घोषणा तो कदाचित् यह होगी कि आप बौद्ध श्राविका हो रही हैं।"

"नहीं। मैं उपासिका ही रहूँगी।"

"वह तो आप हैं ही। उसमें निकट भविष्य में कठिनाई उपस्थित नहीं होगी, परन्तु कुछ कालोपरान्त कठिनाई उपस्थित हो सकती है। हाँ, यदि श्राविका बनेंगी तो कठिनाई तुरन्त आरम्भ हो जाएगी।"

"नहीं। मैं श्राविका नहीं बन रही। मैं अभी गृहस्थ नहीं छोड़ रही।"

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

वार्तालाप में हस्तक्षेप करते हुए महाराज ने कहा, "विष्णुकान्त! यह नहीं बता सके कि महारानी के श्राविका बनने में क्या कठिनाई उत्पन्न होगी? महारानी जी पाँच वर्ष से बौद्ध उपासनाओं में सम्मिलित हो रही हैं, मुझे किसी प्रकार की भी कठिनाई अनुभव नहीं हुई। आशा करनी चाहिए कि भविष्य में भी नहीं होगी।"

विष्णुकान्त चुप रहा। वह समझता था कि पति–पत्नी के परस्पर सम्बन्धों में उसे सम्मति देने का अधिकार नहीं। वह यह समझ रहा था कि कठिनाई तो उपस्थित हो रही है; यदि कठिनाई न होती तो आज उसको इस वार्तालाप में बुलाना ही न पड़ता। यही कठिनाई दिन–प्रतिदिन बढ़ती जाएगी। तो भी वह मौन रहा।

भोजनोपरान्त विष्णुकान्त महाराज से विदा माँगने लगा तो जलौक ने पण्डित का गम्भीर मुख देख कहा, "कल सदा की भाँति मध्याह्नोत्तर दर्शन होंगे?"

"हाँ, महाराज !" विष्णुकान्त ने कहा और घर को चला आया। उसके चले जाने के उपरान्त कादम्बिनी ने महाराज से कहा, "आपके पण्डित आज निरुत्तर हो चले गए हैं।"

"मैं ऐसा नहीं समझता। वह कुछ कहना चाहता था, परन्तु कहने का अधिकार न रखने के कारण चुप था और इससे वह असन्तुष्ट होकर यहाँ से गया है।"

"जब मैं उससे पूछ रही हूँ तो उसको मन की बात कहने का अधिकार तो हो गया था।"

"अच्छा, कल पता करूँगा। परन्तु एक बात वह कह रहा था कि समय पाकर कठिनाई उपस्थित हो सकती है। मैं समझता हूँ कि वह ठीक ही कह रहा था। कठिनाई तो आज भी उपस्थित है। तभी तो उसे बुलाकर सम्मति की गई है।"

"परन्तु वह कठिनाई तो दूर हो गई है। मैं मान गई हूँ कि राजनियम भंग करने पर सबके साथ समान व्यवहार होना चाहिए।"

"मैं इस विषय में कुछ कह नहीं सकता। कदाचित् घोषणा करने के उपरान्त आप यह सिद्धान्त नहीं मान सकेंगी।"

"मान जाऊँगी।" कादम्बिनी ने यह कह दिया और बात समाप्त हो गई।

: 9 :

अगले दिन महारानी अभी दैनिक उपासना से निवृत्त हो अल्पाहार के

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
लिए तैयार हो रही थी कि भदन्त नारायण के राजप्रासाद पर पहुँचने की सूचना मिली। महारानी ने उसे बैठकघर में बुलाया और वहीं उससे मिलने पहुँच गई।

नारायण ने महारानी को आशीर्वाद देकर कहा, "देवी! कल एक बौद्ध श्रावक से अन्याय का समाचार मिला है। उसे अकारण पन्द्रह दिन के कठोर कारावास का दण्ड दिया गया है।

"ऐसा प्रतीत होता है कि महाराज को इस अन्याययुक्त दण्ड का पता लग गया है और उन्होंने दया–भाव में उसे मुक्त कर दिया है।"

"तब तो ठीक हुआ न?"

"नहीं, देवी! उस न्यायाधीश को दण्ड भी मिलना चाहिए जिसने श्रावक को वह अन्याययुक्त दण्ड दिया था।"

"ठीक है। परन्तु आप यहाँ महाराज से मिलने आए हैं क्या?"

"महाराज तो बौद्ध उपासक नहीं। इस कारण उन तक सीधा पहुँचना उचित नहीं समझा गया। बौद्ध संघ ने मुझे आपके पास भेजा है। आप संघ में उपासिका हैं। इससे संघ को आपसे न्याय के पक्ष में यत्न करने की अधिक आशा है।"

"भगवन्! आप भूल कर रहे हैं। न्याय के विषय में महाराज बौद्ध–अबौद्ध में भेद–भाव नहीं करते। आपको अपनी याचिका उनके सम्मुख ही करनी चाहिए। यदि वहाँ से आपको न्याय न मिला तब संघ में विचार कर लीजिएगा कि न्याय–प्राप्ति के लिए क्या करना चाहिए।"

भदन्त नारायण यह सुनने का स्वभाव नहीं रखता था कि वह भूल कर रहा है। यदि महारानी के स्थान पर कोई अन्य होता जो यह कहता तो वह उसे डाँट देता, परन्तु महारानी के पद और अपने कार्य में उसके सहयोग का ध्यान कर वह इस बात की ओर ध्यान न दे बोला, "तो देवी! मेरी यह याचिका आप महाराज तक पहुँचा दें।"

"घटना का सविस्तार वर्णन बता दें। तब मैं यत्न करूँगी।"

"कल एक श्रावक दुर्ग के पार्श्व में मैदान पर मनोरंजनार्थ खड़ा था। एक बालक अश्व दौड़ाता हुआ उसकी ओर आया। श्रावक भयभीत हो एक स्थान पर खड़ा हो गया। एकाएक उस बालक ने अश्व को मोड़ा तो अश्व बालक सहित लुढ़क गया। यह घटना एक नगररक्षक सुभट्ट ने देखी। बालक राजकुमार था और नगररक्षक राजपरिवार की खुशामद करने के लिए उस श्रावक को पकड़ न्यायाधीश के पास ले गया। वह राजकुमार और उसका एक साथी भी साथ गए। न्यायाधीश ने बिना श्रावक के कथन की ओर ध्यान दिए श्रावक को पन्द्रह दिन के कठोर करावास का दण्ड दे दिया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"दो घण्टे–भर श्रावक कारावास में बन्द रहा। तदनन्तर महाराज की आज्ञा से दया के अधीन उसे मुक्त कर दिया गया। श्रावक का कहना है कि कुमार ने कहा भी था कि वह श्रावक को छोड़ देने के लिए कहता है। ऐसा समझ आया है कि राजकुमार भी दण्ड को अनुचित मानता था।"

महारानी ने घटना का वृत्तान्त सुना और नारायण को आश्वासन दिया कि वह इस विषय पर महाराज से बात करेगी और उस वार्तालाप का परिणाम वे अगले दिन आकर पता कर सकते हैं। इतना कह वह उठ खड़ी हुई और नारायण को विदा कर दिया। वह मन में विचार करती हुई अल्पाहार के लिए भोजनालय को चल पड़ी।

महारानी विचार कर रही थी कि क्या विष्णुकान्त का कहना कि महाराज और महारानी के भिन्न–भिन्न पंथों को स्वीकार करने से कठिनाई उत्पन्न होगी, सत्य होने जा रहा है। वह मन में यह संकल्प करती हुई भोजनालय में पहुँची थी कि वह इस व्यवहार पर महाराज से झगड़ा नहीं करेगी और विनम्र निवेदन–मात्र करेगी।

भोजनालय में महाराज, दुर्गा और दामोदर पहले से ही उपस्थित थे। महाराज़ ने कहा, "अल्पाहार के लिए भेजी सेविका यह समाचार लाई है कि महारानी ज़ी अपने गुरुदेव के दर्शन करने गई हैं। क्या बात थी? आज तो उसके उपासना का दिन नहीं था और उपासना का यह समय भी नहीं था।"

"हाँ! आज गुरुदेव का आना अप्रत्याशित था। वे एक आरोप लेकर आए थे।"

"क्या और किसके विपरीत?"

महारानी ने नारायण का कथन बताने के स्थान पर दामोदर से पूछ लिया, "कल सायंकाल तुम अश्वारोहण का अभ्यास करते हुए गिर पड़े थे?"

"हाँ, माँ! एक मूर्ख श्रावक मैदान के बीचों–बीच खड़ा था। जब घोड़े को सरपट दौड़ाता हुआ मैं समीप पहुँचा तो वह एक स्थान पर खड़ा न रहकर कभी इधर और कभी उधर भागने लगा। यदि वह एक स्थान पर खड़ा रहता तो मैं सुगमता से उसके पास से गुजर जाता, परन्तु उसके इधर–उधर होने के कारण वह घोड़े के नीचे कुचला जाता यदि मैं घोड़े को एकाएक मोड़ न देता। मोड़ने के समय घोड़े का पाँव फिसलता प्रतीत हुआ तो मैं पाँव रकाब से निकाल घोड़े से कूद पड़ा, अन्यथा घोड़े के नीचे दब जाता। इस पर भी दौड़ने के वेग से मैं भूमि पर लुढ़क गया और मिट्टी में कपड़े खराब हो गए और घुटनों पर खरोंच आ गई।

"इस घटना को राजपथ पर चलते हुए दो नगररक्षकों ने देखा। उनको भी इसमें श्रावक की भूल प्रतीत हुई। इस भूल के अतिरिक्त वह मैदान पैदल

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चलने वालों के लिए नहीं। मैदान के फाटक पर लिखा हुआ पट्टा लगा है कि वह मैदान केवल अश्वारोहण के अभ्यास करने वालों के लिए है।

"नगररक्षकों ने इस अपराध का न्यायाधीश के सामने वर्णन किया था और इसी अपराध के लिए उस श्रावक को दण्ड दिया गया था।

"मैंने उसी समय न्यायाधीश से कहा था कि इस मूर्ख पर दया कर छोड़ दिया जाए। न्यायाधीश ने कहा था कि वह न्याय करने के लिए नियुक्त है, दया करने के लिए नहीं। दया तो राज्य में केवल महाराज ही कर सकते हैं। इस कारण मैं और मेरे साथ सुनन्द महाराज की सेवा में उपस्थित हो श्रावक पर दया करने के लिए कहने गए थे। महाराज ने मेरी बात मान ली और उस श्रावक को दया–भाव में मुक्त करने की आज्ञा दे दी थी।"

महारानी नारायण और दामोदर के कथन में अन्तर समझ गई थी। उस श्रावक को दण्ड इस कारण नहीं दिया गया था कि राजकुमार अश्व से गिर गया था, वरंच इस कारण कि वह वर्जित स्थान पर भ्रमण कर रहा था। दूसरा यह कि महाराज ने न्यायाधीश की भूल समझ श्रावक को मुक्त नहीं किया, वरंच दया–भाव से मुक्त कर दिया है।

इतना विचारकर वह चुप रही। उसके चुप हो जाने पर जलौक की हँसी निकल गई। हँसते हुए उसने पूछा, "तो गुरुदेव इस विषय में महारानी जी को प्रेरणा देने आए थे?"

"हाँ, श्रीमन्!"

"और क्या प्रेरणा दे गए हैं?"

"मैं समझती हूँ कि दण्डित श्रावक ने जान–बूझकर अथवा अनजाने में अपने वक्तव्य में तथ्य के अतिरिक्त भी गुरुदेव को कुछ बताया है। इसी कारण वे वस्तुस्थिति को न समझकर मेरे पास आए थे कि महाराज से कहकर न्यायाधीश को अन्याययुक्त निर्णय पर दण्डित कराऊँ।"

"और महारानी जी ने उन्हें क्या आश्वासन दिया है?"

"मैंने यह कहा था महाराज से बात करूँगी।"

"तो महारानी जी ने बात तो की नहीं !"

"श्रीमान से इस विषय पर बात करने से पहले ही समाधान हो गया है।"

"क्या समाधान हो गया है?"

"यही कि न्यायाधीश का दोष नहीं। उसने तो न्याययुक्त निर्णय ही दिया था। महाराज का व्यवहार भी उनकी पदवी के अनुसार ही था। वह श्रावक दया का पात्र ही था।"

"श्रीमती जी! एक बात दामोदर ने नहीं बताई। वह यह कि मेरे दयाभाव में आदेश देने के समय विष्णुकान्त मेरे समीप बैठा सब सुन रहा था। कुमार

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

के चले आने के उपरान्त पण्डित जी ने कहा था कि मेरा यह दया का भाव मन में दया उत्पन्न होने के कारण नहीं है, वरंच राजकुमार से स्नेह के कारण अथवा अपराधी के पीतवसनधारी होने के कारण था। इस कारण यह अन्याय हो गया है।''

''बड़ा दुष्ट है यह अध्यापक!''

''क्या दुष्टता की है उसने?''

''रात उसने यह भविष्यवाणी की थी कि मेरे और आपके व्यवहार में कठिनाई उपस्थित हो जाएगी और अब पता चला है कि आपके मन में उत्पन्न दया–भाव की निन्दा की है।''

जलौक महारानी की युक्ति में दोष मानता था, परन्तु रात की विष्णुकान्त की भविष्यवाणी के कारण सतर्क था। वह उसे सत्य सिद्ध करना नहीं चाहता था, और फिर वह भी इतनी जल्दी ही। इस कारण वह मुस्कराकर चुप रहा।

महारानी ने समझा कि पण्डित की दुष्टता को उसके पति ने स्वीकार कर लिया है। इस कारण उसने एक बात और कह दी।

महारानी ने कहा, ''मैं समझती हूँ कि इस प्रकार के अयुक्त व्यवहार करने वाले व्यक्ति को राजकुमार का अध्यापक बनाना ठीक नहीं।''

यह सुन महाराज के कान खड़े हो गए। जलौक ने पूछा, ''और क्या यह भी गुरुदेव की मति के अनुकूल है?''

''हाँ! और नहीं भी।''

''क्या अर्थ है इस परस्पर विरोधी भाव का?''

''मेरे कहने का अर्थ यह है कि गुरुदेव ने विष्णुकान्त के विषय में यह सम्मति आज तो नहीं दी। कदाचित् उनको पता नहीं कि पण्डित ने आपके दया–भाव का भी अनादर किया है। यह बात कि पण्डित की प्रकृति अति कुटिल है, गुरुदेव ने कई वर्ष पूर्व ही कही थीं। उन दिनों आप मार्तण्ड विहार देखने गए थे और वहाँ गुरुदेव और पण्डित में कुछ वार्तालाप हुआ था। उसी के आधार पर उन्होंने यह सम्मति दी थी। आज तो यह मेरी सम्मति है।''

महाराज गम्भीर भाव धारण कर मौन हो गए। वे इस अरुचिकर वार्तालाप को बन्द करना चाहते थे। महारानी के विचार के विपरीत जलौक के मन में विष्णुकान्त की सूझ–बूझ के विषय में विश्वास बढ़ गया था। दुर्गा और दामोदर भी माता–पिता में गुरुजी के विषय में मतभेद देख रहे थे। यद्यपि वे सब बात ठीक–ठीक समझ नहीं सकते थे, फिर भी वे दोनों समझ रहे थे कि माताजी पण्डितजी के विरुद्ध कुछ कह रही हैं।

अल्पाहार समाप्त कर चर्चा के विषय पर एक भी शब्द बोले बिना महाराज अपने कार्यालय में चले गए।

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महारानी और नारायण में इस श्रावक के दण्ड के विषय में क्या हुआ, किसी को पता नहीं चला। अगली उपासना के समय कादम्बिनी ने अपने उपासिका होने की घोषणा की तो भदन्त नारायण ने उन्हें दीक्षा दे दी और वचन ले लिया कि वे अपने निजी रूप में सदैव और सर्वत्र संघ के अनुकूल आचरण रखेंगी।

विष्णुकान्त को यह सूचना मिल रही थी कि बौद्ध विहारों में गोष्ठियाँ हो रही हैं। यद्यपि उन गोष्ठियों का विवरण नहीं आ रहा था, परन्तु यह स्पष्ट ही था कि किसी प्रकार का विस्फोट होने वाला है।

श्रावक की घटना के लगभग एक मास उपरान्त की बात है कि एक दिन महाराज कार्यालय में पहुँचे तो महामन्त्री विप्रबन्धु महाराज से मिलने आया। महामन्त्री को लम्बा मुख बनाए आता देख महाराज प्रश्न–भरी दृष्टि से उसकी ओर देखने लगे।

विप्रबन्धु ने बताया, "महाराज! राजधानी में श्रावकों और बौद्ध उपासकों की बहुत बड़ी भीड़ ने एकत्रित हो राजप्रासाद की ओर प्रस्थान किया है। नगरपालक ने नगररक्षकों द्वारा उस भीड़ को राजपथ के मध्य वाले चौराहे पर रोका हुआ है।"

"उस भीड़ को राजप्रासाद तक क्यों नहीं आने दिया गया?"

"वे महाराज और राजपरिवार के प्रति अपशब्द कह रहे हैं।"

"क्या कह रहे हैं?"

"वह मैं राजसेवक होने से अपने मुख से नहीं कह सकता।"

"तो वह कोई राज्य के सम्बन्ध की बात है?"

"राज्य के विरुद्ध तो वे लोग समाघोष कर ही रहे हैं। राजपरिवार भी तो राज्य का एक अंग है। महाराज! वे राजकुमारी दुर्गा के भैरवी–चक्र में जाने के विषय में कह रहे हैं।"

"मैं समझता हूँ कि उस भीड़ को मेरे सम्मुख आने दो। यदि वे कहेंगे तो मैं राज्य छोड़ दूँगा।"

"उनके कहने पर?"

"नहीं! उनकी बात युक्तियुक्त होने पर। मैं समझता हूँ कि राज्य मेरी सम्पत्ति नहीं। मैं राज्य का सेवक हूँ। यदि जनता मेरी सेवा को स्वीकार नहीं करती तो मेरा अधिकार नहीं कि मैं एक क्षण के लिए भी इस राजगद्दी पर बैठा रहूँ।"

"उस भीड़ के साथ तो कोई भी युक्ति नहीं कर सकता। वह इस समय उत्तेजना से भर रही है। उत्तेजित व्यक्ति युक्ति नहीं कर सकते। विशेष रूप से जब उत्तेजित व्यक्ति नहीं, भीड़ हो।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"ठीक है। आप अभी जाइए और उनको कहिए कि उनके प्रतिनिधि से मैं बात करूँगा। वह आ सकता है।"

"भीड़ का भी कोई प्रतिनिधि हो सकता है क्या? उनके सिर पर तो इस समय उन्माद सवार है।"

"महाराज! वे राजप्रासाद को आग लगा फूँक देंगे और यदि आप आज्ञा दें तो मैं सैनिकों को आज्ञा दे दो–चार सौ की हत्या करा सकता हूँ।"

"देखिए, महामन्त्री! यह भीड़ अनियन्त्रित नहीं। इसको भड़काने वाला कोई है और वह स्वयं प्रतिनिधि बन यहाँ आएगा। आप जाइए। भीड़ को यहाँ नहीं आने देना चाहिए। उनके दो–तीन प्रतिनिधि आ सकते हैं। मैं उनके रोष का कारण जानना चाहता हूँ। यत्न करूँगा कि उनका समाधान कर दूँ।"

"बहुत कठिन है, महाराज!"

"उस कठिनाई को पार करने के लिए मन्त्रिमण्डल की बैठक अभी होनी चाहिए।"

यद्यपि महामन्त्री चाहता था कि घुड़सवार सैनिकों को भीड़ पर छोड़ दिया जाए और उसे तितर–बितर कर दिया जाए, परन्तु इस प्रकार का भीषण काण्ड करने से पहले महाराज की आज्ञा की आवश्यकता थी।

अब महाराज की आज्ञा ले वह नगर चौक की ओर चल पड़ा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तृतीय परिच्छेद

राजनीति में नीति के परिणाम से तटस्थ रहने वाले व्यक्ति राजनीति का भोग करने वालों से अधिक प्रभावी होते हैं। वे निष्काम भाव से काम कर रहे प्रतीत होते हैं।

राजा लोग अपने पद के मोह में यह भूल जाते हैं कि जिन पर शासन करना है, वे निर्जीव नहीं हैं, वे बुद्धि भी रखते हैं। जो शासक प्रजा को अपने साथ रखकर उस पर शासन करता है, वह सदा सफल होता है।

इस कारण राजनीति से तटस्थ, परन्तु प्रजा पर प्रभाव रखने वाले को अपने साथ रखना अत्यावश्यक होता है।

पण्डित विष्णुकान्त महाराज को यह सिद्धान्त की बात बता रहा था। जब महामंत्री विप्रबन्धु नगर चौक में बौद्ध भीड़ को शान्त कर उनके प्रतिनिधि को महाराज से मिलने के लिए कहने चला गया तो महाराज ने विष्णुकान्त को बुला लिया था। विष्णुकान्त आया तो एक नई सूचना लाया। उसने बताया, "महाराज! तीन–चार सहस्र की भीड़ है। इसमें एक सहस्र से अधिक भिक्षु हैं। शेष उपासक और तमाशा देखने वाले हैं।

"भीड़ को जब नगर चौक में रोका गया तो वे लोग, जो तमाशा देखने आए थे, यह समझ कि नगररक्षक लाठियों से भीड़ को तितर–बितर करेंगे, चुपचाप खिसकने लगे थे। इससे श्रावकों के मन में भी उत्साहहीनता के लक्षण दिखाई देने लगे थे।

"परन्तु भीड़ के उत्साह और क्रोध को उग्र रखने के लिए वहाँ एक अन्य भयंकर तमाशा सम्पन्न करने का आयोजन है। एक श्रावक ने यह घोषणा की है कि यदि इस शान्तिमय भीड़ के किसी एक भी घटक को पीटा गया तो वह अपने को आग लगाकर जल मरेगा।

"वह श्रावक अपने वस्त्रों पर तेल डाल, चकमक पत्थर से आग लगाने की धमकी दे रहा है। वह एक ऊँचे स्थान पर खड़ा है और इस नए तमाशे को देखने के लिए पुनः भीड़ में वृद्धि होने लगी है।"

"तुम क्या समझते हो कि क्या होना चाहिए, और वे लोग क्या चाहते हैं?"

"महाराज! इन एक सहस्र के कहने से राज्य–परिवर्तन नहीं हो सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भय यह है कि वे जो बात कह रहे हैं उसका युक्तियुक्त प्रतिवाद न होने से इनका प्रजा पर प्रभाव बढ़ेगा और प्रजा के विरुद्ध होने पर राज्य बदल जाएगा।''

''पर मैं तो स्वयं ही राज–पद त्यागने के लिए तैयार हूँ।''

''परन्तु इतने–मात्र से बौद्ध श्रावक सन्तुष्ट नहीं होंगे। वे तो यहाँ भी यह चाहेंगे कि जलौक तथा उसके लड़के के स्थान पर महाराज अशोक का राज्य स्थापित हो जाए।''

''तो इसमें क्या हानि है?''

''हानि यह है कि देश का ज्ञान–भण्डार दीमकों का भोजन बन जाएगा और यहाँ 'बुद्धं शरणं गच्छामि' इत्यादि तीन पद ही शेष रह जाएँगे। इन तीन पदों से देश रसातल को चला जाएगा। कम्बोज तथा क्षीरसागर तट पर रहने वाले म्लेच्छ यहाँ राज्य स्थापित कर घोर अनाचार और अत्याचार करेंगे।

''महाराज! वे लोग भी किसी समय वेदानुयायी ही थे। वहाँ के शासकों ने यह समझा कि वेद–ज्ञान को छोड़ अपनी बुद्धि से शासन और धर्म–व्यवस्था चलाएँगे।''

''ज्ञान के मूल स्रोत के विस्मरण होने पर घोर अंधकार व्याप्त होने से वहाँ पशुपन पनप रहा है और वे लोग इस शान्तिप्रिय निःशस्त्र भीड़ पर लपक पड़ेंगे और फिर यहाँ पशुओं का राज्य हो जाएगा।''

''यह तो एक बार पहले भी आपने बताया था। आपका कहना था कि बुद्धिमानों का यह कर्तव्य है कि दैवी राज्य यहाँ स्थिर रखें।''

''परन्तु समस्या है कि अपनी ही प्रजा का रक्तपात करना होगा। यह उचित नहीं जान पड़ता।''

''महाराज! बिना रक्तपात के तो आज से पाँच वर्ष पूर्व सर्वथा सहज था। इस विदेशी नागरिक को देश से निकाल देना चाहिए था। उस समय इसका कोई शिष्य नहीं था। बाहर से आने वाले श्रावकों पर प्रतिबन्ध लगा देना चाहिए था।

''अब भी समय है। मुझे विश्वास है कि प्रजा बहुत बड़ी संख्या में इन सिर–मुँडों के विचार की नहीं है। परन्तु इसके लिए नीतियुक्त व्यवहार करना चाहिए। आज नीतियुक्त व्यवहार में दस–बीस के सिर फोड़ने आवश्यक हो गए हैं।''

अभी यह विचार–विमर्श हो ही रहा था कि महामन्त्री तीन श्रावकों के साथ महाराज के सम्मुख आ उपस्थित हुआ। इनमें से एक श्रावक के हाथ बँधे थे। भदन्त नारायण इनमें एक था। विप्रबन्धु को विष्णुकान्त को वहाँ बैठे देख सुख अनुभव नहीं हुआ। वह समझता था कि यह ब्राह्मण किसी महान् हत्याकाण्ड

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सम्मति दे रहा होगा।

महाराज ने महामन्त्री को श्रावकों के साथ आते देख सुख का साँस लिया। नारायण ने विष्णुकान्त को वहाँ देख महामन्त्री से कहा, "मैं इस पण्डित से बात नहीं करूँगा।"

विप्रबन्धु ने कहा, "यह बात आप महाराज से कहिए। यह मेरा अधिकार नहीं है।"

जलौक ने हाथ बँधे श्रावक को देखा। उसके कपड़े तेल से भीगे हुए थे। वह समझ गया कि वह श्रावक कौन है।"

"तो यह देवता जल मरने के लिए तैयार हो रहे थे?" जलौक ने पूछा।

उत्तर नारायण ने दिया, "महामन्त्री ने इस श्रावक को धोखा देकर वहाँ से अपने साथ ले लिया है। इन्होंने इसे कहा था कि इनको अपनी माँग महाराज के सम्मुख उपस्थित करनी चाहिए और जल मरने की धमकी भी उनको ही देनी चाहिए।

"अतः हमने इसको भी अपने प्रतिनिधिमण्डल में सम्मिलित कर लिया है। परन्तु राजप्रासाद में प्रवेश करते ही इनकी आज्ञा से इसके हाथ बाँध दिए गए हैं और आग लगाने का चकमक इसके हाथ से छीन लिया गया है।"

विप्रबन्धु ने इस आरोप का उत्तर दिया, "महाराज! यह हमारे राज्य का नियम है कि आत्महत्या करने की धमकी देने वाले को ऐसा न करने दिया जाए। मैंने उस नियम का पालन करते हुए ही इस श्रावक को आत्महत्या करने से रोका है।"

"परन्तु यह आपके राज्य का नागरिक नहीं है।" नारायण ने कह दिया।

महाराज ने कहा, "तब तो बात सुगम हो गई है। इसे राज्य से बाहर ले जाकर छोड़ दिया जाए जिससे यह सुख से निर्वाण प्राप्त कर सके।"

इस पर तो विप्रबन्धु भी हँस पड़ा। भदन्त नारायण भी मुस्करा रहा था। वास्तव में वह अपने कथन का युक्तियुक्त उत्तर पा अपने निरुत्तर होने को छुपा रहा था।

महाराज ने कहा, "महामन्त्री! इस बन्दी श्रावक को जो हमारे राज्य का नागरिक नहीं, यहाँ से विदा कर दो।"

"परन्तु यह कुछ निवेदन करने आया है। वह निवेदन सुन लिया जाए। निवेदन तो अन्य राज्यों के नागरिक भी करने का अधिकार रखते हैं।"

"तो भगवन्! बैठिए।" महाराज ने श्रावकों को बैठने के लिए कह दिया।

जब सब बैठ गए तो भदन्त ने कहना आरम्भ किया, "हम बौद्ध मतावलम्बियों को आपके राज्य में बहुत कष्ट है। इस राज्य में नित्य सहस्रों की संख्या में भेड़–बकरियाँ बलि दी जाती हैं। यह हमें असह्य है। हमारी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पहली माँग यह है कि इस जीवहत्या को तुरन्त बन्द करने की आज्ञा दी जाए। और...''

भदन्त कुछ और माँगें भी उपस्थित करने वाला था, परन्तु महाराज ने कह दिया, ''इन माँगों के विषय में राज्य की ओर से तो मन्त्रिमण्डल ही उत्तर दे सकेगा। परन्तु एक–एक माँग के विषय में पूरी जानकारी हम अभी प्राप्त कर लेना चाहते हैं। वह इस कारण कि मन्त्रिमण्डल को निर्णय करने में सुविधा रहे।''

इस पर नारायण ने कहा, ''हाँ, महाराज! आज्ञा करिए, और क्या जानना चाहते हैं?''

महाराज ने विष्णुकान्त की ओर देखा। इसका अभिप्राय था कि वह जानकारी प्राप्त करेगा। विप्रबन्धु यह नहीं चाहता था, परन्तु महाराज के संकेत पर विष्णुकान्त ने महामन्त्री की ओर ध्यान दिए बिना पूछ लिया, ''भगवन्! आपने एक बार मन्त्रिमण्डल के पूछे जाने पर लिखकर यह बताया था कि आप कश्मीर के नागरिक नहीं हैं।''

''हमारे राज्य में विदेशियों को रहने तथा भ्रमण करने की स्वीकृति तो है, परन्तु विदेशियों को प्रजा का प्रातिनिध्य करने की स्वीकृति नहीं। इस कारण हम यह जानना चाहते हैं कि आप किस अधिकार से यहाँ के नागरिकों की मान्यताओं के विषय में यह कह रहे हैं।''

''मानवता के नाते।''

''परन्तु भगवन्! यह तो पशुओं के पक्ष की बात है, मानवों की नहीं।''

''परन्तु मानवों की बलि भी तो दी जाती है।''

''कोई उदाहरण दीजिए। मानव–बलि राज्य नियम के विरुद्ध है। ऐसा करने वालों को दण्ड दिया जाएगा।''

''इसका उदाहरण हम महाराज के सम्मुख उपस्थित करेंगे।''

''ठीक है। जब वह उपस्थित करेंगे तो श्रीमान् महाराज कश्मीर देश के नियमानुसार उस पर कार्य करेंगे।''

''जहाँ तक पशु–हत्या का सम्बन्ध है, कश्मीर देश का नागरिक कुछ कह सकता है। आप किसी कश्मीर नागरिक को उपस्थित करिए जो पशु–बलि का विरोध करता हो।''

''मैं कोटि–कोटि कश्मीर निवासी बौद्ध उपासकों का प्रातिनिध्य करता हूँ।''

''आपके कथन में दो मिथ्यावाद हैं। एक तो यह कि इस देश में कोटि–कोटि बौद्ध उपासक हैं। दूसरा मिथ्यावाद यह है कि आप उनका प्रातिनिध्य करते हैं। कश्मीर राज्य के सम्मुख कश्मीर प्रजा का प्रातिनिध्य कोई

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
विदेशी नहीं कर सकता। क्या आप किसी कश्मीर नागरिक को उपस्थित कर सकते हैं जो यह माँग करे?"

"हाँ! मैं मध्याह्नोत्तर उपस्थित कर दूँगा।"

"ठीक है। उस व्यक्ति को नगर न्यायाधीश के सम्मुख उपस्थित कर देना। एक, वह यह बताएगा कि बहुसंख्या में उपासक मांस नहीं खाते और उनको इस बलि चढ़ाने का दुःख होता है। दूसरा, वह यह बताएगा कि कश्मीर की जनता में बौद्ध उपासक कितने हैं।

"देखिए, भगवन्! यह जनता के व्यवहार की बात है। यदि कश्मीर की बहुसंख्यक जनता यह चाहेगी कि वे पशु–बलि नहीं चाहते तो इस विषय में मन्त्रिमण्डल व्यवस्था कर देगा। अन्यथा जब तक बहुसंख्या बलि के विरुद्ध नहीं हो जाती तब तक राज्य किसी भी सम्प्रदाय की मान्यताओं का विरोध नहीं कर सकता।"

"तो क्या अल्पसंख्या में लोगों को मानसिक दुःख पहुँचाया जाना राज्य सहन करेगा?"

"हम अल्पसंख्या को यह स्वीकृति देते हैं कि वे प्रचार द्वारा बहुसंख्या में जनता को अपने अनुकूल बना लें। तब तक राज्य इसमें हस्तक्षेप नहीं करेगा। परन्तु इस प्रश्न पर मन्त्रिमण्डल तब विचार करेगा, जब कोई कश्मीर नागरिक, बौद्ध उपासक अथवा कोई अन्य यह याचिका न्यायाधीश के सम्मुख उपस्थित करेगा। वह पूर्ण स्थिति से मन्त्रिमण्डल को अवगत करा देगा और मन्त्रिमण्डल इस पर न्यायोचित आज्ञा दे देगा।"

महाराज ने पूछा, "हाँ, तो भगवन्! और बताइए। आप और क्या चाहते हैं?"

"हम चाहते हैं कि मन्दिरों में नग्न कुमारियों के भग की पूजा न की जाए।"

विष्णुकान्त ने कहा, "यह बात राज्य को ज्ञात है। परन्तु आज तक किसी कश्मीरी ने यह याचिका नहीं की कि उससे ऐसा व्यवहार उसके अथवा उसके माता–पिता की इच्छा के बिना किया गया है।

"जब तक ऐसा व्यवहार किसी को विवश करके करने का आरोप न हो तब तक राज्य इसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता। किसी मकान अथवा मन्दिर के भीतर लोग स्वेच्छा से यह व्यवहार करें तो राज्य भला क्यों इसमें हस्तक्षेप करेगा?"

"परन्तु इसका जन–मानस पर बहुत अनिच्छित प्रभाव होता है।"

"यह सार्वजनिक स्थान पर नहीं किया जाता। वहाँ पूजा करने वाले और पूजा कराने वाले स्वेच्छा से जाते हैं। किसी बाहरी व्यक्ति को, जो उस प्रकार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
की पूजा में विश्वास नहीं रखता, जाने का न निमन्त्रण होता है और न स्वीकृति। ऐसी अवस्था में राज्य इसमें क्यों हस्तक्षेप करे?''

''परन्तु जब राजपरिवार की कुमारी वहाँ गई है तो क्या यह सार्वजनिक घटना नहीं हो गई?''

''क्या राजकुमारी और उसके माता–पिता को आप मानव नहीं मानते? क्या उनके मनोद्गार, भावनाएँ और आकांक्षाएँ नहीं हैं? क्या आप यह नहीं मानते कि राजपरिवार के लोग अपना कुछ भी निजी स्वत्व नहीं रखते?''

''श्रीमन्! राजा की पदवी एक नागरिक की पदवी से बहुत ऊँची है। वह एक सार्वजनिक आदर्श उपस्थित करता है।''

''अर्थात् आप यह मानते हैं कि एक राजा का अपना निजी जीवन नहीं है?''

''वह चौबीसों घण्टे राजसेवक है।''

''ठीक है। परन्तु उन चौबीसों घण्टों में भी तो वह खाता, पहनता, पत्नी की संगति में जाता ही है। क्या ये उसके निजी व्यवहार नहीं हैं?''

''हम ऐसा नहीं मानते। राजा को प्रजा के सम्मुख एक आदर्श बनकर रहना चाहिए।''

''अर्थात् राजा को अपनी व्यक्तिगत बातों में भी स्वतन्त्रता नहीं होनी चाहिए?''

''इसका मानवों पर बहुत बुरा प्रभाव होता है। सब बड़े लोग उनका अनुकरण करते हैं।''

''तो आप ऐसा करिए कि प्रजा को इन निजी बातों में राजा का अनुकरण करने से मना करें। राजा के सार्वजनिक कार्य भी हैं। राज्य को शासन न्याययुक्त और सुचारु रूप में करना है। इसमें वे राज्य का अनुकरण करें। इसमें आपको क्या आपत्ति है?''

''हम राज्य को ऐसे व्यक्ति के हाथ में देना चाहते हैं, जो चरित्रवान हो।''

''ठीक है। आप जनता में यह प्रचार करिए कि राजा का चरित्र कैसा होना चाहिए। जनता जब चाहेगी कि राजा का निजी जीवन भी उसकी इच्छा अनुसार होना चाहिए तब जो राजा वैसा नहीं रह सकेगा, राजगद्दी छोड़ देगा अथवा प्रजा उसे राज्यच्युत कर देगी।''

''हम यही तो कर रहे थे। हम यह घोष करते हुए राजप्रासाद की ओर आ रहे थे कि हमें रोक दिया गया है।''

''आप इसे प्रचार कहते हैं?''

''हाँ, पण्डितजी। यह प्रचार का एक ढंग है। जनता की भावनाओं को उभारकर नेक कार्य कराना भी प्रचार है।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो ठीक है। जब मन्त्रिमण्डल इसे प्रचार का एक उचित उपाय स्वीकार कर लेगा तब आप यह भी कर सकेंगे। जनता की कामनाओं को भड़काना अभी तक राज्य उचित उपाय नहीं मानता। परन्तु आपके इस सुझाव पर मन्त्रिमण्डल विचार करेगा।"

"हमारी एक अन्य माँग भी है। हमारा एक श्रावक, कुछ दिन हुए अन्याययुक्त ढंग से बन्दी बनाया गया था। हम चाहते हैं कि उस न्यायाधीश को दण्ड दिया जाए।"

"इसकी एक याचिका मन्त्रिमण्डल में दे देनी चाहिए। मन्त्रिमण्डल आपकी याचिका पर विचार करेगा।"

इस समय राजप्रासाद का एक सेवक वहाँ आया और विष्णुकान्त के कान में कुछ कहकर चला गया।

विष्णुकान्त ने कह दिया, "भगवन्! आपके सब–के–सब श्रावक और उपासक भागकर श्रीनगर के बौद्ध विहार में चले गए हैं। उनको मौत का भय लग गया है।"

"महाराज! अवश्य उन पर किसी प्रकार का बल अथवा छल का प्रयोग किया गया होगा। मैं श्रीमान् से यह प्रार्थना करता हूँ कि राज्य के जिस अधिकारी ने ऐसा किया है, उसे दण्ड दिया जाए।"

"भगवन्! सूचना यह है कि महामन्त्री महोदय के वहाँ से चले आने के उपरान्त भैरव उपासकों की एक भीड़ वहाँ आ गई थी। वे भी कुछ सहस्र की संख्या में थे। बौद्ध भीड़ जब भैरव मन्दिरों के विरुद्ध समाघोष कर रही थी तो भैरव उपासकों ने बौद्ध विहारों की निन्दा करनी आरम्भ कर दी। इस पर दोनों दलों में तनाव बढ़ गया। नगररक्षक तो तटस्थ देखते रहे। कदाचित् उनका विचार था कि दोनों घोष करते हैं तो करते रहें, जब वे किसी प्रकार की हिंसा करेंगे तो हस्तक्षेप किया जाएगा।

"एकाएक पहले दर्शक वहाँ से दूर जा खड़े हुए और फिर वे अपने–अपने घरों को जाने लगे थे। उसके बाद बौद्ध उपासक वहाँ से जाने लगे और जब कुछ सौ श्रावक रह गए तो वे भाग खड़े हुए और नगर विहार में जा छुपे हैं। अब विहार का द्वार बन्द कर भीतर बैठे हैं।"

"महाराज! कुछ अत्यन्त भीषण काण्ड हुआ है, अन्यथा यह हो नहीं सकता था।"

: 2 :

इस समय एक अन्य सेवक महामन्त्री को सूचना दे रहा था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भदन्त नारायण जब कह चुका तो महामन्त्री ने नारायण तथा महाराज को सम्बोधित कर कहा, "भैरव सम्प्रदाय का सर्वोच्च पुजारी भूरिश्रवा महाराज से कुछ निवेदन करना चाहता है। वह राजप्रासाद के बाहर खड़ा है और भेंट के लिए प्रार्थी है।"

"महामन्त्री क्या चाहते हैं?" महाराज का प्रश्न था।

"जब बौद्ध प्रतिनिधिमण्डल महाराज से भेंट कर निवेदन कर रहा है तो प्रजा के दूसरे अंग से भी मिल लेना चाहिए। वे क्या चाहते हैं, यह जान लेना ज्ञानवर्धक एवं उपयोगी होगा।"

जलौक ने समीप बैठे विष्णुकान्त की ओर देखा तो उसने कहा, "महाराज! यह तो बहुत ही शुभ सुअवसर उपस्थित हो गया है। दोनों परस्पर विरोधी मत वाले अपने-अपने विचार एक-दूसरे के सम्मुख उपस्थित करें तो बहुत अच्छा होगा।

"महाराज! मेरी सूचना है कि भैरव उपासक सब राजप्रासाद के बाहर एकत्रित हैं और सबके सब त्रिशूल लिए हुए हैं। अतः यह आज्ञा होनी चाहिए कि भूरिश्रवा अकेला ही भीतर आए। वह खाली हाथ आए। साथ ही राजप्रासाद के संरक्षक सतर्क कर दिए जाएँ कि यदि ये भैरव उपासक किसी प्रकार की हिंसा करें तो उनको भगाया जा सके।"

विप्रबन्धु ने कहा, "सुरक्षा-सम्बन्धी आज्ञा हो चुकी है।"

जलौक ने आदेश दे दिया, "भूरिश्रवा को भीतर ले आया जाए।"

भदन्त नारायण ने कहा, "महाराज! मुझे जाने की स्वीकृति दी जाए, जिससे मैं मध्याह्नोत्तर मन्त्रिमण्डल के समक्ष अपने आरोप उपस्थित कर सकूँ।"

"हम समझते हैं कि विरोधी पक्ष की बात भी सुनते जाइए। मध्याह्नोत्तर दी जाने वाली याचिका में सहायता मिल सकेगी।"

"मैं इस हत्यारे और दुराचारी का मुख नहीं देखना चाहता।"

"बस! क्या मानव-सुधार की भावना हवा में उड़ गई? बिगड़े हुओं का ही तो सुधार करने का आप यत्न कर रहे हैं?"

विष्णुकान्त ने जब यह कहा तो महाराज ने मुस्कराते हुए कह दिया, "भगवन्! चिन्ता नहीं करनी चाहिए। यहाँ राजप्रासाद में यह भयंकर जीव आपका कुछ भी नहीं बिगाड़ सकेगा।"

नारायण अभी विचार ही कर रहा था कि वहाँ रहे अथवा चला जाए कि तभी भूरिश्रवा को दो द्वारपालों के बीच में ले आया गया।

जलौक अभी भी मुस्करा रहा था। जब भूरिश्रवा सामने उपस्थित हुआ तो जलौक ने विष्णुकान्त को भूरिश्रवा से जानकारी प्राप्त करने के लिए कहा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णुकान्त ने पूछा, "पुजारीजी! ये भदन्त नारायण कह रहे हैं कि आपके उपासकों ने बौद्ध उपासकों से हिंसायुक्त व्यवहार किया है।"

"पण्डितजी! ये तो वहाँ उपस्थित नहीं थे। अतः जो कुछ ये कह रहे हैं, इनकी कल्पना की बात ही हो सकती है। मेरा निवेदन है कि एक बूँद रक्त भी बहाए बिना हमने बौद्ध श्रावकों को वहाँ से भगा दिया है।"

"परन्तु क्यों?"

"वे भैरव–उपासकों को अपशब्द कह रहे थे और राजनियम के अनुसार कदाचित् किसी को अपशब्द कहना अपराध नहीं है– इसी कारण नगररक्षक इन पीतवसनधारी सिरमुँड़ों को भले लोगों को अपशब्द कहने पर भी पकड़ नहीं रहे थे।

"मैं अकस्मात् रात राजधानी में ही रह गया था। बहुत प्रातःकाल मैं अपने पूजन के लिए भैरवपुरी को जाने के लिए रथ पर सवार हो रहा था कि भैरव–उपासकों को अपशब्द कहती हुई दो सहस्र के लगभग भीड़ राजप्रासाद की ओर आ रही थी। एकाएक नगररक्षकों ने इनको नगर चौक में रोक लिया। इनकी पिटाई होती देखने के लिए बहुत–से दर्शक भी वहाँ आकर एकत्रित हुए थे। नगररक्षकों ने इस अपशब्द कहती हुई भीड़ को तितर–बितर नहीं किया। तब मुझे एक योजना सूझी। मैं भैरव मन्दिर में गया और आधे घण्टे में एक सहस्र के लगभग भैरव–उपासकों को एकत्रित करके ले आया। उनको लेकर मैं भी चौक में पहुँच गया।

"हमारे वहाँ पहुँचने से पूर्व बौद्ध प्रतिनिधिमण्डल महाराज की सेवा में आ चुका था। हम भी अपना एक प्रतिनिधि महाराज की सेवा में भेजना चाहते थे। इस कारण हमने राजप्रासाद की ओर बढ़ना चाहा। हमें आगे बढ़ता देख श्रावक भाग खड़े हुए। हमने किसी पर प्रहार नहीं किया। वे स्वयमेव ही भयभीत होकर भागे थे।"

"परन्तु आप सबके हाथों में त्रिशूल तो थे?"

"वे स्व–रक्षा के लिए थे। दूसरों को पीड़ित करने के लिए नहीं।"

"परन्तु आपके विरोधी तो यही समझे थे कि आप उन पर त्रिशूलों से आक्रमण करने के लिए आए हैं।"

"यही तो कह रहा हूँ कि आप यहाँ बैठे कल्पना की बातें कर रहे हैं। वस्तुस्थिति यह नहीं है। हमने किसी भी व्यक्ति को छुआ तक नहीं। भागने वाले तो त्रिशूल देखते ही भाग खड़े हुए हैं।"

"परन्तु किसी को भयभीत करना तो अपराध है।" महामन्त्री ने कहा।

"ठीक है। श्रीमन्! यह मैं जानता हूँ। परन्तु जब सैकड़ों लोग इकट्ठे मिलकर किसी दूसरे को गाली देते हैं तो क्या वह भयभीत करना नहीं है?

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"श्रीमन्! गाली देने के दो प्रयोजन होते हैं। एक तो गाली दिए जाने वाले व्यक्ति को अपमानित करना और दूसरे दर्शकों को उसके विरुद्ध करके उसके जान तथा माल को विनष्ट करने की धमकी देना। ये दोनों अपराध हैं। परन्तु जब राजकर्मचारियों ने इन अपराध करने वालों को बन्दी नहीं बनाया और न ही उनको ऐसा करने से मना किया तो हम, जो अपमानित किए जा रहे थे तथा जिनके मन्दिर अरक्षित हो गए थे, अपनी रक्षा की माँग करने के लिए राज्याधिकारियों के सम्मुख आना चाहते थे।

"हम तो अपने स्वाभाविक स्वरूप में ही त्रिशूल धारण किए हुए ही आ रहे थे। हम लोग कुछ भी अपशब्द कहे बिना अथवा किसी पर प्रहार किए बिना आ रहे थे, परन्तु ये भिक्षु अकारण भाग खड़े हुए थे। इसमें हमारा दोष नहीं।"

"परन्तु!" महामन्त्री ने पूछ लिया, "क्या पुजारी यह नहीं समझता कि सहस्रों की संख्या में शस्त्र धारण किए हुए घूमना–मात्र भय उत्पन्न कर सकता है?"

विष्णुकान्त समझ रहा था कि महामन्त्री विप्रबन्धु उसी मानसिक अवस्था का प्रदर्शन कर रहा है जिसका उसने एक दिन सायं के समय उससे वार्तालाप के समय किया था। इस कारण विष्णुकान्त ने बातों में हस्तक्षेप करते हुए कहा, "महाराज! बौद्ध महाप्रभु का यह आरोप है कि भैरव–उपासक त्रिशूल लेकर शान्तिप्रिय बौद्ध जनता को त्रसित कर रहे थे। मैं समझता हूँ कि यह आरोप न्यायाधीश के सम्मुख जाना चाहिए। इस विषय में राजनियम होने से न्यायाधीश इसकी जाँच करके अपराधी को दण्ड दे सकता है।

"दूसरी ओर पुजारीजी का यह आरोप है कि सहस्रों की संख्या में एकत्रित होकर किसी सम्प्रदाय वालों को गालियाँ देना भी उस सम्प्रदाय वालों को आतंकित करना है। राजनियम से यह भी अपराध है। इस कारण मेरा निवेदन है कि यह आरोप भी न्यायाधीश के सम्मुख भेज देना चाहिए।

"यदि किसी पर अस्त्र–शस्त्र से आक्रमण किया गया है तो वह भी न्यायाधीश के सम्मुख उपस्थित होकर याचिका कर सकता है। राजरक्षक भी इस प्रकार के आरोप के अपराधी को न्यायाधीश के सामने उपस्थित कर सकते हैं।

"यहाँ तो हमको सैद्धान्तिक बातों पर ही विचार करना चाहिए। यदि आज्ञा हो तो मैं उसी विषय में पुजारीजी से दो–चार बातें जानने की इच्छा रखता हूँ।"

"हाँ, पूछो!" महाराज समझ गए कि आवश्यक बात को अनावश्यक बातों में भुलाया जा रहा है।

विष्णुकान्त ने भूरिश्रवा से पूछा, "बौद्ध महाप्रभु का कहना है कि

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भैरवी–चक्रों में जो अनाचार होता है, वह वर्जित होना चाहिए। क्या यह ठीक है?"

"पण्डितजी! अनाचार के लक्षण होने चाहिए।"

"जो आचरण विद्वान् लोग अहितकर समझें अथवा जिसकी स्वीकृति वेदशास्त्र में न हो, वह अनाचार कहलाता है।"

"परन्तु भैरवी–चक्रों की निन्दा करने वाला कौन विद्वान् है?"

"भदन्त नारायण ही निन्दा कर रहे हैं।" महाराज ने कह दिया।

"महाराज! क्या ये विद्वान् हैं? पहले तो इनकी विद्वत्ता की परीक्षा होनी चाहिए। परीक्षा यह होनी चाहिए कि इन्होंने किस गुरुकुल अथवा आचार्य–कुल में पठन किया है? ये किन शास्त्रों की विद्या को जानते हैं? मैं इनसे उन शास्त्रों के विषय में प्रश्न करूँगा। देखना चाहिए कि ये उनका उत्तर दे सकते हैं अथवा नहीं।"

विष्णुकान्त की हँसी निकल गई। उसने महामन्त्री से कहा, "श्रीमन्! मैंने इस विषय में जाँच करवाई है। भदन्त नारायण कभी नारायणदत्त थे जो दस वर्ष की वयस में पिता द्वारा पीटे जाने के कारण घर से भागकर गयाजी में पहुँच गए और वहाँ एक विहार में प्रवेश पा गए। इनकी शिक्षा पाली भाषा में हुई है और इनकी शिक्षा की सीमा प्रथम बौद्ध पटिका तक है। द्वितीय बौद्ध पटिका तो अभी लिखी जा रही है।"

महाराज ने पूछ लिया, "और उस प्रथम बौद्ध पटिका में क्या लिखा है?"

"महाराज! उसमें महात्मा तथागत बोधिसत्वजी की जीवन–सम्बन्धी कुछ कथाएँ हैं। वैसे उनमें से अधिकांश काल्पनिक हैं, कहीं शिष्यों से तथा दर्शकों से संवाद भी हैं।"

"तो क्या उनके पढ़ने से कोई विद्वान् नहीं हो सकता?"

"महाराज! मेरी जाँच का यह परिणाम है। यदि महाप्रभु अपनी परीक्षा देना स्वीकार करें तो मैं इनसे एक–दो प्रश्न पूछकर पता कर सकता हूँ कि ये क्या जानते हैं।"

"हाँ, तो महाप्रभु। आप बताइए। पण्डित विष्णुकान्त कहते हैं कि आप कुछ भी पढ़े–लिखे नहीं हैं। इस कारण आप किसी के आचरण को दुराचार कहने का अधिकार नहीं रखते।"

"मैं इस मूर्ख पण्डित को परीक्षा लेने का अधिकारी नहीं मानता। मैं इसे चुनौती देता हूँ कि यह जनसाधारण में खड़े होकर व्याख्यान करे और मैं भी भाषण करता हूँ। तब जनता ही इस बात का निर्णय करेगी कि यह विद्वान् है अथवा मैं विद्वान् हूँ। मुझे विश्वास है कि इस पण्डित की बात सुनने के लिए भी कोई खड़ा नहीं होगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

महाराज जलौक ने पूछ लिया, "तो धर्म–अधर्म का निर्णय नगर के चौराहे पर खड़े होकर किया जाएगा?"

"निःसन्देह, महाराज!" नारायण ने अति गर्व से कहा।

"क्यों विष्णुकान्त! तैयार हो इस परीक्षा के लिए?" जलौक ने मुस्कराते हुए पण्डितजी से पूछा।

"महाराज! मैं जनसाधारण को विद्वत्ता तथा धर्म का परीक्षक नहीं मानता। यदि विद्वन्मण्डल परीक्षा लेना चाहे तो मैं तैयार हूँ।"

भदन्त नारायण ने यह समझा कि पण्डित पराजित हो गया है। अतः उसने गर्व से कहा, "महाराज! जनता ही हमारी परीक्षक है। हम तो अपना आरोप उसी के सामने लगाएँगे।

"यह पुजारी भूरिश्रवा दुराचारी है। इसने महाराज को भी मूर्ख बनाकर उनकी कुमारी लड़की को नग्न कर उसको अपने उपासकों में जा खड़ा किया है। इस दुराचार का दण्ड जनता इसे देगी।"

भूरिश्रवा ने हाथ जोड़कर निवेदन किया, "महाराज! यह बिना अपना आरोप सिद्ध किए राज्याधिकारियों के सम्मुख धमकी दे रहा है। क्या राज्याधिकारी अपने राजनियम के अनुसार इस व्यक्ति को बन्दी बना इसे उचित दण्ड नहीं देंगे?"

इतना कहते–कहते भूरिश्रवा ने महामन्त्री की ओर देखा। महामन्त्री विप्रबन्धु तो महाराज की कन्या को नग्न कर उपासकों में खड़ा करना इतना बड़ा आरोप समझता था कि पुजारी को मृत्युदण्ड देने के योग्य मानता था। यदि उसे छूट होती तो वह भूरिश्रवा को बन्दी बनाने की आज्ञा देता। परन्तु महाराज की लड़की का नाम बीच में आने पर वह मौन था।

महामन्त्री को चुप और परेशान देख विष्णुकान्त कहने लगा, "महाराज! मेरा निवेदन है कि इस बौद्ध महाप्रभु ने एक बहुत बड़ा आरोप लगाया है। इसने कहा है कि पुजारी भूरिश्रवा ने महाराज को मूर्ख बनाया है। इसका निर्णय तो यहाँ ही होना चाहिए। मैं यह पसन्द नहीं करूँगा कि महाराज किसी न्यायालय में साक्षी के रूप में उपस्थित हों। इस बात का निर्णय आप स्वयं ही करेंगे कि आप मूर्ख नहीं बनाए गए थे अथवा सत्य ही आप मूर्ख बनाए गए थे।

"यह एक महान आरोप है। यदि पुजारी ने किसी प्रकार की धोखाधड़ी कर महाराज से कोई काम करवाया है तो पुजारी को दस वर्ष का कठोर कारावास का दण्ड दिया जाना चाहिए।"

"परन्तु!" जलौक ने पूछ लिया, "नारायणजी ने कहा है कि मैं मूर्ख बनाया गया हूँ। इस कारण आरोप तो मैं ही लगा सकता हूँ। महाप्रभु कैसे कह सकते

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं कि मैं मूर्ख बनाया गया हूँ?''

विष्णुकान्त का समाधान इस तर्क पर भी नहीं हुआ। उसने कहा, ''महाराज! इस बौद्ध महाप्रभु ने, जो इस देश का नागरिक भी नहीं, यह आरोप लगाया है कि मेरे देश के महाराज मूर्ख बनाए गए हैं। स्वाभाविक रूप में मेरा अधिकार है कि मैं इसकी जाँच–पड़ताल करने की माँग करूँ। मैं जाँच–पड़ताल करने के लिए महाराज से अथवा जिसे भी महाराज नियुक्त करें, उससे जाँच की माँग करता हूँ।

''इस विदेशी ने घोर अपमानजनक बात कही है जिसे कोई भी कश्मीर का नागरिक पसन्द नहीं करेगा और इसके कथन पर रोष प्रकट करेगा।''

''परन्तु हम इस विषय में जाँच पसन्द नहीं करते।''

महामन्त्री ने कहा, ''मेरा एक सुझाव है।''

''क्या सुझाव है?'' महाराज ने पूछा।

''यह विषय मन्त्रिमण्डल में उपस्थित किया जाए।''

''मुझे स्वीकार है। परन्तु मुझे अपना एक विद्वान् संरक्षक मन्त्रिमण्डल में उपस्थित कर मेरे पक्ष पर प्रकाश डालने की स्वीकृति होनी चाहिए। यह आरोप कि मुझे मूर्ख बनाया गया है, मेरे सम्प्रदाय की मान्यताओं से सम्बन्ध रखता है। अतः मुझे अपने व्यवहार को उचित प्रकट करने के लिए अपने सम्प्रदाय के किसी विद्वान् द्वारा मन्त्रिमण्डल में अपना मत प्रकट करने की स्वीकृति होनी चाहिए।''

महामन्त्री यह सुनकर कि सम्प्रदाय के किसी विद्वान् को उपस्थित हो महाराज का पक्ष उपस्थित करने के लिए कहा गया है, यह समझा कि वह भूरिश्रवा ही होगा। भूरिश्रवा तो स्वयं अपराधी है। वह महाराज की रक्षा कैसे करेगा? इस कारण महामन्त्री ने कहा, ''यह हो सकता है। परन्तु सम्प्रदाय के उस विद्वान् का नाम पहले ज्ञात होना चाहिए। मन्त्रिमण्डल इस पर विचार करेगा।''

''मुझे स्वीकार है। विष्णुकान्त का यह अरोप है कि भदन्त नारायण ने भूरिश्रवा पर यह आरोप लगाया है कि उसने कश्मीर–नरेश को मूर्ख बनाया है। इससे कश्मीर राज्य का घोर अपमान हुआ है। अतः जिसने यह अपमानजनक वाक्य कहा है उसे तब तक के लिए बन्दी बना लिया जाए। क्योंकि अपराध सिद्ध होने से पूर्व वह राज्य छोड़कर भाग भी सकता है।''

महामन्त्री ने परेशानी अनुभव करते हुए पूछा, ''अपराधी कौन है?''

''जिसने कहा है कि मैं मूर्ख बनाया गया हूँ। क्यों, विष्णुकान्त? किसके विरुद्ध आरोप लगा रहे हो?''

''महाराज! मेरा तो यह आरोप है कि इतना कहना मात्र ही कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कश्मीर–नरेश मूर्ख बनाया गया है, एक आपत्तिजनक कथन है। यदि यह सिद्ध हो जाए कि महाराज से किसी ने धोखाधड़ी की है तब धोखा देने वाला दण्डनीय हो सकता है।

"जहाँ तक मेरी सूचना है, महाराज को मूर्ख नहीं बनाया गया। उन्होंने सब–कुछ जानते हुए राजकुमारी को भैरवी–चक्र की उपासना में भेजा था और वे अब भी यही समझते हैं कि उन्होंने कुछ भी भूल नहीं की। उनको किसी ने धोखा भी नहीं दिया।"

"परन्तु पण्डित विष्णुकान्त! क्या यह स्वतः एक बुरी बात नहीं है?"

"किसी भैरव सम्प्रदाय से बाहर के व्यक्ति के लिए यह आचरण ठीक नहीं हो सकता, परन्तु भैरव सम्प्रदाय वाले तो इसे उचित और मोक्ष दिलाने वाला आचरण मानते हैं। एक सम्प्रदाय के आचरण को दूसरे सम्प्रदाय वालों के कहने पर कैसे भला–बुरा कहा जा सकता है?"

"तो इसका निर्णय कैसे हो सकता है?"

"इसका निर्णय प्रचार और प्रजा को प्रेरणा देने से होगा। सम्प्रदाय की उपासनाओं के विषय में राजनियम नहीं बनाए जा सकते।"

"तो इस विषय पर मन्त्रिमण्डल क्या विचार करेगा?"

"श्रीमन्! यह तो आपका सुझाव है कि यह विषय मन्त्रिमण्डल में रखा जाए। मैं तो इसका इस समय ही निर्णय करने की बात कह रहा था।"

"मान लो कि यह सिद्ध हो जाए कि नारायणजी ने जो कुछ अपत्तिजनक कहा है, वह है, तो हम यहाँ बैठे क्या दण्ड दे सकेंगे?"

"अपराधी को देश–निर्वासन की आज्ञा दी जानी चाहिए।"

"कौन आज्ञा देगा?"

"कश्मीर–नरेश मन्त्रिमण्डल की सम्मति से यह आदेश दे सकते हैं।"

"तो मामला मन्त्रिमण्डल में जाएगा?"

"देखिए, श्रीमन्! यह निर्णय तो महाराज ही करेंगे कि उनको किसी ने मूर्ख बनाया है अथवा नहीं। इस निर्णय के उपरान्त वे मन्त्रिमण्डल को परामर्श देंगे कि अपराधी को देश–निर्वासन की आज्ञा दी जाए।"

अब भूरिश्रवा ने कहा, "महाराज! यदि स्वीकृति दें तो मैं एक सुझाव उपस्थित करता हूँ।"

"हाँ, कहो।"

"एक सर्वमत सभा बुलाई जाए। उसमें सब मतों के विद्वान् एकत्रित हों और वे निर्णय दें कि भैरव–उपासनाएँ मानव–कल्याण के लिए हैं अथवा नहीं।"

"यदि विद्वन्मण्डल इसकी निन्दा करे तो उसे कहा जाए कि इस विषय

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

में एक पुस्तक लिखकर जनता में वितरण करे जिससे लोग इसका बहिष्कार कर सकें।''

''राजनियम ही क्यों न बनाया जाए?'' महामन्त्री का प्रश्न था।

भूरिश्रवा ने कहा, ''हाँ। यदि विद्वन्मण्डल यह निर्णय दे कि इस विषय में राजनियम बनना चाहिए तो राजनियम बनाया जा सकता है। यह विद्वन्मण्डल का अधिकार है कि वह कहे कि इस विषय में राज्य हस्तक्षेप करे अथवा न करे।''

''और तब तक भदन्त नारायण को भाग जाने की स्वीकृति दी जाए?'' विष्णुकान्त ने मुस्कराते हुए पूछ लिया।''

''नहीं। मैं नहीं भागूँगा।'' भदन्त नारायण ने कहा, ''शर्त यह है कि उस विद्वन्मण्डल में बौद्ध सम्प्रदाय का प्रतिनिधि भी होना चाहिए।''

''हाँ! वह तो होगा ही।'' महाराज ने स्वीकार कर लिया, ''परन्तु विद्वान् कौन है, इसका निर्णय मन्त्रिमण्डल ही करेगा।''

भदन्त नारायण ने कहा, ''तब तक हमें प्रचार–कार्य की तो स्वीकृति है न?''

''हाँ! बिना किसी को गाली दिए। अपशब्द कहना अपराध है और अब राज्याधिकारी आपको इस अपराध से मुक्त नहीं समझेंगे।''

वार्तालाप बन्द हुआ तो महामन्त्री इस विचार–विनिमय के परिणाम से असन्तुष्ट हो उठकर चला गया।

: 3 :

कश्मीर राज्य ने यह घोषणा कर दी कि कश्मीर की राजधानी श्रीनगर में एक सर्वपन्थ सम्मेलन बुलाया जाएगा। उस सम्मेलन में उपस्थित होने के लिए तत्कालीन सब सम्प्रदायों को अपना–अपना प्रतिनिधि भेजने का निमंत्रण दिया गया। मन्त्रिमण्डल का यह निर्णय था कि प्रत्येक सम्प्रदाय अपने दस–दस विद्वानों को प्रतिनिधि बनाकर भेजे। ये दस विद्वान् श्रीनगर में आएँ और उपस्थित समस्याओं पर विचार कर अपने एक प्रतिनिधि द्वारा अपना मत सम्मेलन में रखें। सम्प्रदायों के ये विद्वान् कश्मीर के बाहर से भी बुलाए गए।

कश्मीर राज्य की ओर से आचार्य शंखपाणि को इस सम्मेलन का संयोजक और अध्यक्ष नियुक्त किया गया। निमंत्रण भैरव, शैव, बौद्ध, वैदिक, जैन मतावलम्बियों और कुछ अन्य सम्प्रदाय की संस्थाओं को भेजा गया। इन सब सम्प्रदायों में बौद्ध सबसे अधिक संगठित थे। जैन सम्प्रदाय के लोग भी कश्मीर में बसे हुए थे, परन्तु उनका किसी प्रकार का संगठन कश्मीर में नहीं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
था। कश्मीर से बाहर आबू में इनका बहुत बड़ा मठ था। शैव, भैरव और वैदिक मतानुयायी तो प्रायः असंगठित ही थे। इनके देश से बाहर भी कहीं मठ नहीं थे। अतः आचार्य शंखपाणि ने बौद्धों को तो भदन्त नारायण द्वारा आमन्त्रित कर लिया और अन्य सम्प्रदायों के आचार्यों को लिखा गया कि वे अपने विद्वानों की सूची भेज दें जिससे उनको राज्य की ओर से निमन्त्रण भेजा जाए।

भदन्त नारायण के पास निमन्त्रण पहुँचा तो उसने उत्तर में लिख भेजा "बौद्ध संघ जिन लोगों को कश्मीर विद्वत्–सम्मेलन में भेजना चाहता है उनके नामों की सूची तैयार करने में छः मास लगेंगे।"

यह समय बौद्ध सम्प्रदाय को दिया गया। इस काल में नारायण ने एक ओर तो कश्मीर राज्य में बौद्ध प्रचार उग्र कर दिया, दूसरी ओर सहस्रों की संख्या में बौद्ध श्रावक भारत से कश्मीर में आमन्त्रित कर लिए और पीतवसनधारी श्रावकों से कश्मीर–भर के नगर एवं ग्राम पीले रंग में रँग दिए।

सर्वसम्प्रदाय सम्मेलन से पूर्व ही मार्तण्ड में एक विशाल बौद्ध सम्मेलन बुला लिया गया। इसमें कश्मीर के भीतर और बाहर से दो लाख श्रावक और उपासकों के बुलाने का प्रबन्ध किया गया।

इस सम्मेलन के बुलाने से पूर्व बौद्ध व्यवहार का पूर्ण कार्यक्रम बना लिया गया। यद्यपि यह कार्यक्रम पूर्णरूपेण गुप्त समिति में बनाया गया था, परन्तु जब इसके विषय में आज्ञाएँ जारी होने लगीं तो बात छुपी नहीं रह सकी और कश्मीर राज्य और विष्णुकान्त को पृथक्–पृथक् मार्गों से इसके विषय में समाचार पहुँचने लगे। कठिनाई यह उपस्थित हुई कि दोनों स्रोतों से आए समाचार परस्पर विरोधी प्रतीत होने लगे।

एक दिन विष्णुकान्त ने महाराज से अपनी सूचना वर्णन कर दी। उसने कहा, "महाराज! आगामी वैशाख प्रतिपदा के दिन मार्तण्ड में एक बौद्ध महासम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है।"

"यह सूचना मन्त्रिमण्डल के पास पहुँच चुकी है। इसके लिए पचास के लगभग इनके उच्च कोटि के विद्वान् भारत के भिन्न–भिन्न नगरों से आ रहे हैं। उन विद्वानों के उपदेश सुनने के लिए देश के बाहर और भीतर से भी कुछ लोगों के आने की आशा की जा रही है।"

"महाराज! मन्त्रिमण्डल की यह सूचना ठीक है।" विष्णुकान्त का कहना था, "मेरी सूचना भी ऐसी ही है, परन्तु दोनों सूचनाओं के अनुसार आने वालों की संख्या में अन्तर है।"

"क्या अन्तर है?"

"बौद्ध सम्प्रदाय की संचालक महासमिति का केवल एक ही प्रतिनिधि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
नरोत्तम आ रहा है। वास्तव में वह, दो दिन हुए, पहुँच चुका है और शेष एक लक्ष के लगभग उपासक और श्रावक बाहर से आ रहे हैं। और महाराज! ये लोग यहाँ आकर क्या करने वाले हैं, इसकी भी एक अस्पष्ट–सी रूपरेखा मिली है।''

''क्या सूचना है इस सम्मेलन के उद्देश्य के विषय में?''

''ये लोग मार्तण्ड में एकत्रित होकर सबके सब एक विशाल शोभायात्रा में राजधानी की ओर प्रस्थान करेंगे। मार्ग में यहाँ के उपासक भी सम्मिलित होंगे और दो–ढाई लाख की भीड़ महाराज के प्रासाद को घेर लेगी और महाराज से राज्य का सिंहासन छोड़ संन्यास लेने की माँग करेगी।''

जलौक ने मुस्कराते हुए कहा, ''और पण्डित! तुम्हारा यह विचार है कि हम सिंहासन छोड़ गंगाद्वार को चल देंगे और वहाँ व्यास आश्रम में अपने अन्तिम दिन व्यतीत कर देंगे?''

विष्णुकान्त हँस पड़ा। उसने हँसते हुए कहा, ''महाराज! मैंने अभी अपने गुप्तचर आपके विचार जानने के लिए नियुक्त नहीं किए। इस कारण इस कार्यक्रम में आपके भाग को मैं नहीं जानता। हाँ, मन्त्रियों की मानसिक स्थिति का मुझे ज्ञान हो गया है।''

''वह क्या है?''

''मैंने एक दिन आपसे यह स्वीकृति प्राप्त की थी कि मैं राज्य के विद्वानों का एक संगठन तैयार करूँगा। वह संगठन बनाने का मैंने यत्न किया है। इस प्रयत्न में प्रायः सब मन्त्रियों से मैं निजी रूप में मिल चुका हूँ। दो के अतिरिक्त शेष सब आपको संन्यास लेने की सम्मति देने का विचार रखते हैं।''

''और इस मन्त्रिमण्डल के अतिरिक्त भी तुम्हें कोई मिला है?''

''हाँ, महाराज! मेरी योजना में सबसे बड़े सहायक आचार्य शंखपाणि सिद्ध हुए हैं और पिछले दो मास से वहाँ निरन्तर विचार–विमर्श हो रहा है। इस बुद्धिशील समुदाय में अपने राज्य के पचास से ऊपर के स्थानों के लोग सम्मिलित हो चुके हैं। ये लोग अपने–अपने स्थान पर आपके पक्ष में जनमत करने का यत्न कर रहे हैं।''

''और इस सब आयोजन का खर्च कहाँ से किया जा रहा है?''

''महाराज, भूरिश्रवा दे रहा है। इसके लिए सहायता स्वर्ण के रूप में मार्तण्ड मन्दिर में पहुँचती रहती है।''

''अर्थात् कश्मीर का बुद्धिशील जगत् भैरव समुदाय वालों के पक्ष में हो गया है?''

''नहीं, महाराज! आचार्यजी ने भूरिश्रवा को इस बात पर राजी कर लिया है कि भैरव–पूजा पद्धति में भैरवी–चक्र समष्टिगत न रहकर व्यष्टिगत हो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जाएँगे।''

''यह कैसे? चक्र व्यष्टिगत कैसे हो सकते हैं?''

''आचार्यजी ने इसकी एक योजना बताई है। ये चक्र अब मन्दिरों में नहीं लगा करेंगे। इनके आयोजन भी मन्दिर के पुजारी नहीं करेंगे। कोई भी भैरव–उपासक अपने घर में केवल अपने परिवार में अथवा अपने मित्रों में इसका आयोजन कर सकेगा।

''अर्थात् ये समाप्त हो जाएँगे। अपने घर पर इस स्तर और रूप में नहीं हो सकेंगे जिस प्रकार ये मन्दिरों में हो सकते हैं।

''आचार्यजी का कहना है कि इनको रोकने का यही एक उपाय है। बिना किसी की निजी स्वतन्त्रता का हनन किए इसी उपाय से इनको रोका जा सकेगा।''

''मन्त्रिमण्डल की सूचना में अन्तर है उनकी सूचनानुसार यहां बौद्ध महोत्सव होगा। वह पचास के लगभग बौद्ध गुरुजनों के मार्तण्ड में आ जाने पर एक–दो दिन के लिए होगा। उस उत्सव में वे पचास विद्वान् राज्य विद्वत् सम्मेलन के लिए प्रतिनिधि घोषित करेंगे और तब यह उत्सव समाप्त हो जाएगा।''

''महाराज! तब तो बहुत अच्छा होगा। परन्तु आपको तो अब भैरव उपासना में सम्मिलित नहीं होना चाहिए।''

''वैसे मुझे भैरवी–चक्रों में गए तो अब दो वर्ष से अधिक काल व्यतीत हो चुका है। अब परिवार में दो प्राणी सज्ञान हो गए हैं और उनको मैं भैरवी–चक्रों से दूर रखना चाहता हूँ। परिणाम यह हो रहा है कि दोनों अपनी माँ के प्रभाव में आते जाते हैं। वे अब राजप्रासाद में होने वाली बौद्ध उपासनाओं में रुचिपूर्वक सम्मिलित हो रहे हैं।''

''जी, इसी विचार से आपका स्थानापन्न दामोदर को समझा जा रहा है।''

''तब तो ठीक है। मुझे संन्यास लेने में सुख ही अनुभव होगा।''

''बात तो ठीक ही है। केवल दो बातें हैं। दामोदर अभी अल्पायु है और उसकी परामर्शदाता समिति में अधिकांश बौद्ध सम्प्रदाय के लोग होंगे, और कदाचित् वे भी कश्मीर से बाहर के।''

''तब तो इस विषय में मुझे चिन्ता करने का अवसर नहीं होगा।''

''हाँ, महाराज! यदि बौद्धों की यह योजना सफल हुई तो सत्य रूप में यह राज्य बौद्ध सम्प्रदाय के गुरुओं का होगा और यहाँ का राजा भी एक मिट्टी का माधो रह जाएगा !''

''यहाँ यदि वही कुछ हुआ जैसा कि आप कह रहे हैं तो यह मेरे विचार का विषय नहीं।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"ठीक है, महाराज! यह हम लोगों के विचार का विषय होगा। आचार्यजी ने तो अपनी तैयारी इसी पृष्ठभूमि के अनुसार करनी आरम्भ कर दी है।"

जलौक इससे चित्त में शान्ति अनुभव कर रहा था। वह अभी चालीस वर्ष की वयस में था। इस पर भी जीवन का भोग खुले हाथों करने से वह अपने में शिथिलता अनुभव करने लगा था।

उसी दिन वह महारानी कादम्बिनी से मिला तो उसने भी अपनी सूचना बता दी। कादम्बिनी ने कहा, "आज महाप्रभु नारायण उपासना के लिए राजप्रासाद में आए थे और कह रहे थे कि इस प्रतिपदा को मार्तण्ड में महोत्सव आरम्भ हो रहा है और मुझे उसमें सम्मिलित होने के लिए वहाँ जाना चाहिए।"

"महारानीजी क्या चाहती हैं?"

"मैंने एक सप्ताह-भर के लिए वहाँ जाने का उनको वचन दे दिया है।"

"ठीक है। इस विषय में कादम्बिनीजी स्वतन्त्र हैं। परन्तु यह बात सबके मन में स्पष्ट हो जानी चाहिए कि आप व्यक्तिगत रूप में ही उस महोत्सव में सम्मिलित हो रही हैं।"

"मैं तो अपने को एक सामान्य नागरिक के रूप में ही वहाँ रखूँगी, परन्तु जो लोग मुझे और मेरे पद को जानते हैं, वे मुझे उसी रूप में समझेंगे। इसमें मैं भला उनके समझने को कैसे रोक सकती हूँ?

"साथ ही महाप्रभु कह गए हैं कि दामोदर और दुर्गा को भी उस धार्मिक समारोह में सम्मिलित होने के लिए अपने साथ ले जाऊँ।"

जलौक को भदन्त नारायण के इस कथन में अब मरे हुए चूहे की गन्ध आने लगी थी। उसे विष्णुकान्त की सूचना पर विश्वास होने लगा था। उसने कहा, "दुर्गा तो जा सकती है। वह राजपरिवार का अंग होने पर भी राज्य का अंग नहीं है। परन्तु दामोदर यहाँ का भावी सम्राट है। इस कारण उसको राज्य से स्वीकृति लेनी होगी।"

"यह नियम कब से बना है?"

"नियम नहीं, वरंच प्रथा है। राज्य का युवराज राज्य में रुचिपूर्वक रहता है।"

"और राज्य के नरेश के लिए राज्य की अनुमति की आवश्यकता नहीं होती?"

"उसके लिए भी है। देखो, रानी! जब से मुझे पता चला है कि मन्त्रिमण्डल में बहुमत मेरे भैरव-उपासनाओं में सम्मिलित होने को पसन्द नहीं करता तो मैंने वहाँ जाना बन्द कर दिया है। मुझे भैरव मन्दिर में गए दो वर्ष से अधिक हो चुके हैं। भूरिश्रवा को भी मुझसे मिलने आए कई मास होने जा रहे है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो महाराज का विचार है कि दामोदर के इस महोत्सव में जाने को मन्त्रिमण्डल पसन्द नहीं करेगा?"

"यह मैं नहीं जानता। वहाँ जाने वाले अथवा उसे वहाँ ले जाने वाले को इस बात का पता कर लेना चाहिए।"

"कर लिया जाएगा।" कादम्बिनी देख रही थी कि राज्य में हवा की दिशा बदल रही है। जनमत बौद्धों के अनुकूल हो रहा है। इस कारण कादम्बिनी का विचार था कि दामोदर महामन्त्री को मिलकर यह सूचना दे आएगा कि वह अपनी माँ के साथ मार्तण्ड उत्सव पर जा रहा है।

परन्तु बाधा दामोदर की ओर से उपस्थित हुई। पहले तो उसने जाने से इन्कार कर दिया। बाद में जब महारानी ने आग्रहपूर्वक कहा तो दामोदर महाराज से सम्मति करने पहुँच गया।

जलौक का मत था कि उसे अपने गुरु से सम्मति करनी चाहिए। उसका वर्तमान जीवन उसके गुरु विष्णुकान्त की सम्मति से चलना चाहिए। विष्णुकान्त और दामोदर में इस विषय पर बातचीत हुई तो विष्णुकान्त ने उसे वहाँ जाने से मना कर दिया। विष्णुकान्त दामोदर को अभी सब नीति की बातें बताना नहीं चाहता था। फिर भी उसने इतना संकेत कर कह दिया, "भावी राजा को निष्पक्ष और न्माययुक्त राजा प्रकट करने के लिए किसी भी सम्प्रदाय के साथ विशेष अनुराग प्रकट नहीं करना चाहिए।"

दामोदर ने माँ की युक्ति गुरुजी के सामने रख दी। उसने कहा, "और देश के राजा के लिए कौन–सा व्यवहार अपनाना चाहिए?"

"चाहिए तो यह ही, परन्तु वह कभी कुछ मनमानी भी कर सकता है जब उसे विश्वास हो कि देश की सेना उसके प्रति अगाध श्रद्धा का भाव रखती है।"

दामोदर समझ गया कि अभी उसका सम्पर्क सेना से नहीं है। इस कारण उसने माँ को कह दिया कि वह उत्सव में नहीं जा रहा।

दुर्गा तो उत्सुकता से महोत्सव में सम्मिलित होने की प्रतीक्षा कर रही थी।

: 4 :

आचार्य शंखपाणि के निमंत्रण पर विष्णुकान्त मार्तण्ड मन्दिर में महोत्सव के दो दिन पूर्व ही पहुँच गया था। वह अपने गुप्तचरों के सूत्र को भी अपने साथ मार्तण्ड मन्दिर में ले गया था।

पहले ही दिन आचार्य ने अपनी सूचनाओं से विष्णुकान्त को अवगत कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दिया। उसने बताया, "भारत देश के केन्द्रीय संघ का संचालक महाप्रभु नरोत्तम पन्द्रह दिन से यहाँ पहुँचा हुआ है और यहाँ के महाप्रभु से हुए विचार–विमर्श से जो कार्यक्रम बन रहा है उसके विषय में यह अनुमान लगाया जा रहा है कि वैशाख की प्रतिपदा को सार्वजनिक रूप में यह घोषणा की जाएगी कि सब उपस्थित गण राजधानी को एक शोभा यात्रा के रूप में चलें और वैशाख शुक्ल दूसरी को यहाँ से प्रस्थान कर पाँचवीं को श्रीनगर में पहुँच राजप्रासाद को घेर लिया जाए और महाराज को राजसिंहासन से उतार दामोदर को सिंहासन दे दिया जाए। महारानी उसकी संरक्षिका नियुक्त की जाए और उसको सम्मति देने के लिए एक नवीन मन्त्रिमण्डल की घोषणा की जाए। उस मन्त्रिमण्डल में ग्यारह व्यक्ति होंगे जिनमें तीन पुराने मन्त्रिमण्डल के और सात बौद्ध मतावलम्बी हों। ग्यारहवीं महारानी जी हों।

"यहाँ शान्ति स्थापित होते ही दामोदर को राजनीति की शिक्षा के लिए पाटलिपुत्र भेज दिया जाएगा।"

विष्णुकान्त ने गम्भीर भाव में कुछ काल तक मौन रहकर बताया, "आचार्यजी! कितने लोग यात्रा में सम्मिलित होंगे?"

"अनुमान है कि लगभग दो लाख की भीड़ यहाँ एकत्रित हो जाएगी। एक लाख से ऊपर तो यहाँ एकत्रित हो चुके हैं। अभी दो दिन में और भी आएँगे। इस पर भी वे सब यात्रा में सम्मिलित नहीं होंगे, परन्तु यह आशा की जा रही है कि मार्ग में अन्य लोग सम्मिलित हो जाएँगे।"

इस पर विष्णुकान्त ने अपनी सूचना बता दी। उसने कहा, "इस कार्यक्रम का आपका यह अनुमान ठीक ही प्रतीत होता है। परन्तु दामोदर यहाँ नहीं आ रहा है। इस कारण उसका राज्यारोहण सन्दिग्ध है। ऐसा प्रतीत होता है कि नारायण तो महारानी के पक्ष में है, परन्तु कुछ लोग इस राज्य की गद्दी का अधिकारी पाटलिपुत्र से किसी को बनाने के पक्ष में हैं।"

"किसको?"

"कुणाल के पुत्र सम्प्रति को! वह शैव है। उसका विवाह किसी बौद्ध उपासिका से करके उसे यहाँ का राज्य सौंपा जाने का प्रस्ताव है।"

शंखपाणि इस समाचार से चिन्तित भाव में मुख देखता रह गया।

"क्या आप इसे ठीक समझते हैं?" विष्णुकान्त ने पूछ लिया।

"नहीं! मैं ठीक नहीं समझता! सम्प्रति के विषय में कुछ नहीं कह सकता कि वह कैसे संकल्प का होगा। परन्तु सुना है कि वह अपने पिता का श्रद्धालु पुत्र है और उसका पिता कट्टर बौद्ध है।"

आचार्य ने बात बदलकर पूछ लिया, "तुमसे जलौक ने इस सम्मेलन में महारानीजी के आने के विषय में सम्मति की होगी?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"महाराज जलौक अब अपने और महारानी के बीच हो रहे संघर्ष में मुझसे सम्मति नहीं करते। जब से राजप्रासाद में रात के भोजन के समय एक दिन मैंने यह कहा था कि महारानीजी का महाराज से भिन्न सम्प्रदाय में अपने को घोषित करना दोनों में वैमनस्य उत्पन्न कर देगा तब से सम्प्रदायों के विषय में अपने परस्पर विवाद में मुझसे सम्मति नहीं लेते।"

"मैं समझता हूँ।" शंखपाणि का कहना था "कि महारानी अपना व्यवहार नारायण के संकेत पर बना रही है और नारायण निकट भविष्य में राजा के स्थान पर महारानी को स्थापित करने की योजना पर कार्य कर रहा है।

"दामोदर के विषय में नारायण अनिश्चित मत है। किन्तु महारानी दामोदर को अपने साथ रखना चाहती हैं। कदाचित् उनका विचार यह है कि महाराज जब प्रजा में प्रतिष्ठाहीन हो जाएँगे तो वह दामोदर को उनका स्थानापन्न बना सकेंगी।

"परन्तु विष्णुकान्त! सबसे विकट समस्या यह है कि यदि महारानी ने अपने को बौद्ध संघ के अधीन किया तो वह कश्मीर का बौद्ध संघ नहीं होगा, वरंच भारतवर्ष का बौद्ध संघ होगा और तब वह उस संघ के हाथ में एक खिलौना–मात्र हो जाएँगी।"

परस्पर विचार–विनिमय होने पर दोनों कुछ भी करने में अपने को असमर्थ पाते थे। राज्य में एक तीसरा पक्ष भी था। वह था मन्त्रिमण्डल और उसका मुख्य व्यक्ति विप्रबन्धु था। विप्रबन्धु शैव मत तथा भैरव सम्प्रदाय का घोर विरोधी था, परन्तु वह बौद्ध मत को भी पसन्द नहीं करता था।

विप्रबन्धु के बौद्ध संघ का विरोधी होने का कारण यह था कि वह कश्मीर बौद्ध संघ को भारत के बौद्ध संघ के अधीन समझता था। कश्मीर में बौद्ध संघ भारत से आ रहे धन के आश्रय ही था। इस कारण वह असमंजस में पड़ा था और अपना मार्ग स्पष्ट नहीं देख रहा था।

अभी बौद्ध सम्मेलन आरम्भ होने में एक दिन शेष था कि महारानी कादम्बिनी, दुर्गा और दामोदर मार्तण्ड में आ पहुँचे। राजपरिवार के आने की सूचना विष्णुकान्त को अपने गुप्तचरों से मिली तो वह मुख देखता रह गया। वह अभी विचार ही कर रहा था कि महारानी से सम्पर्क बनाए अथवा नहीं कि सुनन्द विष्णुकान्त से मिलने चला आया।

विष्णुकान्त मार्तण्ड मन्दिर में अपने आगार में बैठा कादम्बिनी के परिवार सहित बौद्ध सम्मेलन में आने के समाचार पर विचार ही कर रहा था कि आगार के द्वार पर खड़े सुनन्द ने आवाज दे दी, "गुरुजी! क्या मैं भीतर आ सकता हूँ?"

विष्णुकान्त का ध्यान भंग हुआ तो उसने सुनन्द को देख कह दिया,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"ओह! सुनन्द! भीतर आ जाओ।"

जब सुनन्द भीतर आ गुरुजी के चरण–स्पर्श कर सामने बैठा तो विष्णुकान्त ने पूछा, "तुम कब आए हो?"

"गुरुजी! मैं आज प्रातःकाल अपने अश्व पर सवार हो राजधानी से चला था और अभी–अभी यहाँ के बौद्ध विहार में पहुँचा हूँ। वहाँ मुझे भी रहने को एक पृथक् आगार मिल गया है।"

"परन्तु अपनी इच्छा से आए हो अथवा किसी के कहने पर?"

"महारानीजी, दामोदर और दुर्गा तो कल मध्याह्नोत्तर ही वहाँ से चल पड़े थे। कल रात्रि के समय यहाँ से एक सेवक गया था और मुझे यह कह आया था कि महारानीजी मुझे यहाँ आज मध्याह्न से पूर्व पहुँचने को कह रही हैं। वह सेवक मेरे बुलाए जाने का कारण नहीं बता सका।

"मैंने उसी समय पण्डितायिन माताजी से सम्मति की थी और उन्होंने मुझे यहाँ आने की सम्मति दी है।

"मैं उसी समय महाराज से सम्मति करने भी गया था। उनका कहना था कि मैं अपने विषय में आपसे सम्मति करूँ। मुझे ज्ञात था कि आपने दामोदर को यहाँ न आने की सम्मति दी थी, परन्तु माताजी का कहना था कि मैं दामोदर नहीं। दामोदर तो राजा बनने वाला है, मैं नहीं। इस कारण मेरे विषय में पण्डितजी की वह सम्मति नहीं हो सकती जो दामोदर के विषय में थी।

"गुरुजी! इस पर भी मैं विहार में पहुँचते ही सबसे पहले आपसे ही सम्मति करने आया हूँ।"

विष्णुकान्त समझता था कि उसकी पत्नी ने ठीक ही समझा है कि दामोदर और सुनन्द की स्थिति में अन्तर है। वह विस्मय कर रहा था कि सुनन्द को किस कारण यहाँ बुलाया गया है?

कुछ विचार कर विष्णुकान्त ने कहा, "तुमने यहाँ आकर ठीक ही किया है, परन्तु महारानीजी का तुम्हें यहाँ बुलाने का क्या अभिप्राय हो सकता है, कह नहीं सकता। यदि तुमसे किसी विशेष कार्य करने को कहा जाए और अवसर मिल सके तो आना। तब बता सकूँगा कि तुम्हें क्या व्यवहार करना चाहिए।"

"गुरुवर! एक बात में तो विशेषता अनुभव हुई है। वह यह कि विहार में तो सहस्रों की संख्या में लोग आकर ठहरे हुए हैं और सबका आतिथ्य विहार की ओर से हो रहा है। परन्तु मेरा आतिथ्य उनसे पृथक् और जहाँ तक मैं समझा हूँ, उनसे श्रेष्ठ किया जा रहा है।

"मुझे पृथक् अकेले में रहने को स्थान मिला है। एक सेवक मेरी सेवा में है।"

"महारानीजी से मिले हो?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"नहीं! अभी नहीं। वह इस समय विशेष उपासना में सम्मिलित हो रही हैं। विशेष का अभिप्राय मुझे बताया गया है—इस समय कुछ विशेष व्यक्ति ही उपासना में सम्मिलित हो सकते हैं। सेवक ने मुझे बताया है कि मैं वहाँ नहीं जा सकता। अतः मैं नगर देखने का बहाना कर और सेवक को आगार की देख-रेख करने को कह आपसे मिलने चला आया हूँ।"

"तो ठीक है। तुम अब जाओ और जब किसी प्रकार की मुझसे सम्मति करनी होगी तो आ जाना।"

यद्यपि विष्णुकान्त सुनन्द के बुलाए जाने का कारण जानने के लिए उत्सुक था, परन्तु अपनी उत्सुकता उसने सुनन्द पर प्रकट नहीं की। उसने अपने गुप्तचरों को आज्ञा दे दी थी कि महारानी के साथ सुनन्द के विषय में भी देख-रेख करते रहें।

विष्णुकान्त का दुर्गा के साथ यद्यपि किसी प्रकार सम्पर्क नहीं था, परन्तु वह विस्मय कर रहा था कि जलौक का पूर्ण परिवार बौद्ध प्रभाव के अधीन हो रहा है।

इससे एक बात वह अनुभव कर रहा था कि बौद्ध विचारधारा में कुछ विशेष आकर्षण तो है। इस कारण जो भी इसके सम्पर्क में आता है, वह प्रभावित हो जाता है। बौद्धों द्वारा सबसे अधिक विरोध भैरव सम्प्रदाय का हो रहा था। शैव मत का भी विरोध तो था, परन्तु भैरव मत से कम। वैदिक मत की तो बौद्ध ऐसे अवहेलना कर रहे थे जैसे वह है ही नहीं। इसमें कारण वैदिक मत का किसी प्रकार का संगठन न होना ही था।

दिन-भर विष्णुकान्त को सूचनाएँ आती रहीं कि भदन्त नारायण और महारानीजी में गोष्ठियाँ हो रही हैं। यद्यपि सुनन्द किसी स्थान पर बन्दी नहीं था, परन्तु उसकी भिन्न-भिन्न लोगों से भेंट और वार्तालाप इतनी जल्दी-जल्दी हो रहे थे कि सुनन्द को विहार से बाहर आने का अवसर ही नहीं मिल रहा था।

अगले दिन सम्मेलन होना था। लाखों की भीड़ में राज्य से सहस्रों की संख्या में बौद्ध उपासक और दो सहस्र से ऊपर कश्मीरी बौद्ध श्रावक सम्मेलन में भाग लेने के लिए आए हुए थे। कश्मीर से बाहर के श्रावक और उपासक तो और भी अधिक थे।

विहार के बाहर एक खुले मैदान में खुले सम्मेलन के लिए शामियाने लगे थे और उनमें मंच इत्यादि तैयार किया जा रहा था। परन्तु विहार में विशेष उपासकों और श्रावकों की बैठकें निरन्तर हो रही थीं; जबकि नगर में और नगर के बाहर लोग डेरे डाले पड़े हुए थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 5 :

सुनन्द विष्णुकान्त से मिलकर विहार में लौटा तो उसकी सेवा में नियुक्त सेवक ने उसे सूचना दी, "महारानीजी ने आपको बुलाया है। मैं आपको बाहर नगर में ढूँढ़ने गया था, परन्तु आप मिले नहीं। मैं अभी विचार ही कर रहा था कि महारानीजी को क्या कहूँ कि आप आ गए हैं। अब आप शीघ्र वहाँ चले जाइए।"

सुनन्द को बताया गया कि महारानी और दुर्गा कहाँ ठहरी हुई हैं। अतः सेवक के कहने पर वह वहाँ चला गया। महारानीजी के आगार में पहुँचने पर उसने देखा कि महारानी तथा दुर्गा के अतिरिक्त वहाँ पर नारायण और एक अन्य वृद्ध बौद्ध श्रावक भी उपस्थित हैं।

सुनन्द के वहाँ पहुँचते ही महारानी ने पूछ लिया, "कहाँ थे तुम? हम सब तुम्हारी यहाँ प्रतीक्षा कर रहे हैं।"

"महारानीजी! आप विशेष उपासना में सम्मिलित हो रही थीं। यह जानकर मैं नगर देखने विहार से बाहर चला गया था।"

"बैठो!" महारानी ने नारायण के समीप बैठे वृद्ध श्रावक की ओर संकेत करते हुए कहा, "यह महाप्रभु भदन्त नरोत्तम इस सम्मेलन में भाग लेने के लिए पाटलिपुत्र से विशेष रूप से आए हैं। आप पाटलिपुत्र के लक्ष्मी विहार के अध्यक्ष हैं और महाराज देवानांप्रिय अशोक वर्धन के विशेष परामर्शदाता हैं।"

सुनन्द पुनः उठकर नरोत्तम के चरण–स्पर्श करने लगा तो नरोत्तम ने उसके सिर पर हाथ रखकर आशीर्वाद दिया। सुनन्द जब अपने स्थान पर पुनः बैठ गया तो महारानी ने बताया, "तुम्हें यहाँ एक विशेष कार्य के लिए बुलाया गया है और वह विशेष कार्य यही महाप्रभु तुम्हें बताएँगे। तुम्हें अब इनके साथ इनके आगार में चला जाना चाहिए।"

सुनन्द उत्सुकता से महाप्रभु नरोत्तम का मुख देखने लगा तो नरोत्तम उठ खड़ा हुआ और बोला, "बालक! आओ! हम पृथक् में बैठकर वार्तालाप करेंगे।"

सुनन्द उठकर नरोत्तम के साथ आगार से निकल गया। जब ये दोनों चले गए तो नारायण ने दुर्गा से पूछ लिया, "राजकुमारी! इसने तुम्हारी ओर देखा तक नहीं?"

"भगवन्! आप सबके सम्मुख बिना बुलाए किसी से बात करना वह अशिष्टता मानता है। वैसे मैं जानती हूँ कि वह मुझसे प्रेम करता है। परन्तु. .." राजकुमारी कहती–कहती रुक गई।

"हाँ! परन्तु क्या?" नारायण ने पूछ लिया।

"इसने मुझसे विवाह–सम्बन्धी चर्चा कभी नहीं की।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम इससे कभी एकान्त में भी मिली हो अथवा नहीं?"

राजकुमारी ने रक्तवर्ण मुख से कह दिया, "नहीं! यद्यपि मैं अनेक बार यत्न कर चुकी हूँ कि इनसे अपने आगार में मिलूँ। मैंने इन्हें कई बार वहाँ बुलाया है, परन्तु यह जब भी वहाँ आए हैं, दामोदर को अपने साथ लेकर ही आए हैं।"

"तुमने कभी इनसे अपने मन की इच्छा का वर्णन किया है अथवा नहीं?"

"मैं कैसे कर सकती थी? यों तो आज से पाँच वर्ष पूर्व जब यह मुझे भैरवपुरी से रथ में साथ लेकर राजधानी आए थे, तब से ही मैं इनसे विवाह करने की इच्छा करने लगी थी। तब तो मैं विवाह के विषय में इतना–मात्र जानती थी कि लड़का–लड़की विवाह कर इकट्ठे रहते हैं। बाद में मुझे अध्यापिका बहनजी ने बताया था कि भैरव–उपासना में जो व्यवहार उपासक उपासिकाओं से करते रहे थे वैसा विवाह के बाद पति–पत्नी करते हैं। परन्तु तब मैं उसका भी वास्तविक प्रयोजन नहीं समझती थी। फिर भी मैं सुनन्दजी से विवाह की इच्छा करने लगी थी।"

"यह इच्छा क्यों होती थी?"

"मुझे इनका रूप–रंग, इनके वार्तालाप करने का ढंग और मुस्कराने पर प्रिय दर्शन दीखना बहुत पसन्द था। मैं यह इच्छा करती थी कि इनसे बैठकर बातें किया करूँ।

"पहले तो माताजी हमें मिलने नहीं देती थीं, परन्तु बाद में जब यह पण्डित विष्णुकान्तजी से पढ़ने लगे तो पण्डितायिनजी के सम्मुख मुझे मिलने का अवसर मिलने लगा। इस वर्ष, मैंने इनसे कई बार पृथक् में मिलकर अपने मन के भाव प्रकट करने का यत्न किया था, परन्तु जब–जब भी मैंने इनसे अपने आगार में आने को कहा तो यह भैया दामोदर को साथ लेकर ही आए हैं। इस कारण मैं इनसे कुछ कह नहीं सकी।

"मैं इनकी आँखों में अपने प्रति मोह देखती हूँ। यही मैंने माताजी को एक दिन बताया था। माताजी का विचार था कि महाराज से कहकर वह इस विषय में चर्चा करेंगी। अब आज इस विषय पर चर्चा आपके सम्मुख हो गई है।"

"ठीक है! महाप्रभु नरोत्तम सुनन्द से इस विषय में बातचीत करने गए हैं। वह बताएँगे कि तुम्हारा विवाह यहाँ सम्पन्न हो सकता है अथवा नहीं।"

"परन्तु भगवन्! इस विषय में महाराज से भी तो पूछना होगा।"

महारानी ने कहा, "वैसे वह इस विवाह को पसन्द करते हैं। इस विषय में मेरी उनसे बातचीत हो चुकी है। यद्यपि यह निश्चय नहीं हुआ कि विवाह इस सम्मेलन के अवसर पर होगा।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"महाप्रभु !" दुर्गा ने कहा, "यदि महाराज को इस अवसर पर बुला लिया जाए तो क्या यह अच्छा नहीं होगा?"

"वह इस सम्मेलन में नहीं आएँगे। वह बौद्ध मतानुयायी नहीं हैं। हमारी यह योजना है कि विवाह यहाँ पर हो जाए और महारानीजी तुम दोनों को आशीर्वाद दे देंगी। तदनन्तर कल प्रातःकाल महाप्रभु नरोत्तम उपासना के उपरान्त विवाह की घोषणा कर देंगे। उसके उपरान्त तुम दोनों को कुछ सेवकों के साथ राजधानी भेज दिया जाएगा और वहाँ राजसी विधि–विधान पूरे कर लिए जाएँगे।"

दुर्गा के मन में अब विवाह की अति उग्र लालसा हो गई थी। पिछले पाँच वर्ष से मन में सुलग रही आग भड़क उठी थी।

भैरवी–चक्र में देखी हुई आमोद–प्रमोद और कल्लोल की मुद्राएँ सजीव हो उसके मन में चंचलता उत्पन्न करने लगी थीं। उनके चिंतन में वह मौन माँ का मुख देखती रह गई। इसका अर्थ दोनों बड़ों ने यह समझा कि महाराज की अनुपस्थिति में भी विवाह सम्पन्न हो सकेगा।

इतने में नरोत्तम का भेजा हुआ एक श्रावक वहाँ आया और नारायण से बोला, "प्रभु! महाप्रभु ने राजकुमारी को सुनन्द से भेंट के लिए बुलाया है।"

महारानी ने दुर्गा को कहा, "जाओ और हमारा निश्चित किया कार्यक्रम उसे बता आओ।"

दुर्गा चुपचाप उठी और श्रावक के साथ नरोत्तमजी के आगार में जा पहुँची।

वहाँ सुनन्द और महाप्रभु नरोत्तम बैठे वार्तालाप कर रहे थे। दुर्गा आई तो उसे बिठा नरोत्तम ने उठते हुए कहा, "राजकुमारी! मैंने सुनन्द जी को पूर्ण परिस्थिति से अवगत कर दिया है। वह कहते हैं कि आपसे बातचीत कर अंतिम स्वीकृति देंगे। अतः मैंने आपको बुला लिया है। आप आधी घड़ी में निश्चय कर महारानी के द्वारा सूचित करेंगी तो शेष कार्यक्रम पर विचार कर लिया जाएगा।"

इतना कह नरोत्तम उठकर कमरे से निकल आया। बात सुनन्द ने ही आरम्भ की। उसने कहा, "राजकुमारी दुर्गा! मेरे लिए यह नवीन समाचार है कि आप मुझसे विवाह करना चाहतीं हैं। यह विचार किसने उत्पन्न किया है?"

दुर्गा ने आँखें नीचे किए और लाल मुख से कहा, "विचार तो मेरा ही है और बहुत पुराना है।"

"कब का है?"

"जब मैं भैरवी–चक्र से निकल स्नान कर अपने शरीर पर से चित्र धोकर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तथा वस्त्र पहन स्नानागार से निकली थी और वहाँ आप पुजारिन के साथ खड़े थे, तब ही मेरे मन में विचार आया था कि आप कोई राजकुमार हैं और भगवान् भैरव ने आपको मुझे वरने के लिए भेजा है।

"परन्तु वहाँ न तो अवसर था कि मैं इस विषय पर बात करती और न ही मुझे ज्ञात था कि अपने मन के भाव कैसे बताऊँ? पुजारिन नीलाजी ने कह दिया कि आप मेरे साथ राजधानी तक जाएँगे और मुझे राजप्रासाद में पहुँचाकर लौटेंगे।

"इसके उपरान्त तो रथ पर अनेकानेक विषयों पर आपसे वार्त्तालाप हुआ था। यद्यपि आप मुझसे कम ज्ञान रखते थे, परन्तु जो कुछ भी आप जानते थे, उसे आप ऐसे ढंग से वर्णन करते थे कि मैं आपके कथन पर मुग्ध होती रही थी।

"तब से ही यह भावना कि आप परमात्मा की ओर से मुझे वरने के लिए आए हैं, मैं पालती रही हूँ।"

"परन्तु आपने तो इस ओर कभी संकेत भी नहीं किया?"

"मुझे बात करने में लज्जा अनुभव होती थी और फिर आप कभी अकेले तो मुझसे मिले ही नहीं। सदा गुरुआयिन, गुरुजी, मेरी कोई सखी अथवा भैया दामोदर हमारे साथ होते थे। इससे इस विषय पर बात ही कैसे हो सकती थी?"

"परन्तु मैंने आपके प्रति कभी अपनी ऐसी भावना नहीं रखी।"

"तो कैसी भावना रखते थे? आपकी आँखें तो सदा मेरे मुख पर लालसा–भरी दृष्टि से देखती प्रतीत होती थीं।"

"लालसा?" सुनन्द ने विस्मय में पूछा और फिर कुछ विचारकर स्वयं ही कहा, "नहीं राजकुमारी! लालसा नहीं, वरंच प्रशंसा की भावना सदा मेरे मन में रही है। वही दृष्टि में रही होगी। मैं सदैव विचार किया करता था कि कितनी सुन्दर है बहन दुर्गा। बहन को एक सर्वश्रेष्ठ सुन्दरी के रूप में देख मेरी आखों में बहन के प्रति वात्सल्य भाव उभरा करता होगा।"

"परन्तु मैं आपकी बहन तो हूँ नहीं।"

"हाँ! जन्म से तो नहीं, परन्तु मनोभावों से तो आप हैं।"

"मैं चाहती हूँ कि आप मेरे प्रति अपने मनोभावों को बदल लें। मैं आपसे विवाह करने की उत्त्कट इच्छा करती हूँ।"

"मैं यत्न कर सकता हूँ। परन्तु इसमें तो समय लगेगा और यह नरोत्तम तो कह रहा है कि विवाह का आज ही मुहूर्त्त है। यह कैसे हो सकता है?"

"महाराज, आपके पिता और मेरा आजकल पालन करने वाले तो यहाँ हैं नहीं। उनसे भी तो स्वीकृति लेनी है। इसके अतिरिक्त मेरी माताजी हैं, नीला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुजारिन, और मेरे बचपन के रक्षक पुजारी भूरिश्रवाजी हैं। उनको कम–से–कम सूचना हो तो उन्हें आशीर्वाद देने आना ही चाहिए और हमें उनसे आशीर्वाद प्राप्त करना चाहिए।

"यह सब आज नहीं हो सकता। सबसे बड़ी बात यह है कि बहन की भावना से पत्नी की भावना के परिवर्तन में समय लगेगा।"

दुर्गा को एक बात का सन्तोष था कि उसको सुनन्द अति सुन्दर मानता है। इस कारण वह समझती थी कि विवाह सम्भव है। केवल ये बौद्ध गुरुजन जो जल्दी मचा रहे हैं इससे विघ्न पड़ सकता है। आज सगाई तो हो सकती है और विवाह पीछे हो सकेगा।

इस समय दुर्गा ने ताली बजाई तो नरोत्तमजी का सेवक एक श्रावक भीतर आ गया। दुर्गा ने उसे कहा, "महाप्रभुजी को बुला लो।"

नरोत्तम आया तो बात सुनन्द ने की। उसने कहा, "भगवन्! मैंने अपने मन की बात राजकुमारीजी को बता दी है। यह कहती हैं कि मैं अपनी बहन की भावना को पत्नी में बदल लूँ। मैं विचार करता हूँ कि इस दिशा में यत्न किया जा सकता है। परन्तु मैंने इनको बताया है कि यह एकाएक तो हो नहीं सकता।"

नरोत्तम के कुछ कहने से पहले ही दुर्गा ने कहा, "महाप्रभु! मेरा निवेदन है कि कल उपासना में हमारी सगाई की घोषणा कर दी जाए, परन्तु विवाह कुछ काल उपरान्त हो। मैं यत्न करूँगी कि इनके मन की भावना को बदल दूँ।"

"कैसे यत्न करोगी?"

"इनसे अपने मन में उठ रहे उद्‌गारों का वर्णन करके वैसे ही उद्‌गार इनके मन में निर्माण करके ऐसा कर सकूँगी।"

"परन्तु संघ का यह निर्णय है कि विवाह आज रात सम्पन्न हो जाए।"

"यह क्यों?"

"संघ की सब बातें न तो मैं जानता हूँ और न ही बता सकता हूँ।"

"तो बिना जाने और समझे आप संघ के आदेश मानते हैं?"

"निर्णय होते समय मैं अपनी सम्मति दे देता हूँ, परन्तु जब निर्णय हो जाता है तो मेरे अथवा किसी भी बौद्ध उपासक के लिए उस निर्णय को मानना होता है। तब हम उसमें युक्ति–प्रतियुक्ति नहीं करते।"

"परन्तु मैं तो बौद्ध नहीं हूँ।"

"आपकी माताजी बौद्ध हैं। वह इस विवाह को उचित मानती भी हैं। केवल आज अथवा फिर कभी के विषय में मतभेद था। जब संघ का निर्णय उनको बताया गया है तो उनके लिए इसे स्वीकार करने के अतिरिक्त कोई चारा ही

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नहीं रहा।''

''परन्तु मेरे कहने पर वह ऐसा मान जाएँगी जैसा मैं कह रही हूँ?''

''कहकर देख लो। मैं इतना जानता हूँ कि संघ का एक उपासक संघ के निर्णय का उल्लंघन नहीं कर सकता।''

''मैं अभी बौद्ध उपासिका नहीं हूँ। मैंने संघ के निर्णयों को आँखें मूँद स्वीकार करने का वचन नहीं दिया। इस कारण मैं चाहूँगी कि आज विवाह न हो।''

''परन्तु राजकुमारी! आपको माताजी का कहा मानना चाहिए।''

''भगवन्! पिताजी तो यहाँ हैं नहीं और उनका क्या आदेश है, मैं जानती नहीं।''

''तुम अपनी माताजी से अब बात कर लो।''

इतना कह नरोत्तम दुर्गा और सुनन्द को लेकर उसी आगार में आ गया था जिसमें महारानी कादम्बिनी भदन्त नारायण से वार्तालाप कर रही थीं। नरोत्तम ने दुर्गा और सुनन्द को महारानी के सम्मुख उपस्थित कर कह दिया, ''दोनों विवाह के लिए मान गए हैं। क़ेवल इतना चाहते हैं कि आज सगाई हो जाए और विवाह राजधानी में चलकर हो। संघ ने आज मध्याह्नपूर्व की विशेष उपासना में विवाह का निश्चय किया है। इस कारण आप इनको समझा दीजिए। हम अन्य प्रबन्ध करने जा रहे हैं।''

इतना कह नरोत्तम और भदन्त नारायण दोनों उठकर आगार से बाहर निकल गए और महारानी, दुर्गा तथा सुनन्द वहीं रह गए।

: 6 :

सुनन्द के मार्तण्ड मन्दिर से गुरुजी से मिलकर चले आने पर विष्णुकान्त विचार कर रहा था कि सुनन्द को किसलिए विशेष रूप से यहाँ बुलाया गया है? साथ ही वह यह विचार कर रहा था कि दामोदर को विदित था कि मैं यहाँ पर हूँ तो वह मुझे मिलने क्यों नहीं आया? जब से उसने दामोदर को यह बताया था कि यदि उसे भविष्य में कश्मीर राज्य का शासक बनना है तो उसे बौद्ध सम्प्रदाय से विशेष सम्बन्ध नहीं रखना चाहिए, उसके उपरान्त दामोदर उससे मिला नहीं था। उस समय तो वह यहाँ न आने का ही विचार रखता था। इस कारण विष्णुकान्त का यह विचार था कि यदि वह यहाँ आया तो उसे उसके पास आकर बताना चाहिए था कि उसने गुरुजी की सम्मति को क्यों नहीं माना। यही प्रथा थी।

इस कारण दमोदर का न आना और सुनन्द का आ जाना गम्भीर और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विचारणीय विषय था।

विष्णुकान्त उसी समय उठकर आचार्य शंखपाणिजी से मिलने चला गया। शंखपाणि का यह मत था कि बौद्ध संघ किसी प्रकार का षड्यन्त्र कर रहा है। उन्हें अपने गुप्तचरों को सतर्क कर देना चाहिए। आचार्यजी का यह भी मत था कि महाराज से सम्पर्क बनाकर रखना चाहिए। उनको भी राजधानी में सतर्क रहना चाहिए।

सबसे आवश्यक बात यह है कि राजप्रासाद में जितने भी बौद्ध उपासक हैं उनसे महाराज को सावधान रहना चाहिए।

विष्णुकान्त ने उसी समय एक पत्र में मार्तण्ड की परिस्थिति से अवगत करते हुए महाराज को लिख दिया कि उनको किसी प्रकार के भी षड्यन्त्र से सावधान रहना चाहिए। अभी किसी विशेष योजना का ज्ञान नहीं है, परन्तु जब शान्तिप्रिय लोग राजनीति में भाग लेने लगते हैं तो उनका व्यवहार लोमड़ी का–सा हो जाता है। श्रृगाल से लोमड़ी अधिक भयानक जीव है। तथाकथित ज्ञानवान बौद्ध अपने को श्रृगाल मानते हैं, परन्तु राजनीति इनको लोमड़ी बना रही है।

यह पत्र तो उसी समय राजधानी भेज दिया गया। साथ ही प्रति आधे–आधे घण्टे पर समाचार आने लगे कि विहार में महारानी इत्यादि क्या कर रही हैं।

एक समाचार आया कि पाटलिपुत्र से आए वृद्ध महाप्रभु नरोत्तम और महारानीजी में बार–बार विचार–विनिमय हो रहा है। नरोत्तम और नारायण एक ओर, महारानी और दुर्गा दूसरी ओर, दुर्गा तथा सुनन्द तीसरी ओर वार्त्तालाप कर रहे हैं। इन समस्त स्थानों पर वार्त्तालाप के परिणामों का परस्पर विनिमय भी हो रहा है।

विष्णुकान्त ने यह जानने की भी इच्छा की कि दामोदर कहाँ है और वह मुझसे मिलने क्यों नहीं आया? गुप्तचरों का कहना था कि उसे महारानी के साथ आते तो देखा गया था, परन्तु पिछली रात के उपरान्त उसके दर्शन नहीं हुए। उसकी सेवा करने वाले सेवकों का विचार है कि वह राजधानी लौट गया है।

इस प्रकार सूचना पर सूचना आती रही। एकाएक रात के दूसरे प्रहर के आरम्भ में सूचना आई कि दुर्गा और सुनन्द का विवाह महारानी और दस–बारह बौद्ध अधिकारियों के सम्मुख हो गया है और इस विवाह के उपरान्त सब भोजन कर रहे हैं।

इसके उपरान्त यह समाचार आया कि सुनन्द राजकुमारी दुर्गा को लेकर अपने आगार में चला गया है और आगार भीतर से बन्द हो गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णुकान्त इस समाचार को पाते ही राजधानी को अपना दूसरा पत्र लिखने बैठ गया। पहले पत्र के उपरान्त मार्तण्डनगर में तथा विहार में हो रही घटनाओं को विस्तार सहित लिखकर पत्र समाप्त करने जा रहा था, कि आगार के द्वार पर खड़े सेवक ने आवाज दे दी, ''पण्डितजी! सुनन्द मिलने आया है।''

पूर्व इसके कि विष्णुकान्त उत्तर दे, सुनन्द भीतर आ गुरुजी के चरणस्पर्श करने लगा।

''सुनन्द! अपने–आप विवाह कर अब आशीर्वाद माँग रहे हो?'' विष्णुकान्त ने पूछ लिया।

''तो गुरुवर, आपको पता चल गया है?''

''हाँ! तुम्हारा दुर्गा से विवाह हो गया है और तुमने उसे अपने कमरे में ले जाकर सुहागरात मनाने के लिए भीतर से द्वार बन्द कर लिया है।''

सुनन्द गुरुजी की सूचना पर विस्मय में मुख देखता रह गया। फिर एकाएक बोला, ''गुरुवर! मैंने दुर्गा को कह दिया है कि मैं इस विवाह को विवाह नहीं मानता। जब तक वेदमन्त्रों से विवाह नहीं होगा, मैं उससे सहवास पाप मानता हूँ। इस कारण उसे अपने कमरे में बन्द कर वहाँ से भाग आया हूँ।''

''और उसे बता आए हो कि मुझसे मिलने जा रहे हो?''

''हाँ, भगवन्! अन्यथा वह तो मेरा सहवास प्राप्त करने के लिए उत्कट इच्छा रखती थी। मैंने उसे कहा है कि आपका आशीर्वाद प्राप्त कर मैं परम्परागत विवाह का प्रबन्ध कर आधे घण्टे में लौट आऊँगा।''

''क्या प्रबन्ध करने आए हो?''

''गुरुवर! वास्तविक बात यह है कि मैं अभी तक दुर्गा को बहन ही मानता रहा हूँ। मैंने कहा था कि मुझे बहन को पत्नी बनाने के लिए मन को तैयार करने में कुछ समय चाहिए। इस पर वह रो–रोकर आग्रह करने लगी। मैं उसकी इस मानसिक अवस्था में किंकर्तव्यविमूढ़ की भाँति मुख देखता रह गया। इस पर वहाँ एकत्रित प्रभुओं के सम्मुख बौद्ध ढंग से हमारा विवाह हो गया। तदनन्तर भोजन हुआ और हमें सुहागरात मनाने के लिए एक कमरे में भेज दिया गया। मैं यह वचन दे आया हूँ कि यहाँ आप इस मन्दिर में उपस्थित हैं और आपसे आशीर्वाद प्राप्त किए बिना मैं उसे अपनी पत्नी नहीं मान सकता। अतः उससे आधे घण्टे की छुट्टी लेकर चुपचाप यहाँ आ गया हूँ।''

इस स्थिति पर क्या हो सकता है? इसे विचार करने में विष्णुकान्त को एक क्षण ही लगा। उसने कहा, ''देखो सुनन्द, अभी एक पत्र दुर्गा को लिखो। अन्यथा वह आत्महत्या भी कर सकती है। एक निराश व्यक्ति क्या कर लेगा,

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कहा नहीं जा सकता।''

''परन्तु गुरुवर! मुझे तो वह अभी भी बहन दुर्गा ही प्रतीत होती है।''

''तुम मूर्ख हो! सुनन्द! राजनीति में इस प्रकार की मन की भावनाओं से काम नहीं चल सकता। देखो, दुर्गा तुम्हारी पत्नी हो गई है। तुमने उसका पाणिग्रहण करने से इन्कार नहीं किया। अब तुम इस उत्तरदायित्व से भाग नहीं सकते।

''तदपि मैं चाहता हूँ कि तुम्हारा विवाह–संस्कार वैदिक रीति से कर दिया जाए। यह तो राजधानी चलकर ही हो सकेगा।

''तुम्हें अभी राजधानी के लिए चल देना चाहिए। परन्तु इससे पूर्व तुम दुर्गा को एक पत्र लिखो। उसे पत्नी योग्य वचनों से सम्बोधित करो और लिखो कि तुम दोनों के विवाह के लिए मेरा आशीर्वाद प्राप्त हो गया है, परन्तु महाराज के आशीर्वाद के बिना विवाह पूर्ण नहीं हो सकता। इस कारण तुम महाराज का आशीर्वाद प्राप्त करने के लिए राजधानी जा रहे हो। आशा व्यक्त करो कि कल मध्याह्न तक तुम वहाँ उसे ले चलने का प्रबन्ध कर ले जाओगे। यह भी लिख दो कि तुम्हारी सुहागरात राजप्रासाद में ही होगी।

''सुनन्द! जल्दी करो। तुम आधे घण्टे की छुट्टी लेकर आए हो और उतने समय में तुमको यहाँ से दो कोस निकल जाना चाहिए।''

सुनन्द बौद्ध गुरुओं के हठ के कारण कि विवाह उसी रात ही सम्पन्न हो जाना चाहिए, वह उन पर सन्देह करने लगा था कि इसमें कुछ विशेष प्रयोजन होगा। अब पण्डितजी के पत्र लिखने और वहाँ से भाग जाने की जल्दी मचाने में उसका सन्देह पुष्ट हुआ था। इस कारण वह बिना एक भी शब्द बोले लेखनी ले पत्र लिखने बैठ गया। विष्णुकान्त ने अपना पत्र राजधानी भेजने के लिए एक रथ तैयार करवाया था। अब उसने स्वयं ही सुनन्द के साथ राजधानी चलने का विचार बना लिया। जब तक सुनन्द ने पत्र लिखा तब तक वह आचार्य शंखपाणि को अपने राजधानी जाने का विचार बता आया।

पत्र एक गुप्तचर के हाथ दुर्गा को भेज वह सुनन्द को साथ ले राजधानी को चल पड़ा।

पत्र राजकुमारी की सेविका द्वारा दुर्गा के पास पहुँच गया। दुर्गा उत्सुकता से अपने शयनागार में पति की प्रतीक्षा कर रही थी। द्वार खटखटा सेविका ने पत्र राजकुमारी को दे दिया।

सुनन्द आगार के मुख्यद्वार से बाहर नहीं गया था। शयनागार के पीछे के द्वार से चोरी–चोरी गया था। उधर से ही उसके लौटने की बात थी। इस कारण दुर्गा ने यह पत्र अपनी माताजी का समझा था। जब वह द्वार बन्द कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पत्र पढ़ चुकी तो एक क्षण तक तो उसे निराशा हुई, परन्तु उसे इस बात से प्रसन्नता भी हुई कि गुरुजी का आशीर्वाद प्राप्त हो चुका है। इससे वह समझी थी कि अब महाराज का आशीर्वाद भी प्राप्त हो जाएगा। वह जानती थी कि पण्डितजी की बात महाराज मान जाते हैं। इस पत्र में एक बात सुनन्द ने यह भी लिखी थी कि उसकी सुहागरात कल राजप्रासाद में ही होगी। इससे वह निश्चिन्त हो सो गई।

बहुत प्रातःकाल महारानी दुर्गा से मिलने आई। वह अभी सो रही थी। द्वार खटखटाया गया तो दुर्गा जागी और उसने द्वार खोला। महारानी वहाँ सुनन्द को न देख भौचक्की हो मुख देखती रह गई।

उसने पूछा, "सुनन्द कहाँ है?"

दुर्गा ने उसका पत्र माँ के हाथ में देते हुए कहा, "वह गुरुजी से विवाह पर आशीर्वाद लेने गए थे।"

कादम्बिनी पहले तो परेशानी अनुभव करती प्रतीत हुई, परन्तु बाद में वह यह समझ गई कि सुनन्द का यह पत्र इस बात का प्रमाण है कि विवाह हो गया है। उसने दुर्गा से कहा, "शीघ्र उपासना के लिए तैयार हो जाओ।" यह कहकर वह भदन्त नारायण को इस नई घटना के विषय में बताने के लिए चली गई।

भदन्त तो पत्र को पढ़कर आग–बबूला हो गया। वह बोला, "यह ठीक नहीं हुआ।"

"महाप्रभु! क्यों?"

"यह हमारी योजना के अतिरिक्त हो रहा है।"

"संसार में ऐसा ही होता है। कार्यकुशल लोग संसार से झगड़ा किए बिना ही अपनी योजनाएँ चलाते हैं और उसमें सफलता प्राप्त करते हैं।"

भदन्त नारायण इस युक्ति से गम्भीर विचार में लीन सुनन्द का पत्र हाथ में लिए महाप्रभु नरोत्तम के पास चला गया। कुछ देर तक कादम्बिनी नारायण के लौटने की प्रतीक्षा करती रही, परन्तु जब वह नहीं लौटा तो वह पहले अपने आगार में गई, परन्तु इस नई परिस्थिति पर विचार करने पुनः दुर्गा के आगार में जा पहुँची। दुर्गा स्नानादि के लिए स्नानागार में गई हुई थी। महारानी उसके बाहर आने की प्रतीक्षा करने लगी।

दुर्गा अभी स्नानागार से बाहर नहीं आई थी कि उसे आगार का द्वार बन्द होने और बाहर से कुण्डा चढ़ाने का शब्द सुनाई दिया। महारानी लपककर द्वार के समीप गई और द्वार खोलने में असफल हो समझ गई कि उन दोनों को अथवा कम–से–कम दुर्गा को बन्दी बना लिया गया है।

वह समझ नहीं सकी कि ऐसा क्यों किया गया है। परन्तु दो दिन से वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रायः सब बातें बिना समझे ही कर रही थी। पहले दिन ही दामोदर को नारायण अपने साथ ले गया था और फिर वह नहीं लौटा। जब उसने रात के समय नारायण से दामोदर के विषय में पूछा तो नारायण ने बता दिया था कि वह राजधानी को लौटा दिया गया है। क्यों लौटा दिया गया है, यह भी वह समझी नहीं थी। साथ ही उससे सुनन्द को बुलाने के लिए पत्र लिखवाया गया था। उसे क्यों बुलाया जा रहा था, वह समझी नहीं थी। अगले दिन विशेष उपासना के समय उसे बताया गया था कि सुनन्द के साथ दुर्गा का विवाह हो जाना चाहिए। महारानी इस विवाह को पसन्द तो करती थी, परन्तु यह इस महोत्सव से पहले ही क्यों? वह समझी नहीं थी।

दुर्गा का पति सुनन्द, पत्नी का भोग किए बिना भाग गया था। वह क्यों भाग गया, यह भी वह नहीं समझी थी।

अब दुर्गा और कदाचित् वह भी बन्दी बना लिए गए थे। क्यों? वह यह भी नहीं समझी।

इस प्रकार कुछ न समझती हुई वह दुर्गा के स्नानागार से निकलने की प्रतीक्षा करने लगी थी।

दुर्गा वस्त्र पहन अल्पाहार के लिए तैयार हो बाहर निकली थी, परन्तु वहाँ माँ को गम्भीर विचार में मग्न देख मुख देखती रह गई।

कादम्बिनी ने बताया, ''हम दोनों इस आगार में बन्दी बना लिए गए हैं। आगार का द्वार बाहर से बन्द कर दिया गया है।''

''परन्तु स्नानागार में एक द्वार पीछे का भी है। हम उससे बाहर जा सकती हैं।''

इस विचार के आते दोनों ही उठीं और स्नानागार के पिछले द्वार पर जा खड़ी हुईं। सत्य ही वह बाहर से बन्द नहीं था। यह निश्चय कर कि वे उधर से निकल सकती हैं, प्रश्न–भरी दृष्टि से एक–दूसरे का मुख देखती रह गईं।

राजकुमारी का मस्तिष्क तीव्र गति से विचार करने लगा था। महारानी का मस्तिष्क तो बौद्ध उपासनाओं में नित्य 'संघं शरणं गच्छामि' का पाठ सुनते–सुनते कुंठित हो गया था। दुर्गा के मन पर संघ का प्रभाव कुछ अधिक नहीं था। कारण यह कि उस प्रभाव को दुर्गा की अध्यापिका चन्द्रावती की शिक्षा विलीन करती रहती थी।

दुर्गा ने कहा, ''माँ! हमें अभी कुछ देर प्रतीक्षा करनी चाहिए, परन्तु कोई प्रबन्ध ऐसा करना चाहिए कि इधर का द्वार भी बन्द न हो सके।''

''यह कैसे हो सकेगा?'' कादम्बिनी का प्रश्न था।

दुर्गा ने उपाय विचार कर लिया था। उसने गुसलखाने में रखी एक लोहे की सलाख, जो कदाचित् नाली साफ करने के लिए वहाँ रखी थी, उठाई और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

दरवाजे के बीच में फंसा दी जिससे दरवाजा आसानी से बन्द न हो सके। इस पर भी दोनों ने निश्चय कर लिया कि कदाचित् बाहर का द्वार भूल से बन्द किया गया है अथवा केवल दुर्गा के लिए बन्द किया गया है और कादम्बिनी भूल से बन्द हो गई है, अतः भूल का ज्ञान होते ही कोई द्वार खोलने चला आए। उस अवस्था में वे पिछले द्वार का प्रयोग करना नहीं चाहती थीं। तब वे मुख्यद्वार से ही बाहर जाने का विचार रखती थीं। किन्तु वे सतर्क थीं कि पीछे का द्वार बन्द न हो सके। वे दोनों स्नानागार में ही बैठी थीं जिससे उधर का द्वार बन्द करने कोई आए तो वे उसको रोक सकें।

परन्तु न तो कोई पीछे का द्वार बन्द करने आया और न ही मुख्यद्वार खोलने। अल्पाहार का समय व्यतीत हो गया तो माँ–बेटी भूख अनुभव करने लगीं। अल्पाहार का समय व्यतीत हुए भी एक प्रहर हो चुका था। अब वे समझ गईं कि उनको बाहर जाने का प्रयत्न करना चाहिए। "परन्तु कहाँ?" महारानी का प्रश्न था।

दुर्गा का अविलम्ब उत्तर था, "हमें यत्न करना चाहिए कि मार्तण्ड मन्दिर में दामोदर के गुरुजी से मिल लें। यदि सम्भव हो तो वहीं आश्रय प्राप्त करें।"

कादम्बिनी की समझ में बात आई तो उन्होंने पिछले द्वार में फँसी सलाख निकाली और द्वार से निकल एक दालान में पहुँच गईं। वह तो निर्जन स्थान था परन्तु बाहर मैदान में बहुत बड़ी भीड़ का शोर था। माँ ने कहा, "सब लोग महोत्सव से पूर्व की उपासना के लिए एकत्रित हो रहे हैं। अभी मन्त्र–जाप होगा।"

"हमें उस ओर जाना चाहिए जिधर कम शोर है। हमें चुपचाप किसी प्रकार की घबराहट प्रकट किए बिना विहार से बाहर निकल जाना चाहिए।"

दोनों उधर चल पड़ीं जिधर कम हो–हल्ला था। वह वहाँ पर जा पहुँचीं जहाँ लोग भूमि पर मन्त्रोच्चारण करने के लिए एकत्रित हो रहे थे। वे दालान से निकल एकत्रित हो रहे लोगों में से होते हुए विहार से बाहर का मार्ग ढूँढ़ने लगीं। इसमें भी दुर्गा की सूझ–बूझ काम आई। जब लोग पंक्ति बाँध रहे थे तो ये मंच से दूर चलती गईं। इस प्रकार ये भीड़ के किनारे पर जा पहुँचीं। इस समय मंच पर से मन्त्रोच्चारण होने लगा था।

बुद्धं शरणं गच्छामि। धम्मं शरणं गच्छामि। संघं शरणं गच्छामि।।

भूमि पर बैठे लोग भी मन्त्रोच्चार के साथ बोलने लगे थे।

ऐसा प्रतीत होता था कि लोग कादम्बिनी और दुर्गा को वहाँ पहचानते नहीं थे। जो उनको एक ओर को जाते देखते थे तो यह समझ कि वे स्त्रियों में बैठना चाहती हैं, संकेत से उनको स्त्रियों के लिए बैठने के विशेष स्थान की ओर संकेत कर देते थे। परन्तु वे तो वहाँ से बाहर निकल रही थीं। विहार

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की सीमा दीवार के समीप पहुँचीं तो वे उसके साथ–साथ चलने लगीं। एक स्थान पर बाहर जाने का मार्ग था, परन्तु वहाँ चरखड़ी लगी थी जिससे पशु इत्यादि भीतर न आ सकें। दुर्गा उसमें से बाहर निकली तो कादम्बिनी उसके पीछे बाहर हो गई। सीमा–दीवार के बाहर भी लोग यत्र–तत्र स्थान पाते ही बैठ मन्त्रोच्चार करने लगे थे।

अब दुर्गा ने चारों ओर दृष्टि दौड़ाई तो उसे मन्दिर का कलश दिखाई दे गया। वे उधर को ही घूम गईं। दुर्गा आगे–आगे थी और महारानी पीछे–पीछे।

वे मन्दिर के द्वार पर पहुँचीं तो वहाँ राज्य के सैनिक सुरक्षा के विचार से खड़े थे। वे इन दोनों को आते देख विस्मय में देखते ही रह गए। ऐसा प्रतीत होता था कि उनमें से एक महारानी को पहचान गया था।

पूर्व इसके कि सैनिक अपना संशय निवारण करने के लिए कुछ पूछता, दुर्गा ने पूछ लिया, "आचार्यजी भीतर हैं?"

विवश सैनिक को उत्तर देना पड़ा, "हाँ, हैं।"

"हम उनसे मिलने आई हैं।"

सैनिक ने ध्यानपूर्वक दोनों को देखा और फिर हाथ जोड़ नमस्कार कर कह दिया, "आइए। मैं ले चलता हूँ।"

दुर्गा समझ गई कि सैनिक पहचान गया है। वे गम्भीर मुख बनाए सैनिक के पीछे चल पड़ीं।

चबूतरे पर चढ़कर सैनिक उनको आचार्यजी के कार्यालय के बाहर ले गया। उनको वहाँ खड़ा कर बोला, "महारानीजी, आप ठहरिए। मैं आपकी सूचना भीतर देने जा रहा हूँ।"

दो–तीन क्षण ही लगे कि शंखपाणि भागा हुआ बाहर आ आशीर्वाद दे उन दोनों को भीतर ले गया।

दोनों को एक आगार में पृथक् ले जाकर बिठा आचार्यजी पूछने लगे, "आपके विषय में सूचना थी कि आप बन्दी बना लिए गए हैं। आप कैसे आ सकी हैं?"

कादम्बिनी विस्मय में देखती हुई पूछने लगी, "तो आप हमारे विषय में जानते थे?"

"महारानीजी, जब से आप यहाँ आई हैं, राज्य के बीस के लगभग गुप्तचर आपकी गतिविधियों की टोह ले रहे हैं। एक प्रहर हुआ कि यह समाचार मिला था कि आप एक ही आगार में बन्दी थीं और आपके द्वार को बाहर से ताला लगा दिया गया है।

"हम यह विचार कर रहे थे कि आपको छुड़ाने का अवसर ढूँढ़ा जाए।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आचार्यवर, हम आ गई हैं। हमारा विचार है कि हमें आपके मन्दिर के सैनिक के अतिरिक्त अन्य किसी ने पहचाना नहीं। परन्तु हमारा बन्दीगृह से लापता हो जाने का पता लगते ही हमारी खोज आरम्भ हो जाएगी। जिस प्रयोजन से हमें बन्दी बनाया गया था, उसमें विघ्न उपस्थित होता देख हमारी खोज अवश्य आरम्भ होगी।"

शंखपाणि ने एक क्षण के लिए विचार किया और कहा, "हमारी सूचना के अनुसार आज तीसरे प्रहर यहाँ से संघ–यात्रा आरम्भ होगी और यदि आप चाहें तो उससे पूर्व ही आपको यहाँ से राजधानी भेजने का प्रबन्ध किया जा सकता है। जब तक यहाँ से ये लोग उपासना तथा भोजन से अवकाश पाकर चलेंगे तब तक आप यहाँ से रथ में राजधानी के आधे मार्ग पर पहुँच जाएँगी।"

"परन्तु क्या यह हो सकेगा?" महारानी ने पूछा।

"यत्न किया जा सकता है। एक मार्ग है जो भीड़ से खाली है। कहें तो करूँ प्रबन्ध?"

दुर्गा बोल उठी, "आचार्यजी! हमें तो भूख लगी है।"

"ओह! ठीक है। यह प्रबन्ध भी हो जाएगा।"

जब तक महारानी और दुर्गा को कुछ मिष्ठान्न और दूध मिला तब तक रथ तैयार करवा मन्दिर के पिछवाड़े में ला खड़ा कर दिया गया। महारानी और दुर्गा को रथ में राजधानी के लिए विदा कर दिया गया। कुछ चक्कर तो काटकर जाना पड़ा किन्तु इस प्रकार उन्हें उत्सव पर आई भीड़ की दृष्टि से बचाया जा सका।

: 7 :

उसी दिन प्रातःकाल ही विष्णुकान्त सुनन्द को लिए श्रीनगर में राजप्रासाद के द्वार पर जा पहुँचा। द्वार पर ही भूरिश्रवा मिल गया। वह भीतर से बाहर जा रहा था। भूरिश्रवा ने पण्डितजी को देखा तो पूछ लिया, "कहाँ थे आप?"

"क्यों? पुजारीजी किसलिए पूछ रहे हैं?"

"महाराज आपकी अनुपस्थिति पर चिन्तित प्रतीत हो रहे थे।"

"तो आप उनसे मिलकर आ रहे हैं?"

"जी! चलिए। अब आप आ गए हैं तो बात किसी परिणाम पर पहुँच सकेगी।"

विष्णुकान्त ने सुनन्द को अपने घर भेज दिया और स्वयं भूरिश्रवा के साथ भीतर अपने महाराज से मिलने आने की सूचना भेज प्रतीक्षा करने लगा। भूरिश्रवा द्वार पर खड़ा विष्णुकान्त को बताने लगा, "मुझे सूचना मिली है कि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मार्तण्ड से बौद्ध भेड़ें राजधानी को घेरे में लेने के लिए आ रही हैं।

"वैसे तो भेड़ों से भयभीत होने की कोई बात नहीं। चिन्ता है यहाँ पर की भेड़ों की। ये लोग बहुत बड़ी भीड़ को देख महाराज को उसके हवाले न कर दें। भीड़ तो सब जगह भीड़ ही होती है और भेड़ें क्या काली और क्या श्वेत, वे भेड़ें ही होती हैं। एक के पीछे एक लगी रहती हैं।"

विष्णुकान्त मौन हो भूरिश्रवा की विवेचना सुन रहा था। उसने पूछा, "क्या महाराज की सेना यहाँ नहीं रही?"

"पण्डितजी! अपने ही देश की भीड़ की हत्या अपने ही देश की सेना नहीं करेगी। वह अपने ही सगे–सम्बन्धियों का रक्त बहाने में संकोच करेगी। सेना देश की रक्षा के लिए है। वह देशवासियों पर अपना हाथ नहीं उठाएगी।

"महाराज को मेरे इस कहने पर विश्वास नहीं आ रहा था। इस विषय में वह आपसे परामर्श करना चाहते थे और आप यहाँ से बीस कोस के अन्तर पर थे।"

विष्णुकान्त अभी और सुनना चाहता था, परन्तु महाराज का सेवक उनको लेने के लिए आ पहुँचा। बिना एक भी शब्द और कहे पण्डित और पुजारी दोनों भीतर चले गए। भूरिश्रवा एक घण्टा पहले महाराज से मिलने आया था और एक घण्टा–भर महाराज से बातचीत कर लगभग निराश–सा जा रहा था। अब विष्णुकान्त के पहुँच जाने पर वह पुनः उसके साथ महाराज से मिलने चल पड़ा।

महाराज विष्णुकान्त को इस समय आया देख अति प्रसन्न और सन्तुष्ट था। उसने उसे भीतर बुलाया तो पुजारी भी भीतर चला आया।

"तो आप अभी तक यहीं हैं?" महाराज ने भूरिश्रवा से पूछ लिया।

"हाँ महाराज! मैं यह समझा हूँ कि पण्डितजी के आ जाने पर किसी परिणाम पर पहुँचा जा सकता है।"

"ठीक है। पण्डितजी को अपनी योजना बताई है?"

"जी नहीं, अभी तो पण्डितजी ने नही बताया कि वह क्या समाचार लेकर आए हैं।"

बातों का सूत्र विष्णुकान्त ने अपने हाथ में लेते हुए कहा, "सुनन्द मेरे साथ लौट आया है। उसका विवाह बौद्ध रीति–रिवाज से दुर्गा के साथ कर दिया गया है और सुनन्द इसे विवाह न मान विवाह–संस्कार के तुरन्त उपरान्त वहाँ से भाग आया है। मैंने उसके साथ ही आना उचित समझा है।"

"परन्तु दुर्गा का विवाह मेरी सम्मति के बिना किसने कराया है?"

"बौद्ध महाप्रभुओं ने अपना मन्त्र–जाप करते हुए विवाह कराया है। महारानीजी का आशीर्वाद था। परन्तु सुनन्द का कहना था कि महारानी जी

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी प्रकार से विवश की जा रही थी। दुर्गा विवाह की इच्छा तो करती प्रतीत होती थी, परन्तु वह यहाँ आकर आपसे कन्यादान की अभिलाषा करती थी। इसी कारण विवाह के तुरन्त उपरान्त उसने सुनन्द को भाग आने में सहायता की है।''

''और यह पुजारीजी कह रहे हैं कि वहाँ की एकत्रित भीड़ मुझे बन्दी बनाने के लिए यहाँ आ रही है?''

''वह भीड़ यहाँ आ रही है। आज मध्याह्नोत्तर वहाँ से चलेगी और तीन दिन में यहाँ पहुँच सकेगी।''

''मैं सेना से भीड़ को तितर–बितर करने की आशा करता हूँ। परन्तु पुजारीजी कहते हैं कि सेना इस विषय में मेरा कहा नहीं मानेगी। इससे हम अपना मार्ग पा नहीं रहे थे।

''अब आप बताएँ कि पुजारी का भय सत्य है अथवा नहीं और यदि सत्य है तो क्या वह भीड़ इस कार्य में सफल हो सकेगी?''

''देखिए महाराज! सेना को परीक्षा में डालने की आवश्यकता नहीं। उसकी परीक्षा तो भयरहित नहीं। किन्तु सेना को अपनी ओर बनाए रखना आवश्यक है। मैं समझता हूँ कि भीड़ के यहाँ पहुँचने से पहले आप सेना को नगर और राजप्रासाद की रक्षा के लिए बुला लें। सेनाध्यक्ष को यहाँ बुलाइए और मैं उसे यह बताना चाहूँगा कि नगर में कुछ प्रतिष्ठित व्यक्ति हैं जो आपको बन्दी बनाकर अपना राज्य स्थापित करना चाहते हैं। और मैं यह सम्मति दूँगा कि भीड़ के यहाँ पहुँचने से पूर्व ही उन वरिष्ठ व्यक्तियों को बन्दीगृह में डलवा देना चाहिए।''

''वे वरिष्ठ व्यक्ति कौन हैं?''

''महाराज! यदि आपको मेरी बात अरुचिकर प्रतीत हो तो क्षमा करना। मैं समझता हूँ कि इस भीड़ के एकत्रित होने के लिए आपका मन्त्रिमण्डल उत्तरदायी है। कश्मीर के महाराज और उनके द्वारा कश्मीर को स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए मन्त्रिमण्डल को बन्दी बनाना आवश्यक समझता हूँ।''

''परन्तु बिना आरोप के?''

''आरोप तो है और इस आरोप को उपस्थित करेंगे आचार्य शंखपाणि जी। परन्तु यह तो तब होगा जब अपराधी बन्दी बनाकर न्यायाधीश के सम्मुख उपस्थित किए जा सकेंगे।''

''यह बहुत गम्भीर कार्य है।''

''यह महाराज ही कर सकते हैं। मैं शंखपाणिजी की ओर से आपके पास यह याचिका करता हूँ कि वर्तमान मन्त्रिमण्डल के ग्यारह सदस्यों में चार के अतिरिक्त शेष सब इन बौद्धों के भारी संख्या में विदेश से आने में उत्तरदायी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हैं और वे बौद्ध संघ द्वारा कश्मीर राज्य और राजा पर छापा डालना चाहते है।''

''परन्तु जब बौद्ध भीड़ एकत्रित हो यहाँ पहुँचेगी तो मन्त्रिमण्डल का बन्दीगृह में होना मेरा पक्ष दुर्बल कर देगा। सेना ही मेरे विरुद्ध हो जाएगी।''

''महाराज! उस झगडे में न तो आपको और न ही सेना को हस्तक्षेप करना चाहिए। सम्प्रदायों के झगड़ों में राज्य तथा राजा को नहीं पड़ना चाहिए। ये सम्प्रदाय परस्पर स्वयं समझ लेंगे।

''कश्मीर की जनसंख्या तीन करोड़ से ऊपर है। उसमें देशी व विदेशी मिलाकर लाख–दो लाख बौद्ध बहुत ही अल्पसंख्या में हैं। यह अल्पसंख्या अपने संगठन के बल पर अपार बहुमत को निस्तेज करने का यत्न कर रही है।

''बहुमत निश्चिन्त था; क्योंकि उन्होंने अपने अधिकारों की रक्षा के लिए राज्य को नियुक्त किया हुआ है और राज्य ही उनकी रक्षा नहीं कर रहा। अतः वह बहुमत साम्प्रदायिक स्तर पर अब अपनी और अपनी मान्यताओं की रक्षा के लिए स्वयं प्रबन्ध करेगा।''

''तो गृहयुद्ध होगा?''

''जब गृह का पुरखा अपना कर्तव्यपालन न करे और गृह के उच्छृंखल सदस्य को उच्छृंखलता करने दे तो गृहयुद्ध तो होता ही है। इसमें कौन दोषी है और कौन निर्दोष, इसका निर्णय बाद में न्यायाधीश करेंगे। परन्तु न्यायाधीश तो कर्म के पीछे ही हस्तक्षेप कर सकता है।''

''तो आप क्या करने को कहते हैं?''

''महाराज! सेना को नगर और राजप्रासाद की रक्षा के लिए नियुक्त कर दीजिए। सेनाध्यक्ष को यहाँ बुलाकर मन्त्रिमण्डल ने जान–बूझकर विदेशियों को देश में घुस आने देने और उनके सम्प्रदाय को यहाँ चलाने की छूट देने में जो राजद्रोह किया है, उसके कारण मन्त्रियों को बन्दी बना न्यायाधीश के सम्मुख उपस्थित करने की आज्ञा दे दीजिए।

''शेष आप मुझ पर और पुजारीजी पर छोड़िए।''

''तो फिर शेष क्या रह जाएगा?''

''एक तो भीड़ को राजधानी तक पहुँचने से पूर्व ही विखण्डित कर घरों को वापस भेजने का काम, यह पुजारीजी करेंगे। और दूसरा न्यायाधीश के सम्मुख मन्त्रिमण्डल को दोषी ठहराना है। यह मैं और आचार्यजी सम्पन्न करेंगे।''

जलौक अभी भी अनिश्चित मन था। विष्णुकान्त ने यह कह दिया, ''आप नगर और राजप्रासाद की रक्षा के लिए सेना तो बुला ही सकते हैं। इसमें तो

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कुछ भी अनहोनी नहीं है।"

"हाँ! यहाँ तक तो निरापद कार्य है।"

"आप एक घण्टे में मन्त्रिमण्डल की बैठक बुलाकर वहाँ से आई इस सूचना पर विचार करिए कि लाख–दो लाख की भीड़ राजधानी पर चढ़ी आ रही है। इसका क्या परिणाम हो सकता है?

"यदि मन्त्रिमण्डल राज्य को विदेशियों से संचालित इस भीड़ से नगर की रक्षा का प्रबन्ध करे तब तो ठीक है और यदि यह नहीं कर सकता तो फिर इसके अतिरिक्त अन्य कोई उपाय ही नहीं हो सकता कि मन्त्रिमण्डल को भंग कर दिया जाए। मन्त्रिमण्डल को भंग करने का सुगम उपाय उसे बन्दी बनाना ही है।"

जलौक इतना मान गया कि राजप्रासाद की रक्षार्थ सेना बुला ली जाए और मन्त्रिमण्डल की बैठक एक घण्टे में बुला ली जाए। साथ ही महाराज ने विष्णुकान्त को मन्त्रिमण्डल को उत्सव की सूचना देने के लिए भी मन्त्रिमण्डल की बैठक में बुला लिया।

उचित आज्ञाएँ लिखकर सेवकों के हाथ भेज विष्णुकान्त अपने घर स्नानादि से निवृत्त होने के लिए चल पड़ा।

जाते हुए मार्ग में उसने भूरिश्रवा से पूछा, "त्रिशूलधारी शैव कितने एकत्रित हो सकते हैं?"

"दो दिन में दस सहस्र।"

"लड़ने–मरने के लिए तैयार?"

"वह तो हर–हर महादेव का घोष कर देगा।"

"तो करिए! राजधानी से दस कोस से दूर उनको नियुक्त कर दीजिए। यदि धन की आवश्यकता हो तो महाराज से दिलवा सकता हूँ।"

भूरिश्रवा ने मुस्कराते हुए कहा, "मेरे पास इतना स्वर्ण तैयार रखा है कि यदि चाहूँ तो भारत–विजय के लिए बीस लक्ष सैनिक एक वर्ष तक लड़ा सकता हूँ।"

विष्णुकान्त यह जानता हुआ भी कि भूरिश्रवा सोना बनाना जानता है, स्वर्ण राशि की सीमा सुन विस्मय में पुजारीजी का मुख देखने लगा। भूरिश्रवा मुस्करा रहा था।

विष्णुकान्त घर पहुँचा तो सुनन्द स्नान और अल्पाहार कर सो गया था। पण्डितजी की पत्नी पद्मा उत्सुकता से पण्डितजी के घर आने की प्रतीक्षा कर रही थी। घर के प्रांगण में ही कुएँ से जल निकाल पति के स्नान के लिए अँगौछा आदि तैयार किए हुए बैठी थी।

पण्डितजी पत्नी को इस प्रकार उसके लिए जल इत्यादि तैयार कर

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
उसकी प्रतीक्षा करते देख अति प्रसन्न हुए और कहा, "भाग्यवान्! बहुत–बहुत धन्यवाद है। अन्यथा मेरे पास तो अल्पाहार के लिए भी अवकाश नहीं था। मुझे तुरन्त महाराज की सेवा में उपस्थित होने की आज्ञा है।"

"मैं यही आशा कर रही थी। कल रात से यहाँ बेचैनी फैल रही है। सेविका ने नगर से आकर वहाँ की अवस्था बताई है।"

पण्डितजी लोटा ले शौचादि में प्रवृत्त हो गए। आधी घड़ी में स्नानादि से छुट्टी पा वह अल्पाहार के लिए भोजनालय में जा पहुँचे। वहाँ पण्डितजी का लड़का नित्यानन्द अल्पाहार कर रहा था। उसने एक सूचना दे दी। उसने कहा, "पिताजी! पता है कि दामोदरजी कहाँ हैं?"

"कहाँ हैं?"

"कर्मीर के घर में।"

"कैसे जानते हो?"

"कल रात मैंने उसे महामन्त्रीजी के घर की खिड़की में से झाँकते हुए देखा था। मैं मन्त्रीजी के घर की खिड़की की ओर जाना चाहता था और उससे पूछना चाहता था कि वह तो मार्तण्ड को गया था, फिर वहाँ क्या कर रहा है? परन्तु मेरे खिड़की के समीप पहुँचने से पूर्व किसी ने उसे पकड़कर खिड़की से पीछे कर लिया और खिड़की बन्द कर दी थी।

"मैंने माताजी को जब बताया तो उन्होंने कहा था कि मुझे भ्रम हो गया था। परन्तु अभी सुनन्द ने बताया कि दामोदर मार्तण्ड में नहीं था और महारानीजी उसके लिए परेशान प्रतीत होती थीं।"

विष्णुकान्त के मन में भी दामोदर के विषय में विस्मय हो रहा था। अब उसका समाधान हो गया था कि क्यों वह उससे मिलने नहीं आया।

इस पर भी वह नित्यानन्द के सम्मुख मौन रहा। अल्पाहार के समाप्त होते ही वह वस्त्र पहन राजप्रासाद में जा पहुँचा। जाते ही उसे यह देखकर सन्तोष हुआ कि राजप्रासाद के बाहर दो सौ से ऊपर सैनिक उसके रक्षार्थ नियुक्त थे। भीतर आने–जाने वालों पर देख–रेख हो रही थी। विष्णुकान्त का नाम लिखकर भीतर भेजा गया और वहाँ से स्वीकृति आने पर उसे भीतर जाने दिया गया। भीतर भी सैनिक खड़े पहरा दे रहे थे।

विष्णुकान्त भीतर गया तो महाराज और विप्रबन्धु परस्पर वार्तालाप कर रहे थे। इसी कारण विष्णुकान्त ने द्वार पर से ही प्रतिहार को भीतर भेज अपने आने की सूचना दे दी।

विष्णुकान्त को भीतर जाने की स्वीकृति मिली तो विप्रबन्धु उठ खड़ा हुआ। विष्णुकान्त ने हाथ जोड़ प्रणाम किया और पूछ लिया, "तो आपका कार्य समाप्त हो गया है अथवा मैंने इसमें विघ्न उपस्थित कर दिया है?"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

उत्तर महाराज ने दिया, ''यह कह रहे हैं कि मन्त्रिमण्डल की बैठक आज नहीं हो रही है।''

''क्यों?''

''इस कारण कि आज इनके लड़के कर्मीर का यज्ञोपवीत संस्कार है। आज वैशाख प्रतिपदा है। इस कारण इनको अवकाश नहीं।''

''परन्तु महाराज! मुझे महामन्त्री से एक आवश्यक कार्य है।''

''क्या?''

''यह बैठें तो निवेदन कर सकता हूँ।''

विप्रबन्धु पुनः बैठ गया। विष्णुकान्त सामने बैठा तो बोला, ''महाराज! प्रतिहार को भेज मुख्य न्यायाधीश विश्वनाथ को भी बुला लें तो उनके सामने मैं बात करूँगा।''

''क्या मतलब?'' विप्रबन्धु ने कहा।

परन्तु जलौक समझ गया कि पण्डित विष्णुकान्त विप्रबन्धु को बन्दीगृह में डलवाना चाहता है। इस कारण उसने सामने रखी घण्टी बजा दी। जब तक प्रतिहार आया, विष्णुकान्त ने महामन्त्री को कहा, ''कदाचित् आप मुझे पकड़वाना चाहें तो न्यायाधीश का समीप होना ठीक रहेगा। मुझे बन्दीगृह में डालने अथवा वहाँ से छूटने में हम दोनों को सुविधा रहेगी।''

विप्रबन्धु इस कथन का अर्थ समझ ही रहा था कि प्रतिहार आ गया और महाराज ने उसे आज्ञा देनी उचित समझी। महाराज ने कहा, ''अभी न्यायाधीश पण्डित विश्वनाथ के घर पर चले जाओ और उनको कहो कि मैं और महामन्त्रीजी राजप्रासाद में उनकी प्रतीक्षा कर रहे हैं। वह तुरन्त चले आएँ।''

''क्या अभिप्राय है महाराज, इस सबका?'' विप्रबन्धु का प्रश्न था।

उत्तर विष्णुकान्त ने दिया, ''श्रीमन्! मैं महाराज का बन्दी बनने के लिए अपने को उपस्थित कर रहा हूँ, परन्तु साथ ही अपनी मुक्ति का भी प्रबन्ध कर रहा हूँ। मुझे मुक्त करने का अधिकार तो न्यायाधीश को ही हो सकता है। इस कारण यह निवेदन किया है।''

''परन्तु मेरा इससे क्या सम्बन्ध है?''

''वह अपराध जिसके लिए मेरे बन्दी किए जाने की आज्ञा होनी है, उसमें आप मुख्य साक्षी हैं।''

''पर मैं साक्ष्य करने तब आऊँगा जब न्यायाधीश मुझे बुलाएँगे।''

''परन्तु अब तो महाराज आपको साक्षी भरने के लिए बुला रहे हैं। क्या वह आपको आज्ञा नहीं दे सकते?''

महामन्त्री राजप्रासाद के बाहर सैनिकों का जमघट देख आया था। इस

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कारण वह यह नहीं कह सका कि महाराज को आज्ञा देने का अधिकार नहीं है। वह प्रश्न–भरी दृष्टि में महाराज की ओर देखने लगा।

महाराज ने कह दिया, "महामन्त्री! मैं नहीं जानता कि विष्णुकान्त पर क्या आरोप है। परन्तु यदि कुछ झगड़ा हो तो उसका निर्णय यहीं हो जाना ठीक होगा। न्यायालय में कई दिन भी लग सकते हैं और मैं अपने परामर्शदाता को आजकल अपने से दूर नहीं रख सकता।"

विवश विप्रबन्धु विश्वनाथ न्यायाधीश की प्रतीक्षा करने लगा।

: 8 :

राजधानी के मुख्य न्यायाधीश विश्वनाथ को आने में एक घड़ी–भर समय लग गया। उस समय तक इधर–उधर की बातें होती रहीं। न्यायाधीश के आने पर जलौक ने बात आरम्भ की। उन्होंने बताया कि न्यायाधीश को बुलाने की आवश्यकता क्यों पड़ी है। महाराज का कहना था, "पण्डित विष्णुकान्त किसी न्यायिक उलझन में फँस गए हैं। उस उलझन में यह समझते हैं कि महामन्त्री इनको अपराधी मान दण्डित करवाने के लिए बन्दी करने की आज्ञा देंगे। यदि ऐसी आज्ञा दें तो इनकी प्रतिभूति पर तुरन्त छुड़ाने के लिए आपकी आवश्यकता पड़ेगी। इस कारण आपको यहाँ ही आ जाने का कष्ट दिया है।"

विश्वनाथ इस वक्तव्य का कुछ भी सिर–पैर नहीं समझ सका। इस पर भी उसने विष्णुकान्त से कहा, "पण्डितजी! बताइए, क्या उलझन है?"

"श्रीमन्! आपको यहाँ तुरन्त आने का कष्ट इस कारण दिया है कि मैं महामन्त्री पर एक आरोप लगाने लगा हूँ। उस आरोप में, यदि वह ठीक है तो, महामन्त्री बन्दी बनाए जा सकते हैं और यदि आरोप ठीक नहीं तो मैं बन्दी बनाया जा सकता हूँ। वह आरोप महाराज से सम्बन्धित है। इस कारण महाराज के सम्मुख ही न्याय होना ठीक है।"

"क्या आरोप है आपका?"

"तीन दिन से राजकुमार दामोदर लापता है। मेरा आरोप है कि उसे महामन्त्री ने अपने घर में छुपा रखा है।"

"किस प्रयोजन से छुपा रखा है?"

विष्णुकान्त महामन्त्री के मुख पर देख रहा था। उसका मुख पीला पड़ गया था। जलौक विस्मय में कभी विष्णुकान्त का और कभी महामन्त्री विप्रबन्धु का मुख देख रहा था। न्यायाधीश प्रश्न–भरी दृष्टि से महामन्त्री की ओर देख रहा था। कई क्षण तक महामन्त्री जब कुछ उत्तर नहीं दे सका तो न्यायाधीश ने प्रश्न कर दिया। उसने पूछा, "महामन्त्री महोदय! इस आरोप के विषय में

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आपका क्या उत्तर है?"

आखिर महामन्त्री ने कहा, "यह राजनीतिक कार्य है। इस विषय में मैं मन्त्रिमण्डल के समक्ष ही उत्तरदायी हूँ। न्यायाधीश के सम्मुख नहीं।"

विश्वनाथ ने माथे पर त्योरी चढ़ाकर कहा, "महामन्त्री! आरोप आपके किसी राजनीतिक कृत्य के लिए नहीं है। यह एक नैतिक कार्य के लिए है। आपने एक अल्पवयस्क बालक की चोरी की है। क्या आपने यह चोरी मन्त्रिमण्डल की स्वीकृति से की है?"

"जी! मेरा यही अभिप्राय है।"

"और उस मन्त्रिमण्डल में महाराज भी हैं। महाराज! क्या विप्रबन्धु सत्य कह रहे हैं?"

"मेरे ज्ञान में मन्त्रिमण्डल का कोई ऐसा निर्णय नहीं हुआ कि मेरे लड़के को महामन्त्री के घर पर बन्दी बनाकर रखा जाए।"

"क्या राजकुमार के महामन्त्री के घर में बन्दी होने का ज्ञान आपको है?"

"नहीं, विश्वनाथजी! राजकुमार अपनी माँ के साथ मार्तण्ड में होने वाले महोत्सव को देखने गया था। मुझे वहाँ का कुछ भी ज्ञान नहीं।"

"तब तो महाराज !" विश्वनाथ का कहना था, "सुभट्ट भेज राजकुमार को तुरन्त बन्दीगृह से मुक्त कराना चाहिए और उसे यहाँ मेरे सम्मुख उपस्थित करना चाहिए। साथ ही महामन्त्री के विषय में किसी भी आज्ञा देने से पूर्व मैं चाहूँगा कि तुरन्त शेष मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को बुलाया जाए।

"अपराध कितना बड़ा है, यह मन्त्रियों की साक्षी हो जाने के उपरान्त ही कह सकूँगा।"

महाराज ने घण्टी बजाई। प्रतिहार आया तो उसे आज्ञा दे दी गई, "राजप्रासाद के दस सुभट्टों को मेरी आज्ञा है कि वे मन्त्री विप्रबन्धु के घर से राजकुमार दामोदर को मुक्त करा यहाँ ले आएँ।"

यह आज्ञा करते समय महाराज का स्वर काँप रहा था। न्यायाधीश और विप्रबन्धु इसका अर्थ समझ रहे थे कि महाराज को क्रोध आ रहा है।

प्रतिहार के आज्ञा लेकर चले जाने के उपरान्त जलौक ने कहा, "महामन्त्री! अब भी मन्त्रिमण्डल की बैठक बुलाएँगे अथवा नहीं?"

महामंत्री के कुछ भी कहने के पूर्व ही न्यायाधीश ने कह दिया, "महाराज! यह मेरे बन्दी हैं। एक बन्दी महामन्त्री नहीं हो सकता। इस अवस्था में आप अपने हस्ताक्षरों से मन्त्रिमण्डल की बैठक तुरन्त बुलाइए। मैं इस विषय में अपना निर्णय देकर ही यहाँ से जाना चाहता हूँ।"

जलौक ने विष्णुकान्त से कहा, "मेरे नाम से एक आज्ञा लिख दो कि मन्त्रिमण्डल की आपात्कालीन बैठक बुलाई जा रही है। सब मन्त्रीगण

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
राजप्रासाद में मेरे निजी आगार में तुरन्त उपस्थित हो जाएँ।''

विष्णुकान्त उठा और दूसरे आगार में जा एक आज्ञापत्र लिखकर ले आया और उस पर महाराज के हस्ताक्ष्रर करा प्रतिहार को दे दिया।

आधी घड़ी में सुभट्टों से घिरा हुआ दामोदर महाराज के सम्मुख उपस्थित किया गया। न्यायाधीश ने अब तक कागज, कलम और दवात ले आरोप और उस पर महामन्त्री का वक्तव्य लिख लिया था। दामोदर आया तो पिताजी के चरण–स्पर्श कर सामने खड़ा हो गया। अब न्यायाधीश ने प्रश्न पूछने आरम्भ कर दिए, ''कुमार! क्या नाम है तुम्हारा?''

''श्रीमन्। दामोदर !''

''पिता का नाम बताओ।''

''कश्मीर–नरेश महाराज जलौक।''

''अब तुम कहाँ से आए हो?''

''महामन्त्री विप्रबन्धुजी के घर से।''

''वहाँ कैसे गए थे?''

''मैं माताजी के साथ मार्तण्ड बौद्ध महोत्सव देखने गया था। वहाँ पहुँचते ही महाप्रभु नारायण मुझे अपने साथ यह कहकर ले गए थे कि मेरे रहने के लिए पृथक् आगार है। एक आगार में मेरे जाते ही मेरे मुख पर पट्टी बाँध दी गई और मेरे हाथ–पाँव बाँधकर मुझे उठा एक रथ पर लाद दिया गया। मेरे ऊपर एक कपड़ा डाल दिया गया था। रथ चला तो लम्बी यात्रा के उपरान्त मुझे रथ से उतारा गया। मुझे महामन्त्री के निवास–गृह के बाहर रथ से उठाकर भीतर ले गए। मैं इस निवासगृह को पहचानता हूँ। मुझे उठाकर एक कमरे में बन्द कर दिया गया और वहाँ मेरे हाथ–पाँव खोल दिए, परन्तु कमरे में बन्द रखा गया।

''यह शुक्रवार रात की बात है। उस समय रात बहुत जा चुकी थी। मैं कल दिन और रात बन्द रहा। आज मैं अब अल्पाहार कर रहा था कि सुभट्टों ने द्वार खोला और मुझे पकड़कर यहाँ ले आए।''

''महामन्त्री के घर पर तुमसे कौन–कौन मिले थे?''

''महामन्त्री मिले थे। इन्होंने कहा था कि मुझे डरना नहीं चाहिए। शत्रुओं से मेरी रक्षा के लिए मुझे वहाँ छिपाकर रखा गया है। महामन्त्रीजी का पुत्र कर्मीर भी मिला था। मैंने उससे पूछा था कि मुझे यहाँ किसलिए रोक रखा है? उसने मुझे बताया था कि मुझे कश्मीर–नरेश बनाने के लिए। कर्मीर की माताजी भी मिली थीं। वह कुछ देर तक मेरे मुख पर देखती रहीं। मैंने उनको हाथ जोड़ नमस्कार की तो उनकी आँखें तरल हो उठीं और फिर एक भी शब्द बोले बिना वे चली गईं।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तुम्हारी माताजी कहाँ हैं?"

"जब मैं नारायणजी के साथ गया था तब वे वहाँ विहार के एक सुसज्जित आगार में ठहराई गई थीं। मैंने उनको शुक्रवार मध्याह्न के समय देखा था।"

"विप्रबन्दु !" विश्वनाथ ने कहा, "आपको कुछ कहना है?"

"यही कि यह मेरा राजनीतिक कार्य था। इसके लिए मैं न्यायाधीश के सम्मुख उत्तरदायी नहीं हूँ।"

"तो किसके सामने उत्तरदायी हो?"

"मन्त्रिमण्डल के।"

"आपका अभिप्राय उस मन्त्रिमण्डल से है जिसमें महाराज नहीं?"

"जब महाराज नगर से बाहर होते हैं तब इनके बिना भी निर्णय लिए जाते हैं।"

"तो अन्य मन्त्रियों से पता करना पड़ेगा।" न्यायाधीश का कहना था। इस समय एक–एक दो–दो कर मन्त्रीगण आने लगे थे।

विश्वनाथ समझ रहा था कि विष्णुकान्त ने एक बहुत बड़ा राज्य–विरोधी षड्यन्त्र पकड़ा है। इस षड्यन्त्र में बौद्ध उपासक भी सम्मिलित हैं। इस कारण वह बहुत सावधान था। एक बात देख वह आश्वस्त था। वह था राजप्रसाद के चारों ओर सैनिकों का खड़ा होना।

मन्त्रीगण भी ज्यों–ज्यों राजप्रासाद में आते थे, चिन्ता का अनुभव करते थे। वैसे तो नगर में भी सैनिक दिखाई दे रहे थे, परन्तु राजप्रासाद में वे विशेष संख्या में दृष्टिगत हो रहे थे।

जब सब मन्त्रीगण आ गए तो विश्वनाथ ने महाराज के कान में कुछ कहा। जलौक ने विष्णुकान्त को कुछ कहा। उसने द्वार पर खड़े प्रतिहार को संकेत से बुलाकर कुछ कह दिया। विश्वनाथ ने कहा, "मन्त्रीगण! महाराज ने मुझे एक विषय पर न्याय करने के लिए यहाँ बुलाया है।"

"विष्णुकान्त ने आरोप लगाया है कि महामन्त्री ने राजकुमार दामोदर को अपने घर में बन्दी बनाकर रखा हुआ है।"

"घर की तलाशी लेने पर दामोदर वहाँ मिला है और महामन्त्री का यह कहना है कि उनका यह काम राजनीति से सम्बन्ध रखता है। इस कारण न्यायाधीश के विचार करने का नहीं है।

"कोई कार्य राजनीति के साथ सम्बन्धित तब हो सकता है जब या तो वह मन्त्रिमण्डल द्वारा अथवा महाराज द्वारा अपने विशेषाधिकारों से स्वीकार किया गया हो।

"या फिर वह कार्य देश और जाति के विरुद्ध न हो। उनके हित में हो। तृतीय वह कार्य किसी विदेशी तत्त्वों से प्रेरित न हो और चतुर्थ, इस सबके

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने पर भी वह नैतिक स्तर पर निम्न कोटि का न हो।''

यह सुन एक मन्त्री विभुशंकर ने कह दिया, ''न्यायाधीश, मन्त्रिमण्डल द्वारा नियुक्त किया जाता है। इस कारण वह मन्त्रिमण्डल के कार्यों पर न्याय करने नहीं बैठ सकता।''

''मन्त्री महोदय! मैं अभी मन्त्री महोदय पर न्याय नहीं कर रहा। महामन्त्री के एक अनैतिक कार्य पर ही जाँच हो रही है और वह भी मन्त्रिमण्डल के मुख्य महाराज जलौक के आदेश पर। इसका अर्थ यह है कि मन्त्रिमण्डल की आज्ञा से मन्त्रिमण्डल के एक सदस्य के विपरीत कहे जाने वाले अनैतिक कार्य की जाँच कर रहा हूँ।

''अतः मैं अपने अधिकार से बाहर नहीं हूँ। परन्तु क्या आपके कथन का अर्थ मैं यह समझूँ कि राजकुमार की चोरी और उसे बन्दी बना रखने का आदेश मन्त्रिमण्डल ने दिया है?''

''जी! मैं यही कह रहा हूँ।''

जलौक ने पूछा, ''पिछले दो मास से मैं राजधानी से कभी बाहर नहीं गया और मन्त्रिमण्डल की सब बैठकों में उपस्थित रहा हूँ। बताओ, किस बैठक में यह निश्चय किया गया था?''

''क्योंकि,'' विभुशंकर ने कहा, ''यह निर्णय महाराज के विरुद्ध था; इस कारण महाराज की जानकारी के बिना एक बैठक में, जो महामन्त्री के घर पर हुई थी, यह निर्णय लिया गया था।''

इस पर एक अन्य सदस्य ने कह दिया, ''यह असत्य भाषण है। मैं उस बैठक में न बुलाया गया था और न ही उसमें उपस्थित था। इस निर्णय का तो मुझे अभी ज्ञान हो रहा है।''

इस पर दो अन्य सदस्यों ने भी अपनी अनभिज्ञता प्रकट की। अब महाराज ने आगार में घुस आए और द्वार के समीप खड़े सेनाध्यक्ष को आज्ञा दे दी, ''मैं इस मन्त्रिमण्डल को विसर्जित करता हूँ। इनके विरुद्ध देश, राज्य और राजा के प्रति षड्यन्त्र का आरोप है और इनको मैं न्यायाधीश के अधीन करता हूँ जिससे इन पर आरोपित अपराधों की जाँच की जा सके।''

मन्त्रिमण्डल में से विभुशंकर उठ खड्ग निकाल महाराज की ओर लपका, परन्तु सेनाध्यक्ष सतर्क था और वह अपना खड्ग ले उसके सामने आ खड़ा हुआ। दो ही हाथ हुए और विभुशंकर घायल करके पकड़ लिया गया।

सेनाध्यक्ष ने न्यायाधीश की ओर देखकर कहा, ''श्रीमान्! यह कार्य तो मैंने अपने नित्य कार्य का पालन करते हुए किया है और इसके लिए मैं क्षमा चाहता हूँ। यह अभियुक्त आपके अधीन था और मैंने आपसे स्वीकृति के बिना इसको निःशस्त्र कर दिया है। अब आप आज्ञा दे सकते हैं।''

विश्वनाथ ने दस मन्त्रियों में से सात को बन्दी बना बन्दीगृह में ले जाने

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

की आज्ञा दे दी और शेष तीन को कह दिया, "मैं आपको यह सम्मति दूँगा कि आप स्वतः ही अपने घरों में अपने को बन्दी मानकर रहें।"

जब मन्त्रीगणों को वहाँ से जाने की आज्ञा हुई तो महाराज ने यह घोषणा कर दी, "मैं पण्डित विष्णुकान्त को राज्य का महामन्त्री नियुक्त करता हूँ। वे अब मेरे अधीन तब तक राज्य-कार्य चलाएँगे जब तक नया मन्त्रिमण्डल नियुक्त नहीं होता।"

इस आज्ञा को मुख्य न्यायाधीश और सेनाध्यक्ष सुन रहे थे।

विष्णुकान्त उठ खड़ा हुआ और सेनाध्यक्ष से बोला, "श्रीमान् सेनाध्यक्ष महोदय! मैं आपसे पृथक् में बात करना चाहता हूँ। आप तनिक साथ वाले आगार में पधारने का कष्ट करें।"

वे दोनों जब दूसरे आगार में चले गए तो विश्वनाथ ने महाराज को बधाई दी और कहा, "महाराज! इनके भयंकर षड्यन्त्र से आप बच गए हैं, परन्तु इस षड्यन्त्र का एक छोर मार्तण्ड में प्रतीत होता है और उस किनारे पर महारानीजी कार्य कर रही प्रतीत होती हैं। अब आपको उस ओर ध्यान देना चाहिए।"

जलौक ने विश्वनाथ के प्रति कृतज्ञता प्रकट करते हुए कहा, "श्रीमन्! मेरा यह निश्चय है कि जब तक कोई सम्प्रदाय अपने आपको सम्प्रदाय के विषयों में सीमित रखेगा, राज्य उसमें हस्तक्षेप नहीं करेगा। परन्तु जितना जमघट वहाँ एकत्रित हो गया है, उससे और राजकुमार की घटना से यह पता चला है कि वह सम्प्रदाय राजनीति में हस्तक्षेप करने लगा है।

"एक बात यह है कि इन एकत्र हुए लोगों के सम्मुख वे यह प्रकट कर रहे हैं कि वे देश की जनता का नेतृत्व कर रहे हैं। ये कुछ लोग इसको स्वीकार कर रहे हैं। यदि यह विवाद राज्य के सम्मुख आया तो राज्य इसका निश्चय करेगा।"

"लगभग एक मास पूर्व ऐसी ही परिस्थिति राजधानी में उपस्थित हो गई थी। एक समुदाय के कुछ सहस्र लोग एकत्रित होकर हो-हल्ला करने लगे थे तो दूसरे समुदाय के लोग भी एकत्रित हो गए। उस समय तो बिना संघर्ष के विवाद समाप्त हो गया। परन्तु सम्भावना यह प्रतीत होती है कि वैसी ही स्थिति पुनः उपस्थित हो सकती है। लाखों की भीड़ को बिना रक्तपात के तितर-बितर करने के लिए प्रजा का दूसरा भाग भी सजग हो सकता है।"

न्यायाधीश मुस्कराया और बोला, "मैं अपने विभाग से कुछ प्रेक्षक उस उत्सव और उसकी गतिविधियों के विषय में जानकारी के लिए भेज रहा हूँ। इससे न्याय करते समय निर्णय करने में सुविधा रहेगी।"

महाराज ने कहा, "ठीक है।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

: 9 :

विष्णुकान्त और सेनाध्यक्ष की गोष्ठी का परिणाम यह हुआ कि पूर्ण सेना को सतर्क कर दिया गया। दो सहस्र से अधिक शस्त्रधारी अश्वारोही राजधानी में नियुक्त कर दिए गए। सेना को यह आदेश दे दिया गया कि दोनों प्रमुख सम्प्रदायों में संघर्ष होने की सम्भावना है। इस संघर्ष को रोका जाए, परन्तु स्थान–स्थान पर उपस्थित बहुसंख्यक का यह अभिप्राय नहीं माना जा सकता कि वे प्रजा के सत्य प्रतिनिधि हैं। इस बात का निर्णय शोर मचाने के अतिरिक्त हो सकता है और उसके लिए तीन व्यक्तियों का प्रतिनिधिमण्डल महामन्त्री के सम्मुख होकर अपनी माँग उपस्थित कर सकता है। उस पर निर्णय न्यायाधीश ही दे सकेगा।

सेनाध्यक्ष यह भी समझ गया कि कोई व्यक्ति जो राज्य का नागरिक नहीं वह किसी प्रकार की राज्य सम्बन्धी माँग करने का अधिकार नहीं रखता। यदि वह ऐसा करे तो उसे न्यायाधीश के सम्मुख उपस्थित करने के लिए अधिकार ले लिया गया है। उसके विषय में भी न्यायाधीश निर्णय दे सकता है।

इस प्रकार सेना को सतर्क कर विष्णुकान्त महाराज के पास आया तो विश्वनाथ महाराज से जाने की स्वीकृति माँग रहा था। विष्णुकान्त ने न्यायाधीश और महाराज को अपनी सूचना दे दी। उसने कहा, "मैं कल मध्य रात्रि तक मार्तण्ड में था और उस समय तक की सूचना यह है कि आज मध्याह्न समय वहाँ पर एकत्रित बौद्ध उपासक और श्रावक राजधानी को प्रस्थान करेंगे। तीन दिन में वे बिना शस्त्रास्त्रों से राजधानी पर आक्रमण करेंगे। वे यह आशा लगाए प्रतीत होते हैं कि मन्त्रिमण्डल उनके विरुद्ध सेना को नहीं लगाएगा और शेष जनता इतनी बड़ी भीड़ से आतंकित मौन रहेगी। ऐसा होने पर बौद्ध संघ वाले यह माँग करेंगे कि राजा को पदच्युत किया जाए और उनके स्थान पर राजकुमार को राज्याभिषिक्त किया जाए।

"मैं समझता हूँ, यह कथन कि ऐसा राज्य के बहुसंख्यक लोग चाहते है, सत्य नहीं है। परन्तु यदि उन लोगों ने यह बात राज्य के न्यायाधीश द्वारा निश्चय कराने का विचार प्रकट किया तो आपको इसमें हस्तक्षेप करना चाहिए और यदि बलपूर्वक यह बात मनवानी चाही तो महाराज इसमें उनको बल–परीक्षा करने का अवसर देंगे। ऐसी स्थिति में दोनों सम्प्रदायों को पहले अपने बलाबल का निर्णय कर लेने दिया जाना चाहिए। राज्य बाद में इसका निश्चय करेगा।

"तो दोनों सम्प्रदायों को परस्पर झगड़ा करने दिया जाए?"

"भगवन्! ऐसी स्थिति में राज्य का हस्तक्षेप तो जहाँ अधिक रक्तपात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करने वाला होगा वहाँ राज्य पक्षपात के लिए बदनाम भी हो जाएगा। राज्य नहीं चाहता कि वे लड़–झगड़कर यह निर्णय करें कि कौन अधिक संख्या में है। महाराज जलौक के पक्ष में अथवा विपक्ष में। राज्य उनमें यह निर्णय करने का उपाय कर सकता है। परन्तु यह तब ही हो सकता है जब दोनों समुदाय राज्य को इसका निर्णय करने का अवसर दें। अन्यथा राज्य तटस्थ रहकर उन्हें स्वयं निर्णय करने देगा।''

''एक–दूसरे की हत्या करके?''

''राज्य यह नहीं चाहता। परन्तु जब दो पक्ष राज्य पर विश्वास न कर स्वयं निश्चय करने का हठ करेंगे तो राज्य उनको लड़ने–मरने भी देगा। राज्य तब ही हस्तक्षेप करेगा जब दोनों राज्य को हस्तक्षेप करने का अधिकार देंगे।''

''तब तो पण्डित! गृहयुद्ध हो जाएगा !''

''यह अधिक ठीक होगा। यदि बिना राज्य की सेवाएँ स्वीकार किए दोनों अपने–अपने बलाबल से निश्चय करना चाहेंगे तो हमारा विचार है कि उनको ऐसा करने देना चाहिए।

''जैसे सम्प्रदायों को युक्ति से एक–दूसरे को समझाने की स्वतन्त्रता है वैसे ही सब सम्प्रदायों को बल–परीक्षा की भी स्वतन्त्रता है। जो सम्प्रदाय बल–प्रयोग भी एक युक्ति मानते हैं उनको वह युक्ति भी करने की स्वीकृति दी जा सकती है।

''परन्तु श्रीमन्! जो शान्तिप्रिय लोग हैं और साम्प्रदायिक विवादों में बल–प्रयोग को वर्जित मानते हैं, उनकी रक्षा तो राज्य करेगा।''

''आप बल किसको मानते हैं?''

''शरीर की इन्द्रियों का दुरुपयोग वर्जित है। धर्मयुक्त प्रयोग बल नहीं कहलाता। वह इन्द्रियों का दुरुपयोग नहीं कहा जाता है।

''उदाहरण के रूप में उस दिन बौद्धों ने भैरवों को, महाराज और महारानी को तथा राज्य को भी अपशब्द कहते हुए यात्रा निकाली थी। वह वाक् इन्द्रिय का सदुपयोग नहीं कहा जा सकता। वह बलात्कार कहलाता है।

''उस दिन राज्य ने दूसरे पक्ष अर्थात् भैरवों को भी बल–प्रयोग की स्वीकृति दे दी। इस पर अपशब्द कहने वाले भाग गए।

''भूल यह हुई कि महाराजा को उनके मुख पर मूर्ख कहने वाले को भी महामन्त्री ने दण्ड देना उचित नहीं समझा और उसका परिणाम वर्तमान आन्दोलन है।''

विश्वनाथ ने मुस्कराते हुए कहा, ''अब तो आप महामन्त्री हैं। देखें, आप किस प्रकार इस समस्या को सुलझाते हैं।''

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"ईश्वर की कृपा से सब ठीक होगा।"

विष्णुकान्त उस दिन बहुत व्यस्त रहा। उसे अपने घर जाकर समाचार लेने का भी अवकाश नहीं मिला। सुनन्द जब नींद ले चुका तो महाराज से मिलने आया। महाराज विष्णुकान्त के साथ मन्त्रालय में कार्य कर रहा था। एक ओर विष्णुकान्त को महामन्त्री के पद पर होने की घोषणा करनी थी और दूसरी ओर जनता के मन में विश्वास और धैर्य उत्पन्न करना था।

विष्णुकान्त ने नगर–भर में एक डुग्गी पिटवा दी। उसमें यह घोषणा की गई, "मार्तण्ड मन्दिर पर बौद्धों की बहुत बड़ी भीड़ एकत्रित होकर राजधानी की ओर आने का विचार रखती है। यदि वह भीड़ शान्तिपूर्वक आकर अपना आवेदन करेगी तो महाराज उस आवेदन को सुनकर उस पर सहानुभूतिपूर्ण विचार करेंगे।

"महाराज आशा करते हैं कि बौद्ध श्रावक और उपासक सभ्य नागरिकों की भाँति व्यवहार रखेंगे। कुछ भी हो, ज़नता को भयभीत होने की आवश्यकता नहीं। महाराज सबके साथ न्याय का व्यवहार रखना चाहते हैं और किसी को भी अन्याययुक्त व्यवहार करने की स्वीकृति नहीं दे सकते।"

सुनन्द आया तो महाराज ने उसे अपने सामने बिठा विवाह–सम्बन्धी पूर्ण विवरण जाना। तदनन्तर दुर्गा और कादम्बिनी का समाचार पूछा।

"तो तुम दुर्गा से विवाह के लिए तैयार हो?" महाराज ने पूछा।

"महाराज! दुर्गा मुझसे विवाह के लिए हठ कर रही थी। मैं उसकी बड़ी–बड़ी अश्रुभरी आखें देख मौन हो गया था। परन्तु महाराज! यह बिना आपकी आज्ञा के कैसे हो सकता है? वहाँ हुए विवाह को मैं विवाह नहीं समझता।"

"परन्तु हम उसे विवाह ही मानते हैं। एक ने कही दूसरे ने मानी। दोनों भए ब्रह्मज्ञानी! जानते हो इस कहावत को। दुर्गा ने कहा और तुमने मान लिया। बस, मैं इसे ही विवाह मानता हूँ। शेष संस्कार की बात है। वह हो जाएगा।"

सुनन्द इस विश्लेषण से महाराज का मुख देखता रह गया। जलौक मुस्करा रहा था। जब सुनन्द ने उठकर महाराज के चरण स्पर्श किए तो जलौक उसके सिर पर हाथ रख आशीर्वाद देते हुए पूछने लगा, "यह तुमको किसने सिखाया है?"

"पण्डितायिन माँजी ने।"

"तो तुमने उनको इस विवाह की बात बताई है?"

"उनसे मैं कभी कोई बात छुपाकर नहीं रखता। महाराज! मेरी तीन माताएँ हैं। एक भैरव मन्दिर की पुजारिन। दूसरी महारानी माताजी और

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीसरी पण्डितायिन माताजी। इन तीनों के समक्ष मैं झूठ नहीं बोलता।"

"और तुम्हारे पिता कितने हैं?"

"वह तो एक ही है। वही जो सबके पिता हैं। मेरा अभिप्राय है देवों के देव महादेव!"

दोनों में यह वार्तालाप हो रहा था। उधर विष्णुकान्त राजकार्य में व्यस्त था कि तभी प्रतिहार ने सूचना दी कि महारानी और राजकुमारी आकर भीतर अपने आगारों में चली गई हैं।

महाराज तुरन्त उठ समाचार लेने भीतर चले गए।

वह रात और अगला दिन भारी तनाव का रहा। अगले दिन मध्याह्न के समय विष्णुकान्त न्यायाधीश विश्वनाथ और सेनाध्यक्ष वीरभद्र को अपने साथ लेकर सामान्य पहरावे में उस पड़ाव पर जा पहुँचा जहाँ तक बौद्ध यात्री पहुँचे थे।

मार्ग में यत्र–तत्र त्रिशूलधारी शैवों की टोलियाँ भी उसी ओर जाती हुई मिलीं। इस पर भी शैव और बौद्ध अभी आमने–सामने नहीं हुए थे। मार्तण्ड से चलने के समय तो बौद्ध भीड़ एक लाख के लगभग थी। शेष वहाँ उत्सव देखने और मनोरंजन के निमित्त आए थे। वे लम्बी यात्रा में सम्मिलित नहीं हुए। परन्तु मार्ग में लोग इनमें सम्मिलित भी हो रहे थे और इनसे पृथक् भी हो रहे थे। इसी समय बौद्ध महाप्रभु नरोत्तम को किसी उपासक ने एक समाचार दिया था कि शैव भी एक शोभायात्रा निकाल राजधानी को जाने का विचार बना रहे हैं।

नरोत्तम अपने साथ बहुत बड़ी भीड़ देख यह समझ रहा था कि इतने बड़े जमघट को देखकर ही विरोधी भाग खड़े होंगे।

ये तीनों अधिकारी पड़ाव पर महाप्रभु नरोत्तम से मिले तो उसने पूछ लिया, "आप लोग कौन हैं और किस प्रयोजन से मिलने आए हैं?"

"मैं!" विष्णुकान्त ने कहा, "महाराज जलौक का परामर्शदाता विष्णुकान्त हूँ।"

"ओह! तुम तो मार्तण्ड में थे?"

"हाँ, प्रभु! आप भी तो वहाँ थे।"

"बताओ, क्या कहते हो?"

"कश्मीर की महारानी, राजकुमारी और राजकुमार कहाँ हैं? ये राज्याधिकारी उनसे मिलने आए हैं।"

"वे तो मार्तण्ड के विहार में ही हैं। वे इस यात्रा में साथ नहीं आए, परन्तु हम आशा करते हैं कि परसों जब हम श्रीनगर पहुँचेंगे तो वे भी वहाँ पहुँच जाएँगे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"आप वहाँ किस प्रयोजन से जा रहे हैं?" विश्वनाथ ने पूछा।

"आप कौन हैं?"

"मैं राज्य का मुख्य न्यायाधीश हूँ।"

"हम महाराज को एक आवेदन–पत्र देने जा रहे हैं।"

"वह आप मुझे दे सकते हैं। हम उस पर विचार कर लेंगे तो महाराज अपना विचार प्रकट कर देंगे।"

"नहीं। वह तो हम महाराज के हाथ में ही देंगे।"

"तो तुरन्त उत्तर नहीं दिया जा सकेगा। उस पर मन्त्रिमण्डल विचार करना चाहेगा।"

"मन्त्रिमंडल को हम कुछ नहीं मानते। हमारी माँग महाराज से है और वह इतनी सरल है कि महाराज तुरन्त उत्तर दे सकेंगे।"

"देख लीजिए। हम दस कोस की यात्रा करके इसी कारण आपसे मिलकर जानने आए हैं कि आवेदन पर उचित अधिकारी विचार–विमर्श कर उत्तर दे सकें।"

"आप लोग चिन्ता न करें। हमारा कथन सरल है और उसका उत्तर भी सरल ही होना चाहिए। हम अपना आवेदन वहीं देंगे।"

विश्वनाथ और वीरभद्र को विष्णुकान्त लाया ही इस कारण था कि अगले दिन होने वाली घटना पर इन दोनों व्यक्तियों को खेद न हो। जब नरोत्तम ने कहा कि वे अपनी माँग पहले नहीं बता सकते तो सेनाध्यक्ष को क्रोध चढ़ आया। उसने पूछा, "इस पूर्ण भीड़ का नेतृत्व कौन कर रहा है?"

"मैं कर रहा हूँ।"

"क्या नाम है आपका?"

"नरोत्तम।"

"कहाँ के रहने वाले हैं?"

"भूमण्डल के।"

"अभी कहाँ से आए हैं?"

"पाटलिपुत्र से।"

"इससे पहले कश्मीर कब आए थे?"

"मैं पहली बार ही चैत्र कृष्णा तृतीया को मार्तण्ड पहुँचा था।"

"तो तुम कश्मीर के नागरिक नहीं हो?"

"मैं किसी भी देश का नागरिक नहीं हूँ और सब देशों का नागरिक हूँ।"

"आप कश्मीर की जानता का नेतृत्व नहीं कर सकते।"

"वह तो बिना मेरी इच्छा के हो रहा है।"

विष्णुकान्त ने बात बदल दी। उसने कहा, "वीरभद्रजी! महाप्रभु ठीक कह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
रहे हैं कि ये भूमण्डल के नागरिक हैं। परन्तु यदि भूमण्डल में पाँच सौ राज्य हों तो इनकी नागरिकता का पाँच सौवाँ अंश ही कश्मीर के साथ सम्बन्ध रखता है।

"अतः इनकी स्थिति कश्मीर में किसी भी नागरिक से बहुत कम है। हमें किसी ऐसे व्यक्ति को खोजना चाहिए जो शत–प्रतिशत कश्मीर का नागरिक हो।"

"वह आपको राजधानी में मिल जाएगा, जिसकी नागरिकता के विषय में कोई सन्देह न कर सके।"

न्यायाधीश ने कह दिया, "ठीक है। हम परसों आपसे श्रीनगर में मिलेंगे। इस पर भी यदि आप अपना आवेदन हमें यहाँ ही दे देते तो आपको भी सुविधा रहती।"

"वह हम श्रीनगर में चलकर ही देंगे।"

तीनों लौट आए। सेनाध्यक्ष कह रहा था, "इस विदेशी षड्यन्त्रकारी को मैं अभी अपने खड्ग से मृत्यु के घाट उतार देता। परन्तु पण्डितजी कह रहे हैं कि राज्य को इसमें हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए।"

"वीरभद्रजी! यह मेरा सुविचारित मत है कि आपको शान्त रहना चाहिए। इस भीड़ को भीड़ ही नियन्त्रण में कर देगी।"

इस पर न्यायाधीश ने कहा, "यह ठीक है, परन्तु कौन–सी भीड़ ने राजनियम भंग किया है, यह तो मेरे निर्णय करने की बात होगी। मैंने अपने प्रेक्षक इस स्थान पर भेजे हुए हैं जो मुझे न्याय करने में सहायक होंगे।"

"और यह जो हम अपनी आँखों से देख और कानों से सुनकर आए हैं?" सेनाध्यक्ष का प्रश्न था।

"वह साक्षी के रूप में ही ग्रंहण किया जाएगा।"

: 10 :

जब सेनाध्यक्ष आदि बौद्ध शिविर से चले आए तो नरोत्तम ने भदन्त नारायण को बुलवा लिया। वह राज्याधिकारियों से भेट के समय शिविर के दूसरे किनारे पर था। शिविर आधा मील लम्बे–चौड़े स्थान पर स्थित था। लोग खाना खा रहे थे।

नारायण आया तो नरोत्तम ने उसे तीन राज्याधिकारियों के आने की बात बता दी। नारायण ने पूछा, "क्या कहते थे?"

"वे कहते थे कि हम जो कुछ चाहते हैं, यहाँ ही बता दें तो वे महाराज से परस्पर परामर्श कर राजधानी में उत्त्रर दे सकेंगे।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"तो आपने क्या बताया है?"

"मैंने यह कहा है कि हम अपनी माँग तो वहाँ पर समय पर ही बताएँगे और इसका उत्तर तुरन्त चाहेंगे।"

"यह तो ठीक नहीं हुआ।"

"तो क्या ठीक होना चाहिए था?"

"कुछ मिथ्या बात कह देनी थी। अपनी इस यात्रा का वास्तविक उद्देश्य नहीं बताया जा सकता। यह तो ठीक है, परन्तु कुछ न बताने से वे कुछ कल्पना कर लेंगे और उसके अनुसार अपना निश्चय कर लेंगे।"

"परन्तु जो कुछ हम करना चाहते हैं, उससे अधिक क्या कल्पना कर सकते हैं और यदि मैं सत्य बात बता देता तब भी तो हम घोर अपराधी माने जा सकते थे।"

"परन्तु कुछ झूठ कह देना था।"

"वह मैं कह नहीं सका।"

नारायण असन्तुष्ट, परन्तु चुप रहा। नरोत्तम का पद उससे ऊँचा था और वह संघ के नियमों के कारण यह कह नहीं सका कि वह मूर्ख है। उसे मौन देख नरोत्तम ने कह दिया, "वे यात्रा में महारानी इत्यादि के न होने का कारण पूछ रहे थे। इससे मैं यह समझा हूँ कि महारानी राजधानी नहीं पहुँचीं और राजकुमार अभी तक बन्दी है।"

"महारानी इत्यादि के विषय में प्रश्न हमें धोखा देने के लिए भी तो हो सकता है। मेरा तो मन कहता है कि दामोदर, सुनन्द, महारानी और दुर्गा सब राजधानी पहुँच गए हैं। हमने वहाँ उनसे व्यवहार में भूल की थी।"

"उनसे व्यवहार तो आपके अधीन ही था। हाँ, विहार के प्रबन्धकों से प्रबन्ध में त्रुटि रह गई थी जो वे मान गए हैं।"

नरोत्तम ने समझ लिया था कि महारानी इत्यादि राजधानी पहुँच गई हैं और उन्होंने वहाँ की घटना को सत्य-सत्य नहीं बताया होगा। कारण यह कि सत्य बताने से तो वे स्वयं अपराधी सिद्ध हो सकती थीं। महारानी ने कुछ झूठ कहा होगा तभी तो ये राज्याधिकारी बौद्धों की माँग जानने आए हैं।

नारायण इस पूर्ण घटनाचक्र से असन्तुष्ट था और वह यह भी समझ रहा था कि राजधानी में सेना से आमना-सामना होगा। किन्तु महामन्त्री इत्यादि बौद्धों पर सेना द्वारा आक्रमण का विरोध करेंगे और सेना भी शस्त्रहीन नागरिकों पर आमक्रण करने में संकोच अनुभव करेगी, तब उनकी विजय हो जाएगी।

एक बात वह समझ नहीं सका था कि प्रजा का दूसरा भाग उनका विरोध करने पर उतर आएगा। वह यह तो जानता था कि भैरवों और शैवों में फूट

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
पड़ चुकी है और भैरवों की रक्षा के लिए शैव इतनी बड़ी भीड़ का विरोध नहीं कर सकेंगे। मन्त्रिमण्डल के सात सदस्यों को वे अपने पक्ष में भी तो इसी बहाने से कर सके थे कि वे शैवों का विरोध नहीं कर रहे। वे ऐसा प्रकट कर रहे थे।

परन्तु प्रातःकाल बौद्ध अभी यात्रा के अन्तिम चरण पर चलने की तैयारी ही कर रहे थे कि नारायण भागा–भागा नरोत्तम के पास यह कहने आया कि राजधानी का मार्ग त्रिशूलधारी शैवों ने रोक रखा है।

"वे क्या कहते हैं?" नरोत्तम का प्रश्न था।

"उनके प्रवक्ता ने हमारे प्रवक्ता को बताया है कि वे यह बताना चाहते हैं कि उनको भी राज्य के विरुद्ध कुछ कहना है। इस कारण वे भी हमारे साथ सम्मिलित होना चाहते हैं।"

"तो उनके प्रवक्ता को यहाँ बुला लो।"

"वे दोनों दलों के मध्य के खुले मैदान में मिलना चाहते हैं। वे शिविर में नहीं आएँगे।"

"तो उनसे मिलना चाहिए।"

नारायण मिलने गया तो भूरिश्रवा को सामने खड़ा देख आग–बबूला हो गया। अनायास उसके मुख से निकल गया, "तुम! तुम शैव हो क्या? हम तो तुमको भैरवपन्थी नेता मानते हैं।"

भूरिश्रवा ने शान्त भाव में कहा, "शैव और भैरव तो प्रायः एक ही मत हैं। परमात्मा अनेक रूपों और रंगों में यहाँ उपस्थित है। भैरव और शिव भी उसी के रूप हैं। दोनों में अन्तर उनके अपने भीतर की बात है। आप इस अन्तर को नहीं समझते। मुख्य बातों में हम एक ही हैं।"

"परन्तु हम शैवों को अपना साथी मानते हैं।"

"तो मैं उनका प्रतिनिधि हूँ। मैं चाहता हूँ कि राज्य के सम्मुख हम एकमत होकर जाएँ।"

"परन्तु हम एकमत कैसे हो सकते हैं? हममें सैद्धान्तिक मतभेद है।"

"वह मतभेद तो साम्प्रदायिक है। राज्य के सम्मुख तो हम एक ही हो सकते हैं।"

"बहुत कठिन है।"

"तब हम आपको राज्य के सम्मुख नहीं जाने देंगे। तुम लोग राज्य पर मिथ्या प्रभाव डालना चाहते हो।"

"क्या मिथ्या प्रभाव डाल रहे हैं?"

"यही कि आप राज्य में बहुसंख्या में हैं और आप राज्य को अपने अनुकूल चाहते हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

"तो क्या हम प्रजा में बहुमत में नहीं हैं?"

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"भदन्त! यही तो मिथ्यावाद है। पूर्ण राज्य–भर में से और बहुत बड़ी संख्या में भारत से बुलाकर आप लाख–सवा लाख एकत्रित हो सके हैं। तो दस–बीस गाँवों में से ही हम शुद्ध कश्मीर के नागरिक इतने एकत्रित हो गए हैं कि आपको हम रोककर खड़े हो गए हैं।

"कहीं पूर्ण राज्य के शैव एकत्रित हो जाएँ तो आप आटे में नमक भी नहीं रहेंगे।"

"तो यह कैसे निर्णय हो कि आपकी संख्या हमसे अधिक है?"

"गाँव–गाँव में गणना की जाने से।"

"यह तो राज्य ही कर सकता है।"

"यही तो हम चाहते हैं कि हम दोनों मिलकर राज्य से यह माँग करें कि राज्य–भर में बौद्ध और शैवों की जनगणना की जाए। जो अधिक हों, राज्य उसका हो। राजा उसी मत को मानने वाला हो।"

नारायण निरुत्तर हो मुख देखता रह गया। भूरिश्रवा ने कह दिया, "हमारे शैव भैरवों का विरोध कर रहे हैं। भैरवी–चक्र को भी वे पसन्द नहीं करते, परन्तु वे बौद्धों को भी पसन्द नहीं करते। बौद्ध अनीश्वरवादी हैं। हम यहाँ अनीश्वरवादियों तथा शून्यवादियों का राज्य नहीं चाहते।

"हमारी साँझी माँग यही है कि जनगणना कराई जाए और पता किया जाए कि कौन–से मत के लोग अधिक हैं।"

"हम इस साधारण–सी बात के लिए इतना बड़ा झगड़ा नहीं कर रहे।"

"तो हम आपको आगे नहीं जाने देंगे। पहले हमसे बात कर लो, अन्यथा हम इस स्थान पर ही आप सबकी हत्या कर देंगे। तब यह वर्तमान युग का कुरुक्षेत्र बन जाएगा।"

नारायण ने कहा, "हम मरने से नहीं डरते। हम चलेंगे।"

"मैं आपको अन्तिम चेतावनी देता हूँ कि यदि शिविर से एक पग भी आगे बढ़े तो ये त्रिशूलधारी यहाँ रक्त की नदी बहा देंगे।"

"आप हमारे अध्यक्ष से चलकर बात कर लें।"

"वे यहाँ आ सकते हैं।"

"वे बहुत बड़ी पदवी के व्यक्ति हैं। यहाँ आने में वे अपना अपमान मानते हैं।"

"परन्तु बौद्ध सम्प्रदाय से शैव सम्प्रदाय बड़ा है। इस कारण मैं उनसे बड़े पद पर हूँ।"

"परन्तु आपके साथ कम लोग हैं।"

"परन्तु हमारा एक–एक त्रिशूल सौ–सौ बौद्धों का रक्त चूसने की क्षमता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

रखता है।''Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नारायण असफल होकर लौट गया।

नरोत्तम इस बार शैवों से मिलकर आवेदन–पत्र देने में हानि नहीं समझता था, परन्तु नारायण, जो भूरिश्रवा को भली–भाँति जानता था, वह उससे मिलकर आवेदन–पत्र देने में लाभ नहीं समझता था।

दोनों महाप्रभु परस्पर सहमत नहीं हो रहे थे और समय व्यतीत हो रहा था।

एकाएक शैवों ने आक्रमण कर दिया और पाँच–सात बौद्ध मारे गए। इससे बौद्धों में भगदड़ मच गई।

जब एक बार लोग भागने लगे तो भेड़ों की भाँति पूर्ण बौद्ध शिविर छिन्न–भिन्न हो गया और जिधर जिसके सींग समाए, उधर वह भाग खड़ा हुआ। नरोत्तम महाप्रभु और कुछ घायल व्यक्ति वहाँ रह गए थे। घायल तो प्रायः भागती भीड़ के पाँवों तले कुचले हुए लोग थे। त्रिशूलों से घायल तो दस–बीस ही थे जिनमें से केवल पाँच व्यक्ति मारे गए थे।

नारायण भागने वालों में सबसे पहला व्यक्ति था, परन्तु कुछ दूर जाकर उसे लज्जा लगने लगी और वह लौट आया।

नारायण के साथ पाँच–सात श्रावक भी लौट आए। ये लोग आए तो उन्होंने देखा कि भूरिश्रवा और नरोत्तम परस्पर बात कर रहे थे। भूरिश्रवा ने यह प्रस्ताव किया था, ''महाप्रभु! हम आपको इसी मान–प्रतिष्ठा से ले चलते हैं और राज्य के सम्मुख अपना साँझा आवेदन–पत्र रख देते हैं।''

''क्या साँझा आवेदन होगा?'' नरोत्तम पूछ रहा था।

''हम अभी लिख देते हैं।''

आवेदन–पत्र लिखा जा रहा था कि नारायण लौट आया और अपने शिविर की उजड़ी हालत देख वह साँझे आवेदन–पत्र पर हस्ताक्षर करने के लिए तैयार हो गया।

: 11 :

राजधानी तक तो महाप्रभु नरोत्तम और भूरिश्रवा दोनों एक समान रथ पर आरूढ़ पहुँचे थे। उनको घेरे हुए दस सहस्र त्रिशूलधारी शैव और बीस–पच्चीस श्रावक भी आए थे। राजधानी की प्राचीर के बाहर सब ठहर गए और केवल भूरिश्रवा बौद्ध महाप्रभुओं के साथ ही प्राचीर के भीतर गए। उनके विस्मय का ठिकाना नहीं रहा जब नगरद्वार में घुसते ही उनको महामन्त्री विष्णुकान्त, न्यायाधीश विश्वनाथ और सेनाध्यक्ष वीरभद्र मिले। उन्होंने तीनों साम्प्रदायिक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
नेताओं का यथायोग्य स्वागत किया और इनको राजकीय रथों पर सवार कर राजप्रासाद को ले गए। वहाँ महाराज के सभा–भवन में इन गुरुओं का स्वागत किया गया और वहाँ इनको उच्चासन पर बिठाया गया। नगर के प्रमुख लोग वहाँ पहले ही उपस्थित थे। सभाभवन भरा हुआ था। जब महाप्रभु बैठ गए तो महाराज जलौक वहाँ पधारे। उनके आने पर सब लोग आदर के भाव में उठ खड़े हुए। विवश तीनों साम्प्रदायिक नेता भी उठ खड़े हुए।

महाराज ने सभा को सम्बोधित करते हुए कहा, "सभ्यगण! यह प्रजा की परिषद् मेरे राज्याधिकारियों ने बिना भेद–भाव के सब सम्प्रदाय के लोगों के विद्वानों को आमन्त्रित कर आयोजित की है।

"पूर्व इसके कि विचारणीय प्रश्न उपस्थित किया जाए, मैं प्रस्ताव करता हूँ आचार्य शंखपाणिजी इस परिषद् के अध्यक्ष नियुक्त हों।"

भूरिश्रवा ने इस बात का समर्थन कर दिया। नारायण ने महाप्रभु नरोत्तम के विषय में कहा, परन्तु विष्णुकान्त ने कह दिया, "महाप्रभु नरोत्तम कश्मीर नागरिक नहीं। इस कारण वे कश्मीर प्रजा परिषद् के अध्यक्ष नहीं बन सकते।"

आचार्य शंखपाणि अध्यक्ष के पद पर बिठा दिए गए। आचार्यजी ने भूरिश्रवा से पूछा, "आप क्या कहना चाहते हैं?"

"भगवन्! हमारा, मेरा अभिप्राय है कि शैव सम्प्रदायवालो का और बौद्ध सम्प्रदाय वालों का एक समझौता हो गया है। हमने एक साँझा आवेदन–पत्र तैयार किया है, और वह यह है–

"हम कश्मीर राज्य के दोनों प्रमुख सम्प्रदाय यह चाहते हैं कि राज्य असाम्प्रदायिक रहे। यह धर्म का स्वयं पालन करे और प्रजा से पालन कराए और न्याय करते समय मत–मतान्तर में भेद न करे।

"भगवन्! बस यही हमारा निवेदन है।"

"और महाप्रभु! आप क्या कहते हैं?" आचार्यजी ने महाप्रभु नरोत्तम से पूछ लिया।

"मैं पण्डित भूरिश्रवा के कथन का समर्थन करता हूँ। इसके साथ एक निवेदन यह करना चाहता हूँ कि भैरवी–चक्रों की प्रथा बन्द कर दी जाए। प्रजा की यह परिषद् इसे वर्जित कर दे।"

आचार्य शखपाणि ने कहा, "मैंने प्रजा का मत इस विषय में जानने का यत्न किया है। प्रजा ऐसे कार्य को जो भैरवी–चक्रों में होता है, सार्वजनिक स्थानों पर बन्द करने के पक्ष में है। एक सज्जन ने यह सम्मति दी है कि इस प्रकार की उपासना चलाएँ तो उसे निजी रूप में करने दिया जाए।

"मुझे इस सम्मति में तथ्य प्रतीत हुआ है। व्यक्तिगत व्यवहार में प्रत्येक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

नागरिक स्वतन्त्र है। यदि परिवार अथवा परिवार के बाहर के लोग ऐसी उपासना में सम्मिलित होने के लिए स्वेच्छा से आएँ तो बाधा नहीं हो सकती।

"कोई अपने घर में वेश्यागार चलाना चाहता है तो राजनियम तब ही प्रतिबन्ध लगा सकता है जब किसी पर बलात्कार किया जाएगा।"

इसके बाद शंखपाणि ने कह दिया, "मेरा भी एक सुझाव है। वह यह कि राज्याधिकारियों का व्यवहार ऐसा होना चाहिए जिससे यह सन्देह न हो कि वह राज्याधिकारी किसी सम्प्रदाय का प्रचार कर रहा है।"

इस प्रकार सब निर्णय सर्वसम्मति से स्वीकार हो गए। उपस्थित प्रमुख लोगों ने इन निर्णयों का समर्थन कर दिया।

अंत में महाराज जलौक ने उठकर यह घोषणा कर दी, "इस परिषद् का निर्णय राजनियम बन जाएगा। मैं राज्याधिकारियों को ऐसी आज्ञा देता हूँ।

"इस आज्ञा के उपरान्त मैं एक अपना निजी निवेदन कर रहा हूँ। वह यह कि मैं राजा के पद से त्यागपत्र दे रहा हूँ। मैं और मेरी पत्नी महारानी कादम्बिनी आज से गृहस्थ जीवन छोड़ वानप्रस्थ आश्रम में प्रवेश कर रहे हैं। मैं इस परिषद् से निवेदन करूँगा कि मेरे उपरान्त मेरे सुपुत्र दामोदर को राजगद्दी पर आसीन किया जाए और उसे अपने मन्त्रियों की सहायता से राज–कार्य चलाने को कहा जाए।"

महाराज जलौक की इस घोषणा पर तो पूर्ण सभाभवन में विस्मय और चिन्ता छा गई। शंखपाणि ने एक क्षण तक मौन रहकर यह प्रस्ताव कर दिया, "मेरा प्रस्ताव है कि यह प्रजा परिषद् यह निश्चय करती है कि महाराज जलौक के स्थान पर राजकुमार दामोदर राजगद्दी पर बिठाए जाएँ। यद्यपि महाराज की वयस अभी वानप्रस्थ लेने की नहीं, परन्तु यह उनका निजी व्यवहार है। हम उनको इससे मना नहीं कर सकते।"

सभा महाराज दामोदर की जयघोष के उपरान्त विसर्जित हुई। सभा के उपरान्त विष्णुकान्त ने महाराज से पूछ लिया, "यह आपने क्या कर दिया है?"

"कादम्बिनी की ऐसी ही इच्छा थी। मैंने इसकी इच्छा का आदर किया है।"

: 12 :

राधा ने पुस्तक समाप्त की और उसे बन्द कर सामने देखा तो उसका पति मदनमोहन उसकी ओर देख मुस्करा रहा था।

राधा ने पूछा, "आप कब से खड़े हैं? मुझे तो पता ही नहीं चला कि आप कब आए हैं।"

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

"दस मिनट से अधिक हो गए हैं। मैं देख रहा था कि अब पुस्तक समाप्त होने ही वाली है और तब तो तुम मुख ऊपर उठाओगी ही।"

"बहुत मजेदार पुस्तक है। परन्तु एक बात समझ में नहीं आई।"

"क्या?" मदनमोहन ने अब सोफे पर बैठते हुए पूछा।

"लेखक ने परिवार में नाइट क्लब चलाने की स्वीकृति दे दी है।"

"परन्तु क्या परिवार के सदस्यों को बलपूर्वक उसमें सम्मिलित करने की स्वीकृति दी है?"

"नहीं! ऐसा तो नहीं। परन्तु अल्पायु और अल्प ज्ञान के सदस्यों के लिए नाइट क्लब वर्जित होनी चाहिए।"

"इसे वर्जन करने में भी घर का पुरखा ही उचित अधिकारी है। राज्याधिकारी तो ठीक नहीं होगा।"

राधा मौन हो गई और मदनमोहन ने बेयरे को चाय लाने के लिए घण्टी बजा दी।

बेयरा चाय लाया तो मदनमोहन ने चाय बनाते हुए पत्नी को गम्भीर भाव में बैठे देख पूछ लिया, "राधा! तुम तो अभी भी देशीय और विदेशीय नाइट क्लब के चक्कर में उलझ रही प्रतीत होती हो?"

"मैं समझती हूँ," राधा ने सतर्क हो पति के मुख पर देखते हुए कहा, "भारत में जब ये भैरवी–चक्र सम्पन्न होते थे तब भी जनता के भले लोग इनको पसन्द नहीं करते थे। इस पर भी वे राज्य को इसमें हस्तक्षेप करने की स्वीकृति नहीं देते थे और आज भी फ्रांस जैसे देशों में राज्य इन क्लबों में हो रहे व्यवहार को जानते हुए भी इनको वर्जित नहीं करते। यह समता देखकर ही मैं विस्मय कर रही थी। मैं विचार कर रही थी कि क्या उस समय के लोग आज जितने ही बुद्धिमान थे अथवा आज के लोग उन जितने ही मूर्ख हैं जितने भारत में आज से ढाई–तीन सहस्र वर्ष पहले थे।"

मदनमोहन हँस पड़ा। हँसते हुए बोला, "वे मूर्ख थे अथवा हम मूर्ख हैं, इस पर मस्तिष्क खराब करना छोड़कर भी यह तो निर्विवाद ही है कि मनुष्य सदा मनुष्य ही रहे हैं। इनमें बुद्धिमान और मूर्ख सदा रहे हैं। कभी मूर्खों की संख्या बढ़ जाती है तो कभी बुद्धिमानों की, परन्तु दोनों प्रकार के लोग सदा रहते हैं।"

"परमात्मा यदि है तो वह मूर्खता को निःशेष क्यों नहीं कर देता?"

"इसलिए कि परमात्मा मनुष्य के निजी कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करता। यह आजकल के सभ्य राज्यों की बात ही है। सभ्य राज्य व्यक्ति के निजी कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करते। मनुष्य के कुछ मूलभूत अधिकार हैं। इसी प्रकार जीवात्मा के कुछ मूलभूत अधिकार हैं। उनको करने में भले ही वह स्वतन्त्र

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, परन्तु उनका फल भोगने में वह परतन्त्र ही है।

"राधा! यही आजकल हो रहा है। मनुष्य का अधिकार है कि मद्य–सेवन करे। परन्तु मद्य–सेवन से जो फल होता है, वह तो पीने वाले को भोगना ही होता है।

"मैं जब होटल में आ रहा था तो हमारे पड़ोस के कमरे वाले को 'स्ट्रेचर' पर डालकर होटल से बाहर खड़ी 'ऐम्बुलेंस कार' में ले जा रहे थे। मैंने बेयरे से पूछा था कि उसे क्या हुआ है।

"उसने बताया है कि रात यह कुछ अधिक पी गया था और इसके साथी इसे अर्ध–चेतनावस्था में छोड़ गए थे। आज दिन–भर जब यह अपने कमरे से नहीं निकला तो पुलिस को सूचना दी गई। वह आई तो डाक्टर भी साथ आया था। डाक्टर का कहना था कि अधिक पी जाने से इसका 'ब्लड प्रेशर' बढ़ गया प्रतीत होता है और इसके मस्तिष्क में कोई खून की नस फट गई है। नस फट जाने के कारण यह अचेत पड़ा है।

"मद्य का सेवन करना यहाँ नागरिकों का मूलाधिकार है। किन्तु उस अधिकार के दुरुपयोग का फल तो व्यक्ति को भोगना ही पड़ता है। इसी प्रकार जीवात्मा कर्म करने में स्वतन्त्र है, परन्तु कर्म का फल तो मिलता ही है।

"यह ईश्वरीय नियम है। कुछ राज्य नागरिकों के निजी जीवन को भी नियम में बाँधने का यत्न कर रहे हैं। परन्तु वे राज्य नहीं कहलाते। राज्य तो परमात्मा का स्वरूप होता है। ये तो जेल के दारोगा ही कहे जा सकते हैं।"

राधा की हँसी निकल गई। वह बोली, "और ये जेल के दारोगा किसने नियुक्त किए हैं?"

"जब किसी स्थान पर अपराधियों की संख्या अत्यधिक हो जाती है तो बड़े–बड़े जेलखाने बनाने पड़ते हैं। पूर्ण देश भी जेलखाना बन सकता है। इसके दारोगा भी परमात्मा ही नियत करता है।

"परन्तु नियत करने वाला कोई भी क्यों न हो, जेल का दारोगा अथवा फाँसी चढ़ाने वाले जल्लाद सभ्य समाज में आदर की दृष्टि से नहीं देखे जाते।"

■■

 CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इतिहास पर प्रमुख खोजपूर्ण रचनाएं

भारतवर्ष का संक्षिप्त इतिहास	गुरुदत्त
इतिहास में भारतीय परम्पराएं	गुरुदत्त
हमारी विरासत - दिव्य भारत का गौरवशाली इतिहास	तेजपाल सिंह धामा
हास्यास्पद अंग्रेज़ी भाषा	पुरुषोत्तम नागेश ओक
क्रिश्चियनिटी कृष्ण नीति है	पुरुषोत्तम नागेश ओक
कौन कहता है अकबर महान था	पुरुषोत्तम नागेश ओक
भारतीय इतिहास की भयंकर भूलें	पुरुषोत्तम नागेश ओक
विश्व इतिहास के विलुप्त अध्याय	पुरुषोत्तम नागेश ओक
ताजमहल मन्दिर भवन है	पुरुषोत्तम नागेश ओक
ताजमहल तेजोमहालय शिव मन्दिर है	पुरुषोत्तम नागेश ओक
आगरा का लाल किला हिन्दू भवन है	पुरुषोत्तम नागेश ओक
दिल्ली का लाल किला लाल कोट है	पुरुषोत्तम नागेश ओक
फतहपुर सीकरी हिन्दु नगर है	पुरुषोत्तम नागेश ओक
लखनऊ के इमामबाड़े हिन्दू भवन हैं	पुरुषोत्तम नागेश ओक
भारत में मुस्लिम सुल्तान भाग 2 भाग मे	पुरुषोत्तम नागेश ओक
वैदिक विश्व राष्ट्र का इतिहास· 4 भाग मे	पुरुषोत्तम नागेश ओक
क्या भारत का इतिहास भारत के शत्रुओं द्वारा लिखा गया है	पुरुषोत्तम नागेश ओक
भारत का द्वितीय संग्राम "आज़ाद हिन्द फौज की कहानी "	पुरुषोत्तम नागेश ओक
आरोग्य सौन्दर्य तथा दीर्घायु व्यायाम व सूर्य नमस्कार	पुरुषोत्तम नागेश ओक
ज्योतिप स्वयं शिक्षक - फल ज्योतिप	पुरुषोत्तम नागेश ओक
इतिहास की मृत्यु	नरेन्द्र पिपलानी

English Books Of Outstanding Nature

Lucknow's Imambaras are Hindu Building	P.N.Oak
Christianity is Chrisn-Nity	P.N.Oak
The Taj Mahal Is A Temple Palace	P.N.Oak
World Vedic Heritage 2 vols.	P.N.Oak
Some Missing Chapters Of World History	P.N.Oak
Some Blunders of Indian Historical Research	P.N.Oak
Who Says Akbar Was Great ?	P.N.Oak
Agra Red Fort is a Hindu Building	P.N.Oak
Hindutva	V.D.Savarkar
Hindu Pad Padshahi The Maratha Movement	V.D.Savarkar
India In The Shadow Of Gandhi & Nehru	GuruDatt
Cultural State in Bharatvarsha	GuruDatt

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गुरुदत्त की ऐतिहासिक रचनाएं

परित्राणाय साधूनाम	महाभारत पर आधारित सम्पूर्ण उपन्यास
वैशाली विलय	वहती रेता
अस्ताचल की ओर	3 भाग
खण्डहर बोल रहे हैं	3 भाग
अमृत मन्थन	राम कथा-1
परम्परा	राम कथा-2
अग्नि परीक्षा	राम कथा-3
जमाना बदल गया	4 भाग
दो लहरों की टक्कर	2 भाग
विक्रमादित्य साहसांक	
युद्ध और शान्ति	
कुमकुम	
पत्रलता	
दिग्विजय	
वाम मार्ग	
लुढ़कते पत्थर	
गंगा की धारा	
सागर तरंग	
मेघवाहन	
भैरवी चक्र	
महाकाल	
अवतरण	

श्री गुरुदत्त की राजनीतिक रचनाएं

वर्तमान दुर्व्यवस्था का समाधान ..... हिन्दू राष्ट्र	
राष्ट्र राज्य और संविधान	
हिन्दुत्व की यात्रा	
धर्म संस्कृति और राज्य	
मनुष्य और समाज	
भारत में राष्ट्र	
भगनाश	
प्रजातंत्र अथवा वर्णाश्रम व्यवस्था	
भारत गांधी नेहरु की छाया में	
धर्म तथा समाजवाद	
वुद्धि वनाम वहुमत	
स्व अस्तित्व की रक्षा	2 भाग
मैं हिन्दू हूँ	राजनैतिक संस्मरण
भाव और भावना	संस्मरण
भाग्यचक्र	संस्मरण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गुरुदत्त की सर्वाधिक चर्चित रचनाएं

स्वाधीनता के पथ पर	स्वाधीनता आन्दोलन 1930 से 35 का काल
पथिक	स्वाधीनता आन्दोलन 1935 से 40 का काल
स्वराज्यदान	स्वाधीनता आन्दोलन 1940 से 46 का काल
विश्वासघात	स्वाधीनता आन्दोलन 1946 से 47 का काल
देश की हत्या	स्वाधीनता आन्दोलन 1947 से 48 का काल
दासता के नए रूप	1948 से 49 का काल
सदावत्सले मातृभूमे	1949-.... का काल

श्री गुरुदत्त की कुछ सामाजिक रचनाएं

अमानत
अनदेखे बन्धन
आवरण
अन्तरिक्ष में
आकाश पाताल
इबलीस
कला
घर की बात
आशा निराशा
अपने पराए
एक मुँह दो हाथ
कामना
गुंठन
चंचरीक
ज़िन्दगी
जीवन ज्वार
धरती और धन
न्यायाधिकरण
नए विचार नई बातें
नगर परिमोहन
नास्तिक
पंकज
परिमल
परिवर्तन
पड़ोसी
प्रवंचना
प्रतिशोध
प्रारब्ध और पुरुषार्थ
प्रेयसी
बन्धन शादी का
भगवान भरोसे
भाग्य का सम्बल
भग्नाश
भूल
भूत और भविष्य
ममता
मायाजाल
मैं न मानूँ
मृग तृष्णा
यह संसार
यात्रा का अंत
लालसा
लोक परलोक
विकार
विलोम गति
विकृत छाया
स्वार्थ
सब एक रंग
सभ्यता की ओर
स्नेह का मूल्य
संस्कार
सफलता के चरण
सर्वमंगला
साहित्यकार
सुमति

Central Library
Gurukula Kangri (Deemed to be University), Haridwar
167958
081
167958

www.hindisahityasadan.com
E-mail: indiabooks@rediffmail.com Tel : 23553624, 23551344, 09213527666

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL KANGRI LIBRARY

	Signature	Date
Access No.		
Class No.		
Cat No.		
Tag etc.		
E.A.R.		
Recomm. by.		
Data Ent. by		
Checked		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पुस्तकालय
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
वर्ग संख्या R 089·9143 GUR-S आगत संख्या 167958

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा 50 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क लगेगा।

प्रवंचना
प्रतिशोध
साहित्यकार
सुमति

www.hindisahityasadan.com

E-mail: indiabooks@rediffmail.com Tel : 23553624, 23551344, 09213527666

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL KANGRI LIBRARY

	Signature	Date
Access No.		
Class No.		
Cat No.		
Tag etc.		
E.A.R.		
Recomm. by.		
Data Ent. by		
Checked		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरुदत्त

शिक्षाः एम. एस. सी.

8-12-1894 से 8-4-1989

लेखक की कुछ अन्य रचनाएं

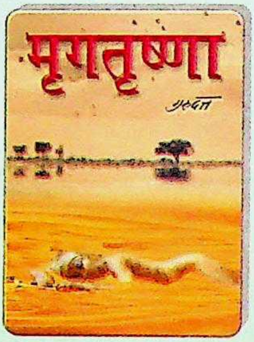

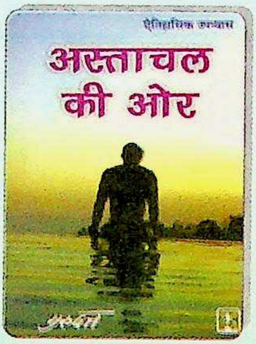

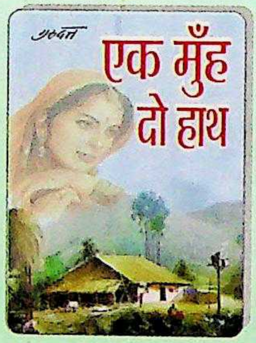

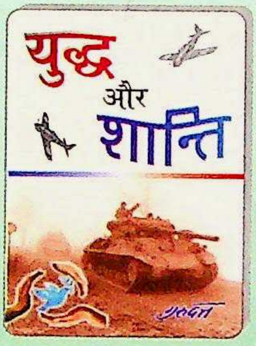

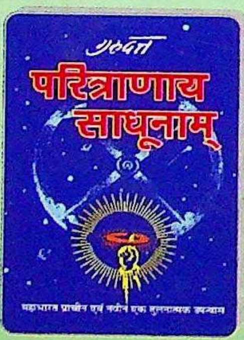

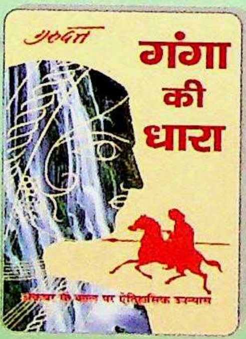

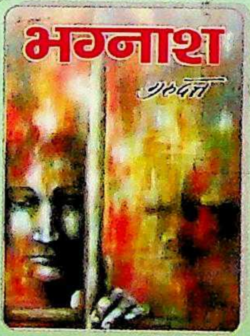

हिन्दी साहित्य सदन
www.hindisahityasadan.com

2 बी.डी. चैम्बर्स, 10/54 देश बंधु गुप्ता रोड,
करोल बाग, नई दिल्ली-110 005, फोन : 23553624, 23551344
ई-मेल : indiabooks@rediffmail.com, hindisahityasadan@gmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar